श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब विशेषांक

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

वैसाख-ज्येष्ठ, संवत् नानकशाही ५४३
मई 2011 वर्ष ४ अंक ९

संपादक
सिमरजीत सिंह
एम. ए., एम. एस. सी.

सहायक संपादक
सुरिंदर सिंह निमाणा
एम. ए. (हिंदी, पंजाबी, अंग्रेज़ी), बी. एड.

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन: 0183-2553956-60, फैक्स: 0183-2553919

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

छठमु पीरु बैठा गुरु भारी

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीड़ी सोढीआ रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।
पुछनि सिख अरदासि करि छिअ महलां तकि दरसु निहारी।
अगम अगोचर सतिगुरू बोले मुख ते सुणहु संसारी।
कलिजुगु पीड़ी सोढीआं निहचल नींव उसारि खलारी।
जुगि जुगि सतिगुरु धरे अवतारी ॥४८॥

गुरबाणी के प्रथम प्रमाणिक व्याख्याकार, गुरु-घर के निकटवर्ती एवं सिक्खी सिद्धांतों के महान प्रचारक भाई गुरदास जी अपनी प्रथम वार में शामिल इस पउड़ी द्वारा सिक्ख गुरु-परंपरा का जिक्र करते हुए छेवें पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के वीरता से परिपूर्ण स्वरूप तथा व्यक्तित्व का गुण-गायन करते हैं।

भाई साहिब कथन करते हैं कि जब पांच पीर अथवा पांच सिक्ख गुरु साहिबान सचखंड पिआना कर गए तो छठे पीर जो विराट व्यक्तित्व के हैं, अब गुरगद्दी पर विराजमान हैं। 'गुरु-ज्योति की एकरूपता' का संकेत देते हुए कथन करते हैं कि श्री गुरु अरजन देव जी ने शरीर ही बदला है और अब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का स्वरूप दृश्टव्य है। यह अकाल पुरख की महान इच्छा तथा हुक्मानुसार हो रहा है। सोढी वंश में से आकर सिक्ख गुरु साहिबान क्रमश: अपना पावन स्वरूप उजागर कर रहे हैं। दुष्टों के दलों को समाप्त करने वाले गुरु शूरवीर तथा महान योद्धा हैं, साथ ही आप जी महान परोपकारी भी हैं।

भाई गुरदास जी आगे कथन करते हैं कि सिक्खों ने अरदास करके पूछा कि "हमने छ: गुरु साहिबान तक के दर्शन कर लिये हैं। हमारी जिज्ञासा है कि क्या आगे भी और गुरु-स्वरूप हम देखे, हमें उनकी गिनती बताने की कृपालता कीजिए।" मन-बाणी की पहुंच से परे सतिगुरु जी मुख से बोले कि "हे संसारी लोगो, सुनो, कलियुग में सोढियों की पीढ़ी अचल है अथवा आने वाले समय में और गुरु-व्यक्तित्व भी होंगे।" भाई साहिब अंत में निर्णय देते हैं कि अकाल पुरख के हुक्म तथा महान इच्छा के अनुसार ही प्रत्येक युग में सच्चे गुरु जीवों के आत्मिक कल्याण हेतु अवतार धारण करते हैं।

आओ! छठे पातशाह के अद्वितीय जीवन, जीवन-उद्देश्यों और तेजस्वी व्यक्तित्व को उचित प्रसंग में जानने का प्रयास करें!

सिक्ख धर्म का उद्भव तथा विकास-विगास अकाल पुरख की महान इच्छा के अनुरूप भारतवर्ष में पंजाब की सरजमीं पर गुरु नानक साहिब के आगमन से हुआ। इसको अपने आप में एक बहुत बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन माना जाना चाहिए, चूंकि विश्व-धर्मों के इतिहास में सिक्ख धर्म का उद्भव अपना उदाहरण स्वयं ही है। गुरु जी एक अद्वितीय प्रतिभा थे जिन्होंने विश्व-कल्याण के उद्देश्य की पूर्ति हेतु अपनी कुल क्षमता एवं जिंदगी लगा दी और ज्योति-जोत समाने से पहले अपनी ज्योति अपने परम सिक्ख भाई लहिणा जी में संचारित करके दस गुरु साहिबान पर आधारित गुरु-परंपरा का शुभारंभ किया। इस प्रसंग में छठे गुरु के रूप में अकाल पुरख द्वारा निश्चित समय में पंचम गुरु श्री गुरु अरजन देव जी के बाद गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख पंथ की अगुआई का दायित्व उनके होनहार सपुत्र श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के ऊपर आया। छठे पातशाह ने गुरु नानक पातशाह के उद्देश्यों के अनुरूप आध्यात्मिक अगुआई करने के साथ-साथ युग-विशेष की परिस्थितियों में गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख पंथ को जालिम अन्यायकारी राजनैतिक प्रबंध में सत्यवादी न्याय-व्यवस्था स्थापित करते हुए शीश उठाकर चलने और आत्म-सम्मान भरा जीवन जीने के सक्षम बनाया। ऐसा करना अति अनिवार्य हो गया था चूंकि मजहबी कट्टरपन दर्शाते हुए समय के बादशाह जहांगीर ने शांति के पुंज श्री गुरु अरजन देव जी को शहीद कर दिया था। पंचम पातशाह अपने सिद्धांतों पर अडिग तथा परिपक्व रहे। वस्तुत: उन्होंने महसूस कर लिया था कि अब अन्यायकारी व्यवस्था में गुरु नानक नाम-लेवा सिक्खों को आत्म-रक्षा हेतु शस्त्रबद्ध होना पड़ेगा। गुरु इतिहास में उल्लेख आता है कि गुरु जी ने अपने सपुत्र श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को शस्त्रबद्ध होकर गुरगद्दी पर विराजमान होने का निर्देश भेजा था। यही नहीं, पंचम गुरु जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को उनकी प्रारंभिक बाल्य अवस्था में ही शस्त्रों का प्रशिक्षण प्रदान कराया था और इस उद्देश्य की पूर्ति की जिम्मेदारी बाबा बुड्ढा जी के सपुर्द की थी। इसी परिप्रेक्ष्य में श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब ने गुरगद्दी पर विराजमान होते समय मीरी-पीरी की प्रतीक दो कृपाणें पहनी। इससे यह स्पष्ट था कि गुरु जी जहां अपने सिक्खों को आत्मिक अगुआई प्रदान करेंगे वहां उनको सांसारिक चुनौतियों का सामना करने के लिए बल भी बख्शिश करेंगे। गुरु पातशाह ने श्री हरिमंदर साहिब के सामने 'अकाल बुंगे' का निर्माण कराया जो 'श्री अकाल तख्त साहिब' के नाम से विख्यात हुआ। गुरु जी ने बादशाहों जैसी वेशभूषा अपनाई, सुंदर दसतार पर कलगी सजाई। नत्था और अब्दुल्ला मल्ल ढाडियों

ने गुरु पातशाह के इस मनोहर विस्मादी स्वरूप तथा व्यक्तित्व को *'पग तेरी, की जहांगीर दी'* जैसे निर्भीकता भरे स्वर में गायन किया।

यह परिवर्तन जहां युग विशेष की विशेष चुनौती भरी परिस्थितियों के अनुकूल था वहां यह गुरु नानक पातशाह के गुरमति सिद्धांतों के भी पूर्णत: अनुरूप था। पहले पातशाह ने अपनी पावन बाणी तथा व्यवहारिक रूप में जुल्म व अन्याय करने वाले समय के बादशाहों, शासकों, राजाओं एवं उच्चाधिकारियों को सख्त शब्दों में जुल्म तथा अन्याय करने से रोकने का साहस किया। बाकी गुरु साहिब ने भी अपने-अपने गुरगद्दी काल में किसी बादशाह, शासक, प्रशासक या उच्चाधिकारी का प्रभाव नहीं माना बल्कि जब कभी भी कोई अवसर बना उनको आदर्श शासक-प्रशासक या अधिकारी सिद्ध होने के लिए सही मार्ग दिखाया। सिक्ख गुरु साहिबान ने स्पष्ट किया कि एक राजा या बादशाह को जनसाधारण का रक्षक-संरक्षक होना चाहिए। सच्चाई यह थी कि ज्यादा हद तक बिगड़ चुके समय के राजनैतिक प्रबंध को सुधारने के लिए हक-सच के लिए सदैव आवाज उठाने वाली सिक्ख लहर को आत्म-रक्षा के लिए अनचाहे आक्रमणों, अन्याय तथा जुल्म-जब्र का मुंह मोड़ने के लिए 'मीरी-पीरी' का सिद्धांत अपनाना पड़ा तथा इसे सदैव सम्मुख रखना तत्कालीन समय की एक जरूरत भी बन गई।

छठे पातशाह द्वारा सिक्खों की एक आत्म-रक्षक सेना संगठित की गई। गुरु जी ने थोड़े ही समय में इस अल्पसंख्यक सिक्ख सेना को ऐसा मनोबल तथा ऐसी कुशलता बख्श दी कि जितने भी हमले मुगल हाकिमों ने किये उनमें गुरु पातशाह के शूरवीर सिक्खों की फतह हुई तथा आक्रमणकारियों को बुरी तरह पराजित होना पड़ा। यह भी स्मरण रहे कि आत्म-रक्षक सिक्ख सेना में पैंदे खां जैसे कुछ मुसलमान पठान भी शामिल हुए जो यह संकेत देता है कि सिक्ख लहर मजहबी या सांप्रदायिक सीमाओं में बंधी न थी। फिर पैंदे खां को जब अपने बाहुबल का अभिमान हो गया और वह शत्रु से जा मिला एवं आक्रमणकारी बनकर आया तो भी उसको गुरु जी ने अपने हाथों से मुक्ति बख्शी। अंतिम समय उसको कहा कि "पैंदे खां! कलमा पढ़, अब तेरे गिनती के श्वास बाकी हैं।" गुरु साहिब की समदृष्टि देखें कि पैंदे खां को अपनी ढाल से छाया तक बख्शी।

छठे पातशाह का समस्त जीवन ऐसे ही परोपकारों से भरा हुआ है। आपका व्यक्तित्व अति तेजस्वी रहा। आपके व्यक्तित्व से समय के बादशाह भी प्रभावित होते रहे। जब जहांगीर ने गुरु जी को धोखे से ग्वालियर के किले में नजरबंद कर दिया तो गुरु पातशाह के तेज प्रताप से किले में कैद राजाओं की निराशा भरी जिंदगी में बहार आ गई चूंकि वहां प्रभु-नाम का जाप, कीर्तन तथा विचार होने लग गई। फिर किले से बिना शर्त और पूर्ण सम्मान के साथ न सिर्फ आपकी रिहाई हुई बल्कि सभी के सभी चिरकाल से कैद का संताप भोग रहे ५२ राजाओं को भी आपने बंधन-मुक्त कराया और 'बंदी छोड़ दाता' कहलाये।

दूसरी ओर जब बादशाह जहांगीर ने अपनी भूल को माना तो गुरु पातशाह ने उसके प्रति

व्यवहार मैत्रीपूर्ण करने में तनिक भी देरी न की, यहां तक कि उसको शेर के अचानक हमले से भी बचाया। गुरु जी स्वयं एक महान योद्धा थे। आप जी तलवार के धनी थे। आप युद्ध में गुस्से में नहीं बल्कि उत्साह तथा वीर रस में हुआ करते थे। गुरु जी एक महान सेनापति थे जिनके नेतृत्व में उनके सिक्खों ने अति विकट परिस्थितियों वाली लड़ाइयां भी जीतीं।

गुरु जी के जीवन-काल में उनके साथ साईं मियां मीर जी जैसे उनसे बेहद प्यार करने वाले मुसलमान सूफी फकीर भी थे तथा बेहद कट्टरतावादी काजी भी। एक काजी की बेटी, जो साईं मियां मीर जी की शिष्या थी, सिक्खी लहर के प्रभाव अधीन आकर गुरु जी की भी शिष्या बनी। सतिगुरु जी ने उस मुसलमान लड़की को उसके पिता के क्रोध तथा धर्मांधता से बचाया। काजी अपनी बेटी पर इतना खफा था कि वह उसको मृत्यु-दंड देने पर उतारू हो चुका था। वस्तुत: साईं मियां मीर जी के कहने पर सतिगुरु ने बीबी कौलां को गुरु-घर में आश्रय दिया। सिक्ख इतिहास के कुछ ग्रंथों में इस प्रसंग को उचित रूप में कई कारणों के कारण नहीं प्रस्तुत किया जा सका जिससे कई प्रकार की भ्रांतियां भी प्रचलित हैं। वर्तमान सिक्ख इतिहासकारों को इस प्रसंग में बड़ी सावधानी से काम लेना चाहिए।

गुरु जी ने अपने गुरगद्दी काल में गुरबाणी के प्रकाश में सिक्खी का बहुत प्रचार-प्रसार किया। आपकी कशमीर यात्रा और मालवा क्षेत्र में प्रचार दौरे इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। सतिगुरु जी ने अपने सिक्खों के साथ गहरा स्नेह-भाव व्यक्त किया और उनको आध्यात्मिक तथा सांसारिक सब प्रकार की दातें अपने निर्मल वचनों-प्रवचनों एवं परोपकारी कार्यों द्वारा बख्शिश करते रहे। गुरु साहिब ने अपने व्यक्तिगत परिवार की जिम्मेदारियां भी बाखूबी से निभाईं और विभिन्न रिश्तों को भी बेमिसाल रूप में निभा कर दिखाया। ऐसे गुरु पातशाह का लासानी जीवन मुख्यत: ऐतिहासिक सिक्ख स्रोतों के आधार पर 'गुरमति ज्ञान' के पाठकों की जानकारी तथा लाभ हेतु उच्च कोटि के लेखक-लेखिकाओं से लिखवाकर प्रस्तुत किया जा रहा है। हमारा अपने पाठकों से सनम्र निवेदन है कि वे विभिन्न स्रोतों से मुहैया जानकारी को उपर्युक्त सिक्ख सिद्धांतों तथा परम पावन गुरबाणी की कसौटी पर अवश्य परखने का प्रयास करें। गुरु सिद्धांत, सिक्ख सिद्धांत और सर्वोपरि परम पावन गुरबाणी की कसौटी के सम्मुख कोई भ्रांति स्थाथी रूप में नहीं ठहर सकती। हमने निर्मल गुरु व्यक्तित्व पर पूर्ण विश्वास बनाये रखना है। इसी में हमारा और सरबत्त का भला विद्यमान है। सिक्ख गुरु साहिबान की महिमा अपरंपार है। संसार में सिक्ख गुरु साहिबान जैसे मानवतावादी महामानवों जैसा अन्य उदाहरण मिलना अति दुर्लभ है। आओ! छठे पातशाह के अद्वितीय जीवन, जीवन-उद्देश्य और तेजस्वी व्यक्तित्व को उचित प्रसंग में जानने का प्रयास करें। मात्र सिक्खों को ही नहीं सभी भारतवासियों को भी गुरु साहिबान के देश-कौम को दिये अपूर्व योगदान और मानवता के सांझे भले हेतु उनकी अपूर्व देन को सदैव स्मरण रखना हमारे अच्छे भविष्य का जामिन हो सकता है।

भाई गुरदास जी की दृष्टि में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-प्रो बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा**

भाई गुरदास जी को गुरबाणी के शिरोमणि व्याख्याकार होने का सम्मान दिया जाता है। भाई साहिब ने चालीस वारों की रचना की। इन वारों में पहले छः गुरु साहिबान के संबंध में जानकारी दी गई है, परंतु यहां हम केवल श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के संबंध में जो भाई साहिब ने समझा एवं लिखा है, उस तक ही अपनी विचार-चर्चा को सीमित रखेंगे।

भाई गुरदास जी की वारों में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बारे में चाहे विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं, परंतु फिर भी पहली, तीसरी, तेरहवीं, बीसवीं, चौबीसवीं, पच्चीसवीं, छब्बीसवीं, पैंतीसवीं और उन्तालीसवीं वारों की कुछ पउड़ियों में उल्लेख है। ग्यारहवीं वार में गुरु साहिब के प्रमुख सिक्खों की जानकारी है, जिसमें श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के सिक्खों सम्बंधी वर्णन आया है।

श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब गुरगद्दी पर विराजमान हुए तो भाई गुरदास जी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की सेवा में संलग्न हो गए। भाई साहिब पर गुरु-घर की विशेष जिम्मेदारियां आ पड़ीं। श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना के पश्चात भाई साहिब को इसके मुख्य सेवादार के तौर पर पहली सेवा सौंपी गई।

इस समय भाई गुरदास जी गुरमति प्रचार करते हुए विभिन्न स्थानों पर गये। इसके साथ-साथ भाई साहिब गुरमति साहित्य की रचना करने की सेवा भी किया करते थे। भाई गुरदास जी की वारों के अध्ययन से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के संबंध में निम्नलिखित विचार-बिंदु उभर कर दृष्टिगोचर होते हैं :

क) गुरु साहिबान की *'एका गुर जोत'* को दर्शाना।

ख) श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के समय में आये परिवर्तनों के संबंध में उत्पन्न शंकाओं को दूर करना।

ग) श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के *'वड जोधा'* तथा *'परउपकारी'* गुणों को उजागर करना।

भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में छः गुरु साहिबान की *'एका गुर जोत'* को दर्शाने का यत्न किया है। श्री गुरु नानक देव जी के समय से ही गुरगद्दी के वास्तविक उत्तराधिकारी के संबंध में गुरु-परिवारों में किंतु-परंतु उठ पड़ा था। बाबा श्रीचंद और बाबा लखमी दास ने गुरु अंगद साहिब को प्रवान न किया। इसी कारण गुरु अंगद साहिब करतारपुर से खडूर साहिब चले गए। गुरु-परिवार के दोनों पुत्र करतारपुर की पुश्तैनी जायदाद लेकर कुछ हद तक संतुष्ट हो गए। फिर गुरु-पुत्रों-- बाबा दासू और बाबा दातू ने जो रवैया श्री गुरु अमरदास जी के संबंध में धारण किया वह भी विचारने योग्य है। बाबा दासू ने अलग मंजी लगा ली थी:

मंजी दासु बहालिआ दाता सिधासण सिखि आइआ।
(वार २६:३३)

**उप सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर। मो: ९८१४८-९८२१२*

श्री गुरु रामदास जी के समय बाबा मोहन और बाबा मोहरी की ओर से कोई बड़ा संकट तो न खड़ा किया गया, परंतु अंदरूनी विरोधता एवं गुरगद्दी की अभिलाषा अवश्य रही।

श्री गुरु अरजन देव जी के समय गुरगद्दी गुरु-परिवार में ही रही। प्रिथीचंद बड़ा पुत्र होने के कारण गुरगद्दी का दावेदार बना बैठा था। यहां आकर पारिवारिक विरोध दुश्मनी का रूप धारण कर गया। प्रिथीचंद ने हरेक गलत ढंग के साथ गुरगद्दी छीनने का यत्न किया। गुरु साहिबान के पारिवारिक विरोधों के बारे में भाई साहिब उल्लेख करते हैं :

बाल जती है सिरीचंदु बाबाणा देहुरा बणाइआ।
लखमीदासहु धरमचंद पोता हुइ कै आपु गणाइआ।
मंजी दासु बहालिआ दाता सिधासण सिखि आइआ।
मोहणु कमला होइआ चउबारा मोहरी मनाइआ।
मीणा होआ पिरथीआ करि करि तोंढक बरलु चलाइआ।
महादेव अहंमेउ करि करि बेमुखु पुतां भउकाइआ।
चंदन वासु न वास बोहाइआ ॥ (वार २६:३३)

भाई गुरदास जी ने मुकाबले में खड़ी की जा रही तथाकथित 'गुरु संस्था' के झूठ की वास्तविकता खोलने और सतिगुरु के दरबार के सच को उभारने का यत्न किया है:

दुनीआवा पातिसाहु होइ देइ मरै पुतै पातिसाही।
दोही फेरै आपणी हुकमी बंदे सभ सिपाही।
कुतबा जाइ पड़ाइदा काजी मुलां करै उगाही।
टकसालै सिका पवै हुकमै विचि सुपेदी सिआही।
मालु मुलकु अपणाइदा तखत बखत चढ़ि बेपरवाही।
बाबाणै घरि चाल है गुरमुखि गाडी राहु निबाही।
इक दोही टकसाल इक कुतबा तखतु सचा दरगाही।
गुरमुखि सुख फलु दादि इलाही ॥ (वार २६:३१)

गुरु-घर की मर्यादा यही है कि गुरु गुरमुखों वाला गाडी राह (शाहमार्ग) चलाता है। यहां एक अकाल पुरख के नाम की पुकार है। यहां सतिसंगत के रूप में टकसाल है। यहां एक मात्र गुरबाणी का रूप कुतबा है। यहां एक मात्र सच्चा तख्त है, एक ही न्याय देने वाला है अर्थात् सच्चा दरबार है। इस न्याय के द्वारा हरेक गुरमुख सुख-फल प्राप्त करता है। दूसरी ओर झूठ की दुकान के उपलक्ष्य में वर्णन है:

जे को आपु गणाइ कै पातिसाहां ते आकी होवै।
हुइ कतलामु हरामखोरु काठु न खफणु चिता न टोवै।
टकसालहु बाहरि घड़ै खोटैहारा जनमु विगोवै।
लिबासी फुरमाणु लिखि होइ नुकसानी अंझू रोवै।
गिदड़ दी करि साहिबी बोलि कुबोलु न अबिचलु होवै।
मुहि कालै गदहि चढ़ै राउ पड़े वी भरिआ धोवै।
दूजै भाइ कुथाइ खलोवै ॥ (वार २६:३२)

इस प्रकार प्रिथीचंद ने अलग गद्दी लगाकर कई प्रकार की भ्रांतियां पैदा करने के यत्न किये, परंतु भाई गुरदास जी ने इन कुचालों को विफल करने के लिए गुरु साहिबान की *'एका गुर जोत'* को प्रवान करके लोगों में प्रचारा एवं प्रसारा। *'एका गुर जोत'* के उपलक्ष्य में वे बयान करते हैं:

--अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी। (वार १:४८)

--पारब्रहमु पूरण ब्रहमु गुर नानक देउ। . . . हरिगोविंदु गोविंदु गुरु कारण करणेउ ॥ (वार १३:२५)

--गुरु गोबिंदु गोविंदु गुरु जोति इक दुइ नाव धराइआ। (वार २४:२४)

'एका गुर जोत' में एकता को प्रकट करने के उपलक्ष्य में गुरबाणी में भट्ट साहिबान की बाणी में भी पुष्टि होती है। अलग-अलग

बाणीकारों ने निरंकार की ज्योति को गुरु नानक साहिब द्वारा प्रकट दर्शाकर आगे दूसरे गुरु साहिबान में प्रज्वलित होने के बारे में कोई उल्लेख नहीं किया क्योंकि भट्ट साहिबान की बाणी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के गुरगद्दी पर विराजमान होने से पहले की है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी 'बचित्र नाटक' में इसकी पुष्टि करते हैं। अत: भाई गुरदास जी द्वारा *'एका गुर जोत'* को प्रकट करने का अर्थ गुरु साहिबान के उत्तराधिकारत्व की मान्यता और गुरु-संस्था के मुकाबले में विरोधियों के मंसूबों अथवा मंदे इरादों का पता चलता है।

भाई गुरदास जी की वारों में एक अन्य महत्वपूर्ण विचार सिक्ख-मनों के अंदर उपज रही आशंका के बारे में दिया गया है। भोले-भाले सिक्ख-मनों के अंदर गुरु जी संबंधी एक नयी उलझन निवास करती आ रही थी। संगत एक मुंह से दूसरे मुंह तथा एक कान से दूसरे कान के माध्यम से गुरु नानक साहिब की गुरगद्दी पर विराजमान श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी द्वारा कुत्ते पालने, शिकार खेलने, सेना भर्ती करने, बादशाह के साथ मेल-मिलाप किये जाने व घूमने-फिरने, फौज में पठानों की भर्ती तथा बीबी कौलां जी के संबंध में अटकलें लगाती हुई कई प्रकार के शंस्यों में लिप्त थी :

धरमसाल करि बहीदा इकत थाउं न टिकै टिकाइआ।
पातिसाह घरि आवदे गड़ि चड़िआ पातिसाह चड़ाइआ।
उमति महलु न पावदी नठा फिरै न डरै डराइआ।
मंजी बहि संतोखदा कुते रखि सिकारु खिलाइआ।
बाणी करि सुणि गांवदा कथै न सुणै न गावि सुणाइआ।
सेवक पास न रखीअनि दोखी दुसट आगू मुहि लाइआ। *(वार २६:२४)*

हम देखते हैं कि श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब गुरगद्दी पर विराजमान होते हैं तो गुरु जी ने मसंदों द्वारा लाये गए रीतिगत चिन्ह धारण करने से इंकार कर दिया। बाबा बुड्ढा जी ने अरदास करके दसतार गुरु जी को बांध दी। गुरु साहिब ने मीरी और पीरी की दो तलवारें पहनीं, दसवंध रूप में धन के अतिरिक्त घोड़े और शस्त्र लाने के लिए कहा। गुरबाणी पाठ की नित्य क्रिया के साथ-साथ शस्त्र-विद्या की सिखलाई शुरू हुई तथा ढाढी दरबार लगने आरंभ हुए। बादशाह के मुकाबले सच्चे पातशाह के लकब मिलने, फकीराना वेश की जगह शाही ठाठ तथा कलगियां सजाने आदि के बदले हालात के अनुरूप परिवर्तन जब भोले-भाले सिक्खों ने देखे-सुने तो उनमें शंस्य का उत्पन्न होना स्वाभाविक था। 'गुर बिलास पातशाही छेवीं' में इसके बारे में वर्णन है :

घनी असूआ पुर भई देस देस सुन पाइ।
थुरक सुता गुर ग्रहि धरी पित की रीत मिटाइ ॥

गुरु-दरबार में कई प्रमुख सिक्खों ने भाई गुरदास जी को लोगों के शंस्यों के संबंध में अवगत कराया। इसकी पुष्टि 'गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' से भी होती है:

इक दिन सिख जिस थल गुरदास।
बैठे ब्रिंद जाइ कर पास।
बदली सोढी सेठ गुपाला।
तखतू पीर नटल निहाला ॥२८॥
हाथ जोरि गुरदास अगारी।
सगरे सिक्खनि गिरा उचारी।
जहिं जहिं वसी गुरू की निंदा।
सुनि जरी जाइ चित चिंदा ॥३०॥

तुम अरु बडे जु बुढा साहिब।
स्री के महा मुसाहिब।
जे इतयादि अपर सिख धीर।
तिनहु न कबहूं बिनावहिं तीर ॥३१॥
जिमि मलेस बड पैंदे खान।
राखहिं सिकरि प्रेम को ठानि।
पुनि कौलां की बात अजोग।
पिख कुकरम निंदति है लोग ॥३२॥

भाई गुरदास जी ने गुरसिक्खों के शंस्य को दूर करते हुए इस परिवर्तन की प्रकृति पर आवश्यकता के बारे में स्पष्ट समाधान किया है। गुरु साहिब के बारे में भाई साहिब बताते हैं कि सच को छुपाया नहीं जा सकता। उनका यह निश्चय था कि गुरु साहिब ने अजर वस्तु को सहन् करके अपने आप को किसी के सामने प्रकट नहीं किया :

सचु न लुकै लुकाइआ चरण कवल सिख भवर लुभाइआ।
अजरु जरै न आपु जणाइआ ॥ (वार २६:२४)

आगे और अधिक स्पष्ट करते हैं कि जैसे खेतों और बागों के चार-चुफेरे ढींगर और कीकर की बाड़ होती है, जैसे चंदन को सांपों ने घेरा होता है, पारस के इर्द-गिर्द पत्थर होते हैं, मणी नाग के मस्तक में पैदा होती है, इसी प्रकार कई प्रकार की झूठी तोहमतें और अटकलें गुरु जी संबंधी लगाई जानी गैर-स्वाभाविक नहीं लगतीं। सच्चे गुरसिक्ख तो बिना किसी शंस्य के सतिगुर की सेवा में अनेकों कष्ट सहन् करके भी लगे रहते हैं तथा गुरु की खुशियां प्राप्त करते हैं :

खेती वाड़ि सु ढिंगरी किकर आस पास जिउ बागै।
सप पलेटे चंनणै बूहे जंदा कुता जागै।
कवलै कंडे जाणीअनि सिआणा इकु कोई विचि फागै।
जिउ पारसु विचि पथरां मणि मसतकि जिउ कालै नागै।
रतनु सोहै गलि पोत विचि मैगलु बधा कचै धागै।
भाव भगति भुख जाइ घरि बिदरु खवालै पिंनी सागै।
चरण कवल गुरु सिख भउर साधसंगति सहलंगु सभागै।
पिरम पिआले दुतरु झागै ॥ (वार २६:२५)

भाई साहिब उल्लेख करते हैं कि संसार के स्वांगी प्रचलन में सतिगुरु की प्रतिष्ठा कम नहीं हुई। गुरसिक्ख की प्रीति तो बिना शंस्य तथा भ्रम के होती है:

--सतिगुरु सांगि वरतदा पिंडु वसाइआ फेरि अहीरा।
चंदु अमावस राति जिउ अलखु न लखीऐ मछुली नीरा।
मुए मुरीद गोरि गुर पीरा ॥ (वार २६:२६)
--गुरसिख वंसी परम हंस सतिगुर सहजि सरोवरु जाणी।
मुरगाई नीसाणु नीसाणी ॥ (वार २६:२७)

भाई गुरदास जी लोगों की शंकाओं के निवारण हेतु बताते हैं कि यहां कोई नया परिवर्तन नहीं हुआ, जो गुरु-घर का मार्ग था, वही है :

पारसवंसी होइ कै सभना धातू मेलि मिलंदा। . . .
सतिगुर वंसी परम हंसु गुरु सिख हंस वंसु निबहंदा।
पिउ दादे दे राहि चलंदा ॥ (वार २६:२९)

यहां उसी प्रकार एक अकाल पुरख के नाम की पुकार है, वही सतिसंग रूपी टकसाल है, एक मात्र गुरबाणी रूपी रुतबा है, एक ही तख्त है, एक ही सच्चा दरबार है, कोई अलग नहीं:

बाबाणै घरि चाल है गुरमुखि गाडी राहु निबाही।
इक दोही टकसाल है इक कुतबा तखतु सचा दरगाही।
गुरमुखि सुख फलु दादि इलाही ॥ (वार २६:३१)

भाई गुरदास जी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन के एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष के बारे में प्रकाश डालते हैं। पहली वार की अड़तालीसवीं पउड़ी में उल्लेख करते हैं :

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीड़ी सोढीआ रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलि भंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।

भाई गुरदास जी के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब में 'योद्धा' और 'परोपकारी' वाले दोनों गुण हैं। मीरी-पीरी, भक्ति-शक्ति, तलवार-माला, संत-सिपाही के गुणों का आधार ही ये दोनों गुण माने जा सकते हैं। इन गुणों के कारण ही कई भोले-भाले सिक्खों को भ्रम हुआ। महाराष्ट्र के श्री समरथ रामदास ने अपनी हैरानी गुरु जी के सामने व्यक्त की तथा कहा, "मैंने सुना है कि आप धन्य गुरु नानक देव जी की गद्दी पर हो। गुरु नानक देव जी एक त्यागी साधु थे, आप शस्त्रबद्ध हो। आपने फौजें तथा घोड़े रखे हुए हैं। आप सच्चा पातशाह कहलवाते हो। आप कैसे साधु हो?" गुरु जी का उत्तर था, "बातन फकीरी जाहिर अमीरी। शस्त्र गरीब की रखिआ, जरवाणे की भखिआ के लिए।"

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का *'वड जोधा'* रूप उनके शस्त्र-विद्या एवं युद्ध-नीति में निपुन्न होने के कारण ही है। युद्ध संबंधी दांव-पेचों को गुरु जी भली-भांति समझते थे। आप जी को जीवन में चार मुख्य युद्धों और कुछ एक छोटी-मोटी मुठभेड़ों का सामना करना पड़ा, परंतु इस जुझारू जीवन में आप जी ने सेना के सेनापतियों के साथ सीधा मुकाबला किया। आप जी ने पहले युद्ध में मुखलिस खां, दूसरे युद्ध श्री हरिगोबिंदपुर में अब्दुल्ला खां, करम चंद और रतन चंद; तीसरे युद्ध में काबली बेग और लल्ला बेग तथा चौथे युद्ध में पैंदे खां को मार गिराया। अचानक आक्रमण हो जाने पर भी कभी घबराये नहीं बल्कि दृढ़ता के साथ मुकाबला किया। "गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मुर्दा रूहों में जान डाली और जनता में फौजी अंश भरा, जिसने कौम को पक्के पैरों पर खड़ा कर दिया।" *'वड जोधा'* के गुण के कारण ही गुरु साहिब डर तथा भय से मुक्त थे :

गुरसिखु हरिगोविंदु न लुकै लुकाइआ ॥
(वार २०:१)

भाई गुरदास जी के अनुसार जहां आप जी *'वड जोधा'* थे वहां आप जी परोपकार की सजीव प्रतिमा भी थे। सब्र, संतोष, सहन्‌शीलता, फराखदिली उनके बढ़प्पन की निशानी थी। गुरु साहिब का पैंदे खां को कलमा पढ़ने का आदेश, ग्वालियर के किला में से बंदी राजाओं की रिहाई, निहत्थे पर प्रहार न करना, हरेक सिक्ख श्रद्धालु द्वारा प्रेम सहित स्मरण करने पर वहां पहुंचना, चाहे श्रीनगर और बारामूला का ऊबड़-खाबड़ रास्ता हो या कड़कती धूप वाला मरुस्थल तथा भाई साधु व भाई रूप का ठंडा जल छकना, आप जी के परोपकारी स्वभाव को परिलक्षित करते हैं। गुरु जी ने गुरु-घर से टूटे हुए बाबा श्रीचंद से मेलजोल किया और बाबा मोहरी के पुत्र अनंद का सत्कार किया। आप जी ने तो मिहरबान के साथ भी अच्छे संबंध कायम करने के यत्न किये। ये सब उनके

परोपकारी स्वभाव के कारण ही था। प्रिं. सतिबीर सिंघ उल्लेख करते हैं कि "कहना यही बनता है कि गुरु हरिगोबिंद साहिब जैसा कोई योद्धा नहीं देखा जिन्होंने सब दोखियों को मार गिराया। उन जैसा दानी-परोपकारी नहीं जिन्होंने कभी खजाने में कुछ जमा न रखा। उन जैसा सिक्खों के साथ प्यार करने वाला कोई नहीं था।"

इसी कारण डॉ. इंदु भूषण बैनर्जी ने उल्लेख किया है कि गुरु जी को सभी दिल से चाहते थे तथा प्यार करते थे। हरेक दुख-कष्ट में तथा मुश्किल समय में उनका साथ मांगते थे व देते थे। गुरु जी के अकाल ज्योति में विलीन होने को सब ने कौमी क्षति माना। उनकी जुदाई को कौमी विपदा कहा जाता है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के समूचे जीवन के बढ़प्पन को भाई गुरदास जी ने अपनी वार में इस प्रकार अंकित किया है :

हरखहु सोगहु बाहरा हरण भरण समरथु सरंदा।
रस कस रूप न रेखि विचि राग रंग निरलेपु रहंदा।
गोसटि गिआन अगोचरा बुधि बल बचन बिबेक न छंदा।
गुर गोविंदु गोविंदु गुरु हरिगोविंदु सदा विगसंदा।
अचरज नो अचरज मिलै विसमादै विसमाद मिलंदा। (वार २४:२१)

गुरु साहिब हर्ष-शोक, रस-कस, रूप-रेख, राग-रंग से निर्लेप थे, गोसटि-ज्ञान की चर्चा से अगोचर थे। बल-वचन, विवेक-छल उनके सामने हीन् थे। वे अकाल पुरख का रूप थे। आपका व्यक्तित्व ही ऐसा था कि आप जी सदैव प्रसन्नचित रहते थे।

अंत में तत्व-सार के रूप में कहा जा सकता है कि भाई गुरदास जी ने गुरु जी के बहु-आयामी व्यक्तित्व को भली-भांति सफलता सहित उभारा अथवा उजागर किया है। भाई साहिब ने गुरु जी के गुरगद्दी काल के पहले चरण में आप जी संबंधी उत्पन्न भ्रांतियों को दूर करके *'एका गुर जोत'* के सिद्धांत को परिपक्व किया। भाई साहिब ने भली-भांति उजागर किया कि किस प्रकार गुरु जी अनेक गुणों के मालिक *'वड जोधा'* और *'परउपकारी'* शूरवीर थे, कैसे आप जी में गुरु नानक पातशाह की रबी ज्योति का प्रगटावा हो रहा था और गुरु साहिब दीन-दुनी के मालिक तथा पातशाहों के पातशाह थे :

दसतगीर हुइ पंज पीर हरि गुरु हरि गोबिंदु अतोला।
दीन दुनी दा पातिसाहु पातिसाहां पातिसाहु अडोला।

(वार ३९:३)

नूरानी व्यक्तित्व वाले छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की शोभा तथा यश के फैले होने के बारे में भाई साहिब ने कथन किया है:

गुर गोविंदु खुदाइ पीर गुरु चेला चेला गुरु होआ। . . .
हरिगोविंद गुर छत्रु चंदोआ ॥ *(वार ३९:४)*
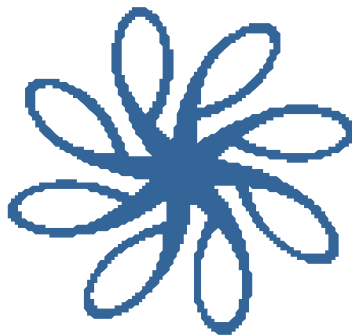
सलतनते शशम - पातशाही छठी - श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-जनाब हुसन-उल-चराग**

भाई नंद लाल जी ने जो गुरु-महिमा फारसी जुबां में की है उसका तरजुमा हम कुछ समय से करते आ रहे हैं। गुरु-महिमा के चलते हुए जब वे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की तारीफ करते हैं तो उसके मध्य एक बंद आता है :

तेगश दुशमन अफगन, व तीरश खारा शिकन।

जिसका मतलब है उनकी तलवार (तिगश) दुश्मन को खत्म करने वाली है और उनके तीर पत्थर तोड़ देने वाले (खारा शिकन) हैं।

इस फारसी बंद में भाई साहिब द्वारा किये जिक्र मुताबिक वक्त-ए-हालात की मजबूरी को वकत-ए-सरकार की तरफ से जो सिक्खों को दबाने की शुरुआत हुई और गुरु अरजन साहिब को लाहौर ले जाकर शहीद कर दिया इससे ऐसे हालात पैदा हो गये जिनकी वजह से सलतनते-शशम गुरु हरिगोबिंद साहिब ने चार महान कार्य किये। इनसे सिक्ख धर्म को नई दिशाएं मिलीं। ये कार्य इस प्रकार हैं :

१) श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना : श्री अकाल तख्त साहिब का सिंघासन समय-सीमा की पाबंदी में नहीं है बल्कि समय के इतिहास से आजाद है और इसके साथ-साथ श्री अकाल तख्त साहिब अलाही (पीरी) है और सांसारिक (मीरी) है। यह तख्त पातशाही है न कि बादशाही तथा न ही किसी खानदानी हकूमत का तख्त, जिस पर एक के बाद दूसरा आकर राजा बन बैठे या कोई फौजी जरनैल बगावत करके इस पर कब्जा कर ले। प्रश्न यह उठता है कि अकाल (तख्त) फिर है कौन और क्या है? 'अकाल' जो समय के भीतर बंधा नहीं--वह केवल एको-एक (ੴ) है। उसे सत्य-नाम से पुकारा जा सकता है। ईश्वरीय सत्य में हमारे संसार की सांसारिक बुराइयां छल-कपट, लाभ-हानि, असत्य कोई भी नहीं है। जो सम्पूर्ण सृष्टि को सृजन करने वाला (करता पुरख) कादर-करीम करतार है, जिसे कोई दूसरी शक्ति भयभीत नहीं कर सकती (निरभउ) और जिसका किसी जीव से विरोध नहीं, वह निरवैर है। निरवैर इसलिये कि यह सब उसकी अपनी सृजना है और खुद की सृजना से विरोध नहीं हो सकता। 'अकाल तख्त' उसका तख्त है जो अकाल मूरत है, जो अजूनी है, जो जन्म लेता नहीं, खत्म (फौत) यानी कि सृष्टि से वह गायब नहीं होता। जो जन्मा ही नहीं उसको मृत्यु कैसी? यह तख्त उसका है जो सैभं है, जो अपनी संभाविक प्राकृतिक शक्तियों द्वारा रचा गया है और अपनी उन्हीं ऊर्जा-शक्तियों से प्रकाशमान है। सिक्ख धर्म के मूल-मंत्र के मुताबिक जो परिभाषा अकाल पुरख की दी गई है श्री अकाल तख्त साहिब उसी का धरती पर प्रतिबिंब है। छठे गुरु साहिब ने सिक्ख गुरु (पीर) अलाही शक्ति के वाहक के साथ-साथ मानव सभ्याचार तथा मनुष्य की भौतिक शक्तियों और गतिविधियों का संचार तथा संचालन करने के लिये मीरी की तलवार भी धारण की। उन्होंने सिक्ख संगत की दोनों ऊर्जाओं मन-मस्तिष्क तथा शारीरिक बल या शक्ति का केंद्रीयकरण कर उसे संत-सिपाही बनाया यानि

**१४-सी, रेस कोर्स रोड, श्री अमृतसर, मो: ९८१५१-८८८१०*

कि प्रत्येक सिक्ख ने भक्ति-भावना, संत-वृत्ति के साथ-साथ अपने बाहु-बल का संतुलन बनाते हुए, शारीरिक शक्ति को मानसिक प्रभाव के साथ जोड़ते हुए अपनी होंद (खुदी), हस्ती (अणख) को जगाकर जीवन जिया। यह एक महान कार्य था।

श्री गुरु अरजन साहिब को लाहौर ले जाकर शहीद कर दिया गया जिस कारण गुरु-घर और सिक्ख संगत के अंदरूनी व बाहरी सोच-ओ-हालात बदल गये और छठे गुरु जी के समय सिक्ख धर्म में जाटों का भारी गिणती में प्रवेश हुआ। इन्हीं में से ही भाई बिधीचंद, भाई लंगाह, भाई पैड़ा, भाई पिराणा और भाई जेठा जी कुछ चुनिंदा प्रमुख योद्धा सिक्ख कौम की पहली फौज के आगू थे।

चौथे, छठे गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से पहले श्री गुरु अरजन साहिब के समय से ही सिक्ख धर्म के प्रचार व गुरु साहिबान की विचारधारा तथा उनके द्वारा की जा रही सिक्ख समाज की स्थापना का विरोध होने लगा था। अब वो विचारधारा के विरोध से आगे बढ़ कर छठे गुरु जी के समय तात्कालिक राजनैतिक प्रबंध के साथ टकराव की शक्ल धारण कर गया। इस बारे में भाई गुरदास जी ने कहा है:

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीड़ी सोढीआ रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।
(*वार १:४८*)

जैसे भाई गुरदास जी कह रहे हैं *"दलिभंजन गुरु सूरमा"*, उसी परिपेक्ष में भाई नंद लाल जी ने कहा है : *"तेगश दुशमन अफगान व तीरश खारा शिकन"* यानी कि गुरु जी की तलवार दुशमन को खत्म करने वाली है और उनके तीर पत्थर तोड़ देने वाले हैं। इस तरह से भाई नंद लाल जी छठम गुरु जी की महिमा में अपने इस शेअर द्वारा कितनी बड़ी व्याख्या कर गये हैं। अब हम आगे फारसी जुबां में की गई गुरु-महिमा के मूल पाठ को लेकर उसकी व्याख्या करते हैं :

सलतनते शशमश जलवह आराए ईजदी शवारक
व इंतशार अफजाए कदसी बवारिक।

गुरु नानक-ज्योति की छठी पातशाही, अलाही रोशनी के दैवी-प्रकाश का जलवा सजाए हुए यानि कि उसे प्रकाशमयी किये हुए संसार को नूरोनूर कर रही है।

शारकहए रहिमतश आलमीआं अफरोज़
व बारकहए अजमतश जुलमतीआं सोज़।

गुरु जी की रहमत का चमत्कार (प्रभाव) आलमीआं (संसार) को रौशनी देने वाला है और उसकी विद्वता के प्रभाव से अज्ञानी व नफरत करने वालों को जुलमतीआं (जालिमों) को जला देने वाली है।

तेगश दुशमन अफगन वा तीरश खारा शिकन।
इआजाजे पाकश मिन-उल-शमस अजहर।
व मनजले उलीआइश अजहर उलवी बरतर।

उसकी तलवार दुशमन को मार देने वाली और तीर पत्थर को तोड़ देने वाले हैं। गुरु जी का तेज सूर्य से भी अधिक है और उनकी पदवी ऊंचे से ऊंची है।

जेबे हर पंज मशअले जहां आराए
व जीनते अंजमने इरशाद वा हुदा।

गुरु जी जहां (संसार) को रौशन करने वाली पहली पांचों मशअले का स्वरूप और उन द्वारा किये गये मार्गदर्शन (अजंमन इरशाद हुद), उस सभा का निखार वे खुद हैं।

हाए नामे हवीयत इरतसामश हादीए कौनैन
व राए रहिमत इकतजाइश रौशनीए हर ऐन।

गुरु जी के नाम का पहला लफ्ज 'हे' जिसे

हिंदी-पंजाबी में अक्षर 'ह' लिखा व बोला जाता है (हे हवीयत)। वह ईश्वरी चिन्ह है जो लोक-परलोक दोनों जहां को उपदेश देने वाली है। उनके नाम से दूसरा अक्षर 'रे' रहमतों से भरपूर हर आंख को रोशन करने वाला है।

काफे फारसीअश गौहरे हक्क जिला
बा बावे बादी विरदुलमा जां फ़िज़ा।

गुरु जी के नाम काफ (गाफ) फारस की खाड़ी के चमकते मोती के मानिंद है और लफ्ज 'बा' गुलाब की खुशबू की तरह प्रत्येक मन को महका देता है।

बाए अबद ज़िआइश बाकी बिलहक्क
वा शमीमे नूने फारुख मज़मूनश निअमे जावे दानी नसक।

गुरु जी के नाम की 'बे' हिंदी अक्षर 'ब' रब्ब (ईश्वर) के नाम को इंसान के दिलों में रखने वाली है और उनके नाम में आया लफ्ज 'नून' की खुशबू हमेशा के लिये निहमत है।

दाले अखरश दानाए बातन व जाहिर
व असरारे गैब व शहूद बर दिलश बाहर।

गुरु जी के नाम में आये शब्द में लफ्ज दाल (अक्षर 'द') जो दानाए-बातन व जाहिर-भेद-अभेद, जान-अनजान (गुप्त व जाहिर) सब को जानने वाले हैं और उनमें कोई भेद छुपा नहीं है।

वाहिगुरू जीओ सत = अकाल पुरख का नाम सत्य है।

वाहिगुरू जीओ हाज़र नाज़र है= अकाल पुरख हर जगह उपस्थित है।

गुरु हरि गोबिंद आं सरापा करम
कि मकबूल शुद जू शकी ओ दज़म।८१। (गंजनामा)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब सर (सिर) से पांव तक बख्शिशों यानी कि मिहर-ओ-करम करने वाले हैं, जिनकी कृपा से (जू शक्की ओ दजम) जीवन में मुरझाए हुए व बदनसीब लोग भी अकाल पुरख (खुदा) की दरगाह में कबूल कर लिये जाते हैं।

फ़ज़ालो करामश फजूं अज हिसा
शिकोहिश हमा फ़र्हाइ किबरीआ।८२।

'फजूं अज हिसा' संसार में मौजूद पत्थर-रोड़ों की गिणती से कहीं ज्यादा, 'फजालो करामश' गुरु जी की मिहर-ओ-करम और बख्शिशों की कोई गिणती नहीं है अथवा बेहिसाब है और उनकी शान-ओ-शौकत अलाही (रब्बी) शान-ओ-शौकत जैसी है।

वजूदश सरापा करमहाइ हक्क
जि ख्वासां रबाइंदा गूइ सबक।८३।

गुरु जी का वजूदश (शरीर) सर से पांव तक खुदाई (अकाल पुरख) की रहमतों को साकार करता है और गुरु जी का स्थान ईश्वर (अकाल पुरख) के नजदीकों से नजदीक रहने वालों से भी आगे है।

हम अज़ फुकरो हम सलतनत नामवर
ब-फ़रमानि ऊ जुमला ज़ेरो ़जबर।८४।

गुरु जी दरवेश और पातशाह दोनों एक साथ होने के नाते संसार में पहचाने जाते हैं और तमाम 'ज़ेरो ज़बर' छोटे-बड़े, 'ब-फरमानि ऊ' उनके फरमाए (हुक्म) में हैं।

दो आलम मुनव्वर जि अनवारि ऊ
हमा तिशनाइ फैज़ि दीदारि ऊ।८५।

छठे गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के नूर-ओ-प्रताप (अनवारि ऊ) से दोनों जहान (दो आलम) जगमगा रहे (मुनव्वर) हैं मतलब कि गुरु जी के प्रभाव के कारण बेइलम और मानसिक कमजोरी की वजह से पस्त पड़े संसार के लोगों को अब जीने की हौंसला-ए-हिम्मत बनने लगी थी।

गुरु जी जो मिहर से भरपूर हैं, का दीदार पाने के लिये (हमा तिशनाइ) सभी लोग व्याकुलता से तत्पर हुए चले आ रहे हैं, जगत् उनकी झलक पाने को प्यासा है।

महाकवि भाई संतोख सिंघ की नज़र में
श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब : महां धीर बलबीर

*-डॉ. जगजीत कौर**

"दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।" ये 'छठम पीर' साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की महानता के प्रतीक शब्द हैं। गुरु साहिब का विलक्षण व्यक्तित्व, जो एक महान आध्यात्मिक शक्ति के प्रेरणा-स्रोत हैं, मायाग्रसित, विकारी कलयुगी जीवों को माया सागर से उभरने का साधना-मार्ग दिखाने वाला दिशा-निर्देशक है। गुरु जी प्राणी-मात्र को संतप्त व दुखी करने वाले विकारों से मुक्त कर असीम संतोष व तृप्ति का रहबर बन आनंद प्रदान करने वाले परोपकारी उपदेशक हैं और साथ ही मानवीय गुणों के शत्रु, मानवता का शोषण करने वाले दुष्ट आततायियों को न्याय और सत्य की परिभाषा सिखाने वाले गुरु पातशाह दुष्ट दमनकारी बलबीर योद्धा भी हैं। गुरु साहिब ने दो तलवारें पहनीं--एक मीरी की और दूसरी पीरी की। 'पीरी' की तलवार 'ज्ञान-खड़ग' है, जिसके सहारे मनुष्य ने अपने अंदर के शत्रु, दिव्य गुणों का हनन करने वाले, मानसिक सुख-शांति को भंग कर प्रभु-मिलन में बाधक बनने वाले तत्वों का नाश करना है, विकारों पर विजय पानी है। 'मीरी' की खड़ग से उन शत्रुओं का नाश करना है जो वाह्य जगत के संतुलन को बिगाड़ने में प्रयत्नरत रहते हैं। अकाल पुरख की इस सुंदर रचना-सृष्टि को अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए मानव-मात्र को शांति से जीने नहीं देता। ऐसे तत्वों का नाश शक्ति द्वारा होगा यह सिखाया गुरदेव जी ने 'मीरी' के संकल्प द्वारा।

ऐसे महान योद्धा गुरु का चरित्र-अंकन महान कवि भाई संतोख सिंघ ने अत्यंत ओज, उत्साह एवं श्रद्धापूरित काव्यांकन द्वारा "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" में किया है। साधारणत: यह ग्रंथ "सूरज प्रकाश" नाम से भी प्रसिद्ध है। इस ग्रंथ की लोकप्रियता इससे ही प्रमाणित होती है कि लगभग सभी गुरु-स्थानों और संतों-महापुरुषों के डेरों पर प्रतिदिन नियमित रूप से संध्या समय इसकी कथा की जाती है। प्रेमी-जन अत्यंत श्रद्धा व उत्साह से गुरु साहिबान के जीवन-चरित्र श्रवण कर लाभान्वित होते हैं।

महाकवि भाई संतोख सिंघ श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का विवरण प्रस्तुत करते हुए बताते हैं कि गुरु साहिब का जन्म पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के घर माता गंगा जी की कोख से संवत् १६५२ आसाढ़ वदी एक, इतवार, अर्ध रात्रि के समय तद्नुसार जून १५९५ को हुआ:

संमत सोलहि सै अरु बावन हाड़ इकीसवीं को दिन सोऊ।
जामनी आधि बितीति भई जब, पुक्खय निच्छत समो तब होऊ। . . .

दोहरा

आदितवार सु दिन महां थिति इकादशी जानि।
सुकल पक्खय आसाढ़ को प्रगटे गुरू महान।
(रास ३/४)

जन्म के समय बाल (गुरु) हरिगोबिंद साहिब ऐसे अनुपम सलोने स्वरूप वाले थे कि

**1801-C, Mission Compound, Near St. Mary's Academy, Saharanpur (U.P.)-247001, Mob. : 92197-87756*

भवन में मौजूद दाई उस रूप सौंदर्य को देख विस्मादित हो कहने लगी :

बाल अनेक भए मम हाथ,
नहीं इस के सम को दुति पावति।
सुंदर सूरति शोभ ते पूरति,
श्री मुख मंद मनो मुशकावति। (रास ३/४)

बिजली के प्रकाश जैसा तेज मुख-मंडल पर है जो सहज ही नेत्रों को तृप्त कर रहा है:

बीजरी प्रकासै जिम तेज को उजासै तिम लोचन को भासै तब गंग को सुनायो है। (रास ३/४)

गुरु-रूप की शोभा निहार सेविका बलिहार जा रही है :

चारू प्रकाश आवास भयो पिख धाइन बे बसि ह्वै बलिहारू।
हारू उदयो मन को जनु चंद बिलंद सरूप शुभै सम मारू। . . . २६॥ (रास ३/४)

बाल अनोखा तो होना ही था, आखिर ब्रह्मज्ञानी तत्ववेत्ता बाबा बुड्ढा जी के आशीर्वाद से और अकाल पुरख वाहिगुरु जी की बख्शिश से शांति-साधना, तप-तेज के पुंज श्री गुरु अरजन देव जी को प्राप्त हुआ था। श्री गुरु अरजन देव जी के विवाह को लंबा अरसा बीत चुका था पर कोई संतान नहीं हुई थी। बड़ा भाई प्रिथीचंद और उसकी पत्नी अक्सर ताने देती। माता गंगा जी को पति श्री गुरु अरजन देव जी ने ब्रह्मज्ञानी बाबा बुड्ढा जी के पास आशीर्वाद प्राप्त करने को भेजा, परंतु बाबा जी का उत्तर था कि "भला गुरु-घर का एक साधारण सेवक क्या आशीर्वाद दे सकता है?"

आप गुरू पूरन हैं पूरति मनोरथनि,
जाचत हजारों दास लेहिं तिन नाम को।
(रास ३/२)

गुरदेव आप समर्थ हैं, सबके मनोरथ उन्हीं से पूरे होते हैं। गुरु साहिब उत्तर सुनकर मुस्कराए और तरकीब बताई बाबा जी से शुभ आशीर्वाद पाने की। तब माता जी उसी योजनानुसार जब निज हाथों से चक्की पीस मिस्से परशादे, लस्सी, मक्खन, प्याज, अचार लेकर भरी दुपहरिया में पैदल बाबा जी के पास पहुंचीं तो श्रम से विगलित, भूख-तृप्ति का उचित समय जान बाबा जी ने प्रसन्न हो भोजन पाया। गुरु का सच्चा सिक्ख सेवा के महत्व को अकारथ नहीं जाने देता। माता जी को आशीर्वाद दिया :

जबहि गंग को आवति देख्यो
ततछिन उठयो प्रीति के नाल।
धन मात हो! उचित सदन गुर,
मम कारन आई पग नालि ॥११॥ (रास ३/३)

तब प्रेम से दो परशादे हाथ में लिए और एक बड़े से गंठे को हाथ के जोरदार प्रहार से मसलते हुए कहा : *"जथा सु कंदक मैं अब फोरे तिम मुगलन के फोरहि सीस"* आशीर्वाद दिया कि एक महान बलशाली जालिमों के शीश मसलने वाला शौर्यवान पुत्र प्राप्त होगा। समय पाकर गांव वडाली में माता गंगा जी को पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई और जब ऐसे मनोहर रूप बाल गुरु जी का अवतरण हुआ तो बड़े भाई प्रिथीचंद की ईर्ष्या और भड़क उठी। बाल श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को कई प्रकार से मारने के यत्न किए गए। एक बार गुरदेव जी को सीतला ताप का भी प्रकोप हुआ, परंतु हर बार अकाल पुरख वाहिगुरु जी ने आप वरदहस्त देकर बाल की रक्षा की। योग्य समय जान श्री गुरु अरजन देव जी जो खुद अत्यंत उच्च कोटि के बाणी-रचयिता, विविध प्रकार की विद्या के ज्ञाता थे, पुत्र की अंगुली पकड़ बाबा बुड्ढा जी के पास ले गए और प्रार्थना की, "हे! विद्या मारतंड, असीम ज्ञान के पुंज ब्रह्मज्ञानी, बाल

पर ज्ञान की बख्शिश करें। इसे अपने संरक्षण में रखें, विविध प्रकार की विद्या का, कलाओं का ज्ञान प्रदान करें।" बाबा जी ने बाल श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को गुरमति की शिक्षा के साथ-साथ औषधि-शास्त्र, चित्रकला आदि सैनिक प्रशिक्षण भी दिया। बाबा जी ने उन्हें घुड़सवारी, तलवार चलाना, नेजाबाजी, तीरंदाजी और बंदूक चलानी भी सिखाई। सम्यक ज्ञान प्राप्त कर गुरु साहिब योग्य देखभाल के कारण रूप सौंदर्य में निखरते चले गए और एक अत्यंत रूपवान प्रभावशाली व्यक्तित्व के रूप में उभरे। कुदरती डीलडौल और रोबीले व्यक्तित्व का वर्णन कवि ऐसे करता है:

कोकनद पद मृदु रकत छबीले अति
हीरन की पंगति जिउ नख है अनंद करि।
चिकन अकार एकसार जुगबंध नीके
गुलफ सुजानू ग्रिथ निठुर विलंद करि।
त्रिबली उदर पर नाभिका गंभीर शुभ
आधुत सुछाती दवै उतंग है सिकंध करि।
गाढे भुज दंड है प्रचंड बलवंड बड़े
कुंजर की सूंड जिम श्री हरिगोबिंद करि।
(रास ४/२)

गुरु साहिब के चरण कमल पुष्पतर है, नाखुन हीरे की पंक्तियां, टांगें सुपारी के पौधे जैसी, घुटनों की गांठें कसी हुई, पेट की तीन बली (त्रिबली), नाभि गहरी, छाती चौड़ी, कंधे उठे हुए, भुजाएं हाथी की सूंड़ जैसी मजबूत हैं। आगे कवि उनके रूप-सौंदर्य का वर्णन करते हुए बताता है कि उनके हाथ कमल पुष्प जैसे, अंगुलियां नव पल्लवित पत्तों जैसी, नाखून सच्चे हीरों-नगों जैसे, मुखड़ा चंद्रमा जैसा, दंत पंक्ति श्वेत, ओष्ठ सुंदर कमल की पंखुड़ियों जैसे, नेत्र तीखे नुकीले, ठोडी और गर्दन गोल। ऐसे रूप को देखकर संगत विमोहित हो जाती है :

पंकज की पांखुरी सरीखी आंखि तीखी तीखी
पिखन तिरीछ ते निहाल करे संगति। (रास ४/२)

दस साल की अवस्था में ही ऐसा व्यक्तित्व निखरा कि विवाह के लिए रिश्ते आने लगे। लाहौर के दीवान चंदूशाह की लड़की का भी रिश्ता आया जो संगत के कहने पर अस्वीकार कर दिया गया, क्योंकि सिक्ख संगत की शिकायत थी कि इसने गुरु-घर की गरिमा के प्रतिकूल वचन बोले हैं। गुरु जी के पांच पुत्र--बाबा गुरदित्ता जी, बाबा अणीराय जी, बाबा अटल राय जी, श्री (गुरु) तेग बहादर जी और बाबा सूरजमल जी एवं सबसे पहले बड़ी पुत्री बीबी वीरो जी, जो वि. संवत् १६६८ (१६११ ई) में पैदा हुईं। इनमें बाबा गुरदित्ता जी, बाबा अटल राय जी और बाबा अणीराय जी गुरु जी के जीवन-काल में ही अकाल चलाणा कर गए।

इस बीच सन् १६०६ ई में जहांगीर बादशाह की तंगदिली, कट्टर धार्मिक नीति और गुरु नानक पंथ के अद्भुत विकास को सहन न कर सकने के कारण, चंदूशाह एवं प्रिथीचंद आदि विरोधियों द्वारा कान भरे जाने के फलस्वरूप शांति के पुंज महान गुरदेव श्री गुरु अरजन देव जी को अमानवीय ढंग से यातनाएं देकर शहीद कर दिया गया। लाहौर जाने से पहले ही अंतरयामी गुरदेव आने वाली परिस्थितियों को भांप गए थे इसलिए उन्होंने मुखी सिक्खों के साथ बैठकर आगामी कार्य-प्रणाली निश्चित की। बेटे श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को पास बैठाकर उपदेश दिया कि "समय आ गया है, अब शस्त्र धारण करने होंगे, धर्म की रक्षा के लिए यह जरूरी है।"

जबि कबि जगति बिपरजै होति।
तुम तनि धारि म्रिजाद उदोति। (रास ४/३०)

मर्यादानुसार जब बाबा बुड्ढा जी श्री गुरु

हरिगोबिंद साहिब को गुरगद्दी पर प्रतिष्ठित करने लगे तो गुरु साहिब ने कहा कि अब सेली टोपी को संभाल कर अलग रख दिया जाये और उनके गले में गातरा डाला जाये। बाबा जी ने हुक्म अनुसार गुरु साहिब को दो तेगें पहनाईं जिसे गुरु साहिब ने एक मीरी और दूसरी पीरी की बताया। मीरी की तेग शक्ति-सामर्थ्य का प्रतीक है और पीरी ज्ञान-साधना, धर्म-परायणता की। मीरी के बिना पीरी की रक्षा नहीं हो सकती। अब समय आ गया है कि साधु-जनों की, सत्य-शांति प्रिय समाज व स्वाभिमान की रक्षा के लिए शस्त्र धारण करना अनिवार्य है। उसी समय केवल ग्यारह वर्ष के बलबीर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपनी धर्म-नीति की घोषणा की और कहा कि अब जो भी श्रद्धालु उनके दर्शन को आए वो उपहार में अच्छी नस्ल के घोड़े लाए। युवा पुरुष-शक्ति सम्पन्न स्वस्थ युवा अपनी जवानी गुरु दरबार में भेंट करें, शस्त्र भेंट किए जायें। इस घोषणा से पंजाब की जवानी में असीम उत्साह की लहर दौड़ गई। उनमें आत्मविश्वास जागृत हुआ। उन्हें यह विश्वास जागृत हुआ कि अब कष्ट के दिन खत्म हो रहे हैं। जागीरदारी, सामंतशाही समाप्त होगी, मुगल सरकार द्वारा किया जाने वाला शोषण समाप्त होगा। देखते ही देखते दिनों में ही माझा, मालवा और दोआबा क्षेत्र के पांच सौ जवान गुरु जी की शरण में अपनी जवानियां भेंट करने पहुंच गए, जिन्होंने कहा, हमें गुरु की शरण चाहिए, बस, हमको धन की कोई इच्छा नहीं। दो वक्त का भोजन लंगर-प्रसाद मिल जाये, हम गुरु के लिए अपना खून बहाने को तैयार हैं। उनके रहने-ठहरने की व्यवस्था की गई, लंगर से भोजन-प्रसाद मिलता, वस्त्र आदि दिए जाते, बढ़िया किस्म के घोड़े और शस्त्र दिए गए तथा मल्ल अखाड़ों में युद्ध-कला का प्रशिक्षण गुरु साहिब स्वयं देते।

गुरु साहिब की अपनी दिनचर्या में भी परिवर्तन हुआ। वे प्रातः अमृत वेला से पूर्व जागते, स्नान आदि से निवृत्त हो श्री हरिमंदर साहिब आते। नितनेम बाणियों का पाठ और आसा की वार का कीर्तन-गायन होता। भोग के बाद वे अमृत सरोवर के पार दूसरे सिरे पर वृक्ष के नीचे जा विराजमान होते, वहीं मुखी सिक्ख और बाहर से आई संगत एकत्र होती, गुरु जी के दर्शन करती; आपस में विचार-विमर्श होता, समस्याएं सुनी जातीं, समाधान कि; दोपहर तक दुखियों के दुख सुनते, उपदेश देते, दुख दूर करने के उपाय बताते; दोपहर होने पर माता जी के पास जाते, वहीं भोजन ग्रहण करते, थोड़ा विश्राम करते; बाद दोपहर पुनः मैदान में आ बैठते, वहां घुड़सवारियां होतीं, शस्त्र-संचालन का अभ्यास होता, मल्ल-युद्ध होते; संगत की हाजरी में ही वीर-रसी वारों का गायन होता। वीर-रसी वारों के गायन को गुरु साहिब द्वारा खूब प्रोत्साहन दिया गया। अब्दुल्ला और नत्था वार-गायन करने वाले गुरु-दरबार के प्रसिद्ध ढाडी थे। इस प्रकार की वीर-रसात्मक उक्तियों के गायन से वीरों में उत्साह का संचार होता, उनकी भुजाएं फड़कने लगतीं, मुर्दों में भी संजीवनी का प्रसार होता। गुरु साहिब ने तो 'आसा की वार' को भी वीर रस में गायन की प्रथा चलाई। प्रातः एक बार तो श्री हरिमंदर साहिब में बाणी-गायन होता और दोबारा खुले दरबार में दिन चढ़ने पर वीर-रसी वारों का गायन किया जाता। इस क्रम में कई श्रद्धालुओं के जीवन में परिवर्तन आया। पूर्व जीवन उनका कुछ भी रहा हो किन्तु गुरु जी की शरण में आ जाने के बाद उन्होंने ऐसे-ऐसे

शौर्यपूर्ण कार्य करके दिखाए कि सिक्ख इतिहास में उनका नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाता है। सिक्ख पंथ को उन पर गर्व है।

इसी समय सन् १६०९ के प्रारंभ में श्री अमृतसर नगर को चारों ओर से मजबूत दीवार से घेर लिया गया। श्री अमृतसर नगर के लगभग दो मील की दूरी पर लोहगढ़ किले का निर्माण किया गया, जहां अस्त्र-शस्त्र का भंडार रखा गया, वीर योद्धाओं के प्रशिक्षण का प्रबंध भी यहीं किया गया। श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण किया गया। यह सिक्ख पंथ का पहला 'तख्त' है। गुरु साहिब ने इसे पंथ की राजनीतिक, सामाजिक व अन्य समस्याओं के विचार-विश्लेषण के लिए निर्मित किया, क्योंकि श्री हरिमंदर साहिब को वे निरोल आध्यात्मिकता का केंद्र बने रहना देना चाहते थे, इसलिए श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण किया गया, जहां बैठकर पंथक फैसले किए जाते थे। अब सिक्ख अपनी समस्याएं श्री अकाल तख्त साहिब पर लेकर आते जो सच्चे पातशाह अकाल पुरख जी का तख्त माना जाता और गुरदेव व सच्चे पातशाह के स्वरूप तुल्य उन पर अपना निर्णय देते। इसे प्रारंभ में 'अकाल बुंगा' भी कहा गया। यह अकाल पुरख वाहिगुरु जी का हुक्म-स्वरूप स्थल था। पंथ के अहम निर्णय यहीं होते और अरदासा सोध कर यहीं से पंथ रण-क्षेत्र में उतरता।

पंथक हित में किए गए इन परोपकारयुक्त उत्साही कार्यों से गुरु साहिब की लोकप्रियता बढ़ी, अनेकों श्रद्धालु देश-विदेश से दर्शनार्थ आने लगे। यह सब जहांगीर बादशाह को सहन कैसे हो सकता था? उस पर गुरु-घर के पुराने विरोधी चंदूशाह, मुर्तजा खां आदि ने भी बादशाह को भड़काया और अंततः बादशाह से गुरु साहिब की गिरफ्तारी का हुक्म ले लिया। फलतः गुरु साहिब कुछ मुख्य सिक्खों सहित दिल्ली दरबार में पहुंचे जहां उन्हें ग्वालियर के किले में कैद कर दिया गया। बाद में साईं मियां मीर जी और वजीर खां के समझाने पर उसने गुरु साहिब को कैद से रिहा कर दिया। उस समय ग्वालियर का किला एक भयानक जेलखाना माना जाता था। इसमें ५२ राजे भी कैद थे। गुरु साहिब ने रिहाई के समय इन ५२ राजाओं को भी मुक्त किया, इसी लिए गुरदेव को 'बंदी छोड़' भी कहा जाता है।

श्री अमृतसर पहुंचकर वे पुनः अपने नित्य के कार्यों में संलग्न हो गए। इस बीच जहांगीर बादशाह १६१९ ई में श्री हरिमंदर साहिब दर्शन करने को आया, कीर्तन सुना, श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पाठ श्रवण किया, सत्कार से लंगर का परशादा छका। नूरजहां बेगम को लंगर-प्रशाद बहुत पसंद आया। वह माता गंगा जी से भी मिलने गई। बादशाह ने गुरु साहिब को लाहौर दरबार में आने का निमंत्रण दिया। गुरु जी के व्यक्तित्व और मानवीय लोक-कल्याण कार्यों से वह बहुत प्रभावित हुआ। गुरु जी के लाहौर दरबार पहुंचने पर उसने गुरु जी का भव्य स्वागत किया, अत्यंत आदर सहित गुरु जी के साथ वचन-विलास करता रहा।

लाहौर से वापिस आने पर गुरु साहिब प्रचार दौरे पर चल कर दोआबा की ओर गए, कुछ दिन करतारपुर टिके, तब ब्यास नदी के किनारे माझे की ओर श्री हरिगोबिंदपुर नगर की नींव रखी। इसे अत्यंत योजनाबद्ध सुंदर नगर के रूप में उसारा गया। १६२० ई में कशमीर की यात्रा के दौरान गुरु साहिब बारामूला, मुजफ्फराबाद, वजीराबाद आदि स्थानों पर गए। यहीं कशमीर में ही प्रेमी माई

भागभरी के घर पहुंच कर उसकी चिर-प्रेम में डूबी आत्मा को तृप्त किया। माई का पुत्र सेवादास सिक्ख श्रद्धालुओं से यश सुनकर बाणी का रसिया बना। माई को भी रंगत लगी। उसने मीरी-पीरी के मालिक के लिए एक चोला बुनकर रखा। इंतजार के बाद आखिर वह दिन आया। गुरु साहिब ने कुटिया में प्रवेश कर प्रेम सहित वह चोला पहना। माई धन्य हुई और गुरु साहिब की हजूरी में ही प्राण त्याग गई। यहीं कशमीर का एक श्रद्धालु कट्टूशाह भी हुआ। गुरु साहिब ने पंजा साहिब, ननकाणा साहिब के भी दर्शन किए, डरोली भी गए, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा आदि कई स्थानों की यात्रा कर श्री अमृतसर पहुंचे। इस यात्रा का महत्व इस दृष्टि से है कि श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद सिक्खों में कुछ डर व कमजोरी दूर करने की जरूरत थी। गुरु साहिब ने पावन उपदेशों से सिक्खों को सचेत किया। उन क्षेत्रों में जहां-जहां गुरु साहिब के चरण पड़े अनेकों नव-दीक्षित श्रद्धालु बने। कुछ गुरु नानक साहिब के समय से श्रद्धालु परिवार थे। उनमें भी फिर से नव-स्फूर्ति का संचार हुआ। इस समय कई प्रेमी श्रद्धालुओं का वर्णन कवि संतोख सिंघ करते हैं। इन प्रेमी सिक्खों की श्रद्धा से सिक्ख-जगत चढ़दी कला में प्रविष्ट हुआ। गुरदेव सभी को सतिनाम-सिमरन का उपदेश देते और बताते कि योग, वैराग्य, भक्ति और ज्ञान सबका सुमेल सतिनाम-सुमिरन में है :

--जिमि हरिमंदर के दर चार।
जिस बरहि सु तिसहि उदार।
जोग बिराग भगति अरु गिआन।
सिमरे नाम आइ चहु पान। (रास ५/४५)
--कल महि केवल है सतिनाम।
इस ते लहै स्रेषठ सुखधाम। (रास ५/४६)

कशमीर-यात्रा के दौरान बारामूला कश्यप मुनि के आश्रम में भी आए। यहां प्रेमी-जनों को, जिनमें करमचंद गुरु जी का अनन्य प्रेमी दर्शन को तरस रहा था, उसे मिले और जपु जी साहिब का महत्व संगत को दर्शाया :

श्री हरिगोबिंद वाक बखाना।
जप के अरथ महान महाना।
जथा वेद पद अरथ उचारै।
निज सरूप जानन निरधारै।
तिम जपु पद को अरथ लखीजै।
जाननि अपनि सरूप जनीजै। (रास ५)

इस बीच गुरु साहिब ने बाबा गुरदित्ता जी को पर्वत शृंखला के मध्य रमणीय स्थल पर 'कीरतपुर' नगर बसाने के लिए भेजा। श्री गुरु हरिराय साहिब जी का जन्म इसी पर्वत-स्थल पर हुआ। यहां गुरु नानक साहिब के समय का प्रेमी बुड्ढण शाह रहता था। समय पाकर गुरु साहिब स्वयं बुड्ढण शाह के पास आए। प्रेम विगलित वह गुरु-चरणों पर गिर पड़ा। काफी समय गुरु-अंक में आनंदतिरेक अवस्था में रहा तो गुरु साहिब ने याद दिलाया, "भाई, वो दूध तो पिला जिसे छठे जामे में पीने का वायदा हमने पहले जामें में किया था।" बुड्ढण शाह मोहक स्वरूप देख गद्‌गद् हुआ, बाद में दसवें स्वरूप के दर्शन कर ही उसने परलोक गमन किया।

इसी तरह बीबी कौलां का भी जिक्र करते हैं। इस प्रेमी बीबी कौलां की स्मृति में 'कौलसर' का निर्माण हुआ। प्रेमी बीबीओं में दोआबा की बीबी सुलक्खणी का भी जिक्र आता है जिसके भाग्य में संतान नहीं थी। गुरु जी के हाथ से संतान लिखवाने के क्रम में घोड़े के हिलने पर एक का सात बन गया। गुरु जी के प्रेमी श्रद्धालुओं में अनेक मुस्लिम और सूफी पीर-

फकीर भी थे।

इधर राजनीतिक पटल पर कुछ परिवर्तन हुए। जहांगीर की मृत्यु के बाद उसका बेटा शाहजहां मुगल बादशाह बना। वह कट्टर धार्मिक स्वभाव का था। उसने बल प्रयोग द्वारा इसलाम का प्रचार किया। अनेक हिंदू मंदिर गिरा कर मस्जिदें बनवाईं। ऐसे बादशाह को जब पंजाब के नवाब कुलीज खां और मुखलिस खां ने ये खबरें पहुंचाईं कि पंजाब के हालात खराब हैं, अनेकों मुसलमान गुरु-दरबार में हाजिर होते हैं, सिक्ख अपनी सैनिक ताकत भी बढ़ा रहे है तो ऐसे में टकराव संभव था।

गुरु साहिब को ऐसा आभास तो हो रहा था पर अचानक हमला होगा इसका अनुमान नहीं था। वे मुगलों से टक्कर लेने को तैयार नहीं थे। इधर हालात ऐसे बने कि उस वर्ष वैसाखी कीरतपुर में मनाई गई, बहुत सिक्ख संगत एकत्रित हुई, बीबी वीरो का विवाह भी निश्चित हुआ। गुरु जी ने सिक्ख संगत को हुक्मनामा भेजा। संगत में विवाह का भी उत्साह था। वैसाखी के बाद वे श्री अमृतसर के दर्शन और सैर-सपाटे के उत्साह में थे। कुछ सिक्ख घूमते-घुमाते शिकार खेलने के विचार से श्री अमृतसर के निकट गुमटाला की ओर निकल गए। यहीं शाही फौजें भी टिकी हुईं थीं और वे बाजों का खेल खेल रहे थे। एक शाही बाज सिक्खों के कब्जे में आ गया। मांगने पर शाही बाज सिक्खों ने नहीं दिया, कहा हमने पकड़ा है, नहीं देंगे। शाही फौज ने कुछ अनचाहे बोल बोले। इन अपशब्दों से सिक्खों ने स्वयं को अपमानित महसूस किया। शाही फौज ने गवर्नर कुलीज खां को जा भड़काया। उसका दीवान अबूहसन और फौजदार मुखलिस खां था। कुलीज खां गुरु अरजन साहिब के समय फौजदार था और गुरु-घर से ईर्ष्या रखता था। इन्होंने शाहजहां को भड़काकर गुरु-घर पर हमला करने की इजाजत ले ली। फलत: सात हजार मुगल सैनिक लेकर ये श्री अमृतसर पहुंच गये। गुरु साहिब ने अत्यंत बहादुरी और सूझ-बूझ से सारी योजना बनाई। उन्होंने रातो-रात श्री अमृतसर से अपने परिवार को झबाल भाई लंगाह जी के पास भेज दिया। मुगलों ने लोहगढ़ किले पर हमला किया। गुरु साहिब ने पहले ही यहां से सारा असला सुरक्षित स्थान पर भेज दिया। मुगल इस किले को तोड़ने में लगे रहे और गुरु साहिब सिक्खों सहित श्री अमृतसर को महफूज करने में लगे रहे। किले की दीवार तोड़ प्रवेश करने पर केवल विवाह के लिए बनी मिठाइयां ही उनके हाथ लगीं। सन् १६३४ में लड़ी गई श्री अमृतसर की यह जंग सिक्ख इतिहास की मुगलों से लड़ी गई पहली जंग है। गुरु जी के साथ टाकरे के लिए पैंदे खां, भाई बिधीचंद, भाई सोहन, भाई गोपाला, भाई तिलोका, भाई अनंता, भाई निहाल, भाई नंद, भाई भीड़ा, भाई भीखन, भाई पिराणा, भाई जैता के साथ और भी अनेक हठीले वीर थे। मुगलों के पास अनवर खां, मुखलिस खां, सुलतान बेग, शम्स खां जैसे मंजे हुए तजुर्बेकार लड़ाकू योद्धा थे, फिर भी जीत गुरु साहिब की हुई। सिक्खों ने जमकर मुकाबला किया, हालांकि सिक्खों के पास तोपखाना भी नहीं था। गुरु साहिब ने एक पेड़ के खोखल में से पत्थरों की बौछार की जो मुगलों के लिए असहनीय थी। यह एक नए किस्म की जंग थी। कवि संतोख सिंघ बताते हैं:

मचिओ लौहगढ़ जंग इम भइयो शबद विकराल।
मनहुं भाड़ धाना भुजे तड़ तड़ भई बिसाल।

दूसरे दिन का युद्ध बहुत भयानक हुआ। जंग की कमान भाई भाना जी ने संभाली।

बहादुरी से जूझते हुए वे पिपली साहिब के पास मुगलों की गोली लगने से शहीद हो गए। इसके बाद कमान गुरु साहिब ने संभाली। फौज में उत्साह फैल गया। गुरु साहिब के तीरों के प्रहार से कोई बच नहीं सका। कवि शिरोमिण के अनुसार:

गुरु बान छोरे। चले बेग घोरे।
जिसे जाइ लागे। तबै प्रान तिआगे।

पांच हजार सवारों के साथ गुरु साहिब अकेले ही लड़ रहे हैं :

पांच हजार परे ललकार तुफंगनि मारि के रारि मचाई।
चेत बिखै जिमि मेघ घटा बनि तीरन की बरखा बरखाई।
सूर खरे जिम खेत पकिओ इक बार ही मरि कै भूमि गिराई।
तीर गुरु के समीर बहै दल फाट गइओ नही धीरज पाई।

गुरु साहिब ने तीर का खास निशाना मुखलिस खां को बनाया। उसके भूमि पर गिरते ही मुगल सेना में भगदड़ मच गई। उन्होंने लाहौर की ओर भागना शुरू किया। सिंघ भी अनेक शहीद हुए, माल-असबाब का भी नुकसान हुआ। गुरु साहिब श्री अमृतसर से झबाल आ गए। बीबी वीरो का अनंद कारज किया। उपरांत गुरु जी तरनतारन होते दुए गोइंदवाल आए और तब करतारपुर होते श्री हरिगोबिंदपुर आ गए।

इसके आस-पास का क्षेत्र कुछ ऊंचाई पर था, वातावरण रमणीय था। ब्यास नदी पास में ही बहती थी। गुरु जी ने इस स्थान पर एक नगर बसाना चाहा, परंतु इस स्थान का मालिक एक घोरड़ हिंदू था। वह सिक्खों से डर कर आशंका करने लगा। स्वयं भी अपशब्द बोले और कुछ किराए के लड़ाकू ले आया। सिक्खों को भी क्रोध आ गया। उसका पुत्र रतनचंद था, जो चंदू के भाई लालचंद का सम्बंधी था। चंदू का बेटा करमचंद भी उससे मिलकर जलंधर के सूबेदार अब्दुल्ला खां से जा मिला। उसने एक हजार जवान युद्ध-कला में प्रवीण, जिसमें मुहम्मद खां, बलवंड खां, अली बख्श, इमाम बख्श, नबी बख्श और करीम बख्श आदि थे, इधर-उधर से फौज इकट्ठी कर १५ हजार के करीब गुरु जी पर हमला करने को चल पड़े। इसमें रतनचंद ने प्रतिज्ञा की कि *"सिर पर पाग बांधिहो तबै हतहि क पकरहि गुरु को जबै।" (रास ६)* गुरु साहिब को संदेश भेजा गया, चुपचाप स्थान छोड़ जाओ नहीं तो परिणाम भुगतो। गुरु साहिब ने जवाब दिया, *"शाहुजहां तुमरो है शाहू। हमरो करता पुरख अलाहू।"* जवाब सुनकर अब्दुल्ला खां क्रोध में आ गया। घमासान युद्ध हुआ। सिंघ पूरी तैयारी में थे। उन्होंने शत्रु ऐसे काटे मानो साधारण पदार्थ हो। (रास ६/३१) मुगल दल के मुहम्मद खां, बैरम खां, बलवंड खां, अली बख्श, इमाम बख्श, नबी बख्श, करम चंद सभी मारे गए। अब्दुल्ला खां को गुरु जी ने आप खंडे के वार से खत्म कर दिया। मैदान सिंघों के हाथ लगा, जीत हासिल हुई।

शाहजहां अपनी हार से तिलमिला उठा। उसने दस हजार शाही फौज देकर कमर बेग और लला बेग को भेजा। रास्ते में और फौज मिलती गई। पूरी बीस हजार फौज लेकर सिंघों पर चढ़ आये। इस जंग का कारण दिलबाग और गुलबाग घोड़े बने। काबुल के प्रेमी भाई करोड़ी ने गुरु साहिब के लिए बढ़िया घोड़े काबुल की संगत बखत चंद और तारा चंद के हाथ भेजे। रास्ते में लाहौर टिकने पर शाही

कर्मचारियों ने घोड़े छीन कर बादशाह को भेंटकर शाही अस्तबल में बांध दिए। समाचार मिलते ही भाई बिधीचंद पहले घसियारे का रूप धारकर घोड़ों को घास खिलाने के बहाने एक घोड़ा दिलबाग ले आया और दूसरे घोड़े को देखकर ज्योतिषी का रूप बनाकर कर्मचारी को चकमा देकर कि वे दूसरे घोड़े को देखकर ज्योतिष-विद्या से बता सकते हैं कि पहला घोड़ा कहां है, अस्तबल में प्रवेश कर गए और गुलबाग को निकाल लाए। आते-आते घोषणा की कि "मैं श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का सिक्ख बिधीचंद हूं। पहला घोड़ा मेरे पास है, दूसरा ले जा रहा हूं। मेरे गुरु की चीज थी, गुरु के पास पहुंचा रहा हूं।" यह सुनकर शाहजहां आग-बबूला हो उठा। युद्ध की दुंदभि बज उठी। गुरु साहिब उस समय मालवा में बठिंडा के पास थे। सिंघ पूरी तैयारी में थे। गुरु साहिब ने ऐसी फुर्ती से तेग चलाई कि लला बेग दोफाड़ हो गया। इसके साथ ही कमर बेग, काबली खान, कासम बेग, बहलोल खां आदि भी मारे गए। मुगल भाग निकले, सिंघों की जीत हुई। सिंघ शहीदों की याद में यहां 'गुरूसर' सरोवर बनाया गया। नथाणा में रामपुर फूल रेलवे स्टेशन से यह स्थान तीन मील दूर है। कुछ दिन गुरु साहिब कीरतपुर रहे और तब करतारपुर आ गए।

अब करतारपुर में फिर चौथी जंग शुरू हो गई। इसका कारण पैंदे खां बना। पैंदे खां एक यतीम बालक, जिसे गुरु साहिब ने बच्चों की तरह पाला, प्यार दिया, सैनिक-पशिक्षण दिया, वही गुरु साहिब को मारने पर उतारू हुआ। गुरु साहिब को किसी प्रेमी सिंघ ने सुंदर पोशाक, घोड़ा और बाज भेंट किया। गुरु साहिब ने पोशाक, घोड़ा पैंदे खां को दे दिया और बाज, जो बाबा गुरदित्ता जी उड़ा रहे थे, उसे उसके दामाद उसमान खां ने पकड़ कर छुपा लिया। पैंदे खां गुरु जी से छुपता फिरे। बुलाने पर आ तो गया, पर झूठ बोलने लगा और गुरु जी की शान के खिलाफ बहुत कुछ कहा। गुरु जी ने उसे दरबार से निकाल दिया। दामाद के भड़काने पर वह जलंधर के फौजदार कुतुब खां के पास गया। उसकी मदद से शाही दरबार में पहुंचा और गुरु जी पर हमला करने को सहायता मांगी। तब मुखलिस खां, उसमान खां, काले खां तथा अनवर खां भारी फौज लेकर करतारपुर पर आ चढ़े। पैंदे खां को घमंड था कि अब तक के युद्ध उसकी वजह से ही जीते गए है। सिंघों ने खूब करतब दिखाए। श्री (गुरु) तेग बहादर साहिब ने अनेक शौर्यपूर्ण करतब दिखाए। मुगलों की करारी हार हुई। पैंदे खां उछल कर गुरु जी पर टूटा। गुरु जी ने तलवार के एक ही झटके से उसका काम तमाम कर दिया। गुरु जी ने कहा, "पैंदे खां, तेरा अंत समय आ गया है, कलमा पढ़।" उसने उत्तर दिया, "गुरु जी! आपकी तेग का वार ही मेरा कलमा है। आपके हाथ से मर रहा हूं और कलमा क्या है?" गुरु जी के नेत्र सजल हो उठे। उन्होंने उसके चेहरे पर ढाल से छाया कर दी। इस तरह सिंघों को फतह हासिल हुई।

इन जंगों से सिक्ख जगत में आत्म-सम्मान जागृत हुआ। कम संख्या में होते हुए भी वे फतह हासिल करते गए। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की रहनुमाई में पंथ चढ़दी कला में रहा। शेष समय सिक्ख संगत को नाम-बाणी से जोड़ते हुए ४८ वर्ष ८ मास १५ दिन की आयु भोगकर गुरु जी मार्च सन् १६४४ ई. को कीरतपुर में परम ज्योति में विलीन हो गए। इससे पूर्व अपने पौत्र श्री (गुरु) हरिराय साहिब को गुरु-ज्योति के रूप में प्रतिष्ठित किया।

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" कृत भाई संतोख सिंघ के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन-व्यक्तित्व

*-स. कुलदीप सिंघ**

चूड़ामणि के खिताब से विभूषित भाई संतोख सिंघ ने अपने विस्तृत महाकाव्य "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" में गुरबाणी के रचयिता श्री गुरु अंगद देव जी से श्री गुरु अरजन देव जी तक का जीवन संक्षेप में प्रस्तुत किया है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के द्वारा गुरबाणी की रचना नहीं की गई। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन गुरबाणी का व्यवहार में रूपांतरण था। श्री गुरु अरजन देव जी ने एक आध्यात्मिक मंडल का वर्णन किया है जिसमें प्रभु के प्रिय भक्त निवास करते हैं। उस लोक में नाम की अमृत वर्षा है। हरि के रंग में रंगे संत भक्ति के गीत गाते और वीरतापूर्ण संघर्ष का आनंद उठाते हैं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन प्रभु की मीठी सहज कथा का सुंदर रूप था जिसे भाई संतोख सिंघ ने "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की छः रास (राशि) (क्रमांक ३ से ८), ३०० अध्यायों तथा १२५० पृष्ठों में अंकित किया है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने कर्म, प्रेम, रहस्य और दर्शन को आत्मसात करके पंथ की रहनुमाई की। बाबा बुड्ढा जी के विवेकपूर्ण वाक्य उल्लेखनीय हैं :

सूरज किरन सरब थल लागे।
तउ न लेप रंच भरि पागे।
भख अभख अगनि महि परै।
एक दोष भी छुयो न धरै ॥१७॥
तिमि तुमरी गति है सभि काल।
जानति हैं जिनि सुमति बिसाल। (रास ५/६६)

सुमति वाले विद्वान पुरुष श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पवित्र आचरण की गति जानते हैं। सूरज की किरण को किसी मैले स्थल का सम्पर्क नहीं छू पाता, न ही अग्नि भक्ष अथवा अभक्ष्य डाले जाने से किसी दोष से प्रभावित होती है। गुरु की नर-लीला देखकर मूर्ख लोग बुरा-भला कहने लगते हैं :

नर लीला जग पिखि कर सारे।
मूरख मति अपवाद उचारे ॥१८॥ (रास ५/६६)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन की नर-लीला में प्रभु की सहज कथा की झांकी प्रस्तुत करना भाई संतोख सिंघ का लक्ष्य है। भाई संतोख सिंघ ने विविध घटनाओं के संयोजन के द्वारा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब में मीरी (धीर उदात्त) तथा पीरी (धीर प्रशांत) के गुणों का समन्वय किया है। अपनी काव्य प्रतिभा और श्रद्धा के आधार पर भाई संतोख सिंघ ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को सजीव, अंग-संग सहाई होने वाले पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है।

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की रास ३ से ८ तक छः रासों में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन की किसी एक घटना, विकास अथवा परिवर्तन को गौरवपूर्ण रूप से प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि रास ३ का मुख्य भाग श्री गुरु अरजन देव जी से सम्बंधित है किंतु इसके आरंभ के १० अध्याय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जन्म सम्बंधी हैं :

सभि श्रोता बच कहति भे हाथ जोड़ हुइ दीन।
हरि गोबिंद के जनम की कहहु कथा परबीन ॥२५॥
(रास ३/१)

माता गंगा जी को श्री गुरु अरजन देव

**सी-१२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद-२११०१६, फोन : ०५३२-२६५७९६९*

जी ने महापुरुषों की सेवा की विधि बताई। माता जी ने आज्ञा-पालन किया। पैदल आते देखकर बाबा बुड्ढा जी स्वागत के लिए प्रेमपूर्वक उठे। माता जी ने सेवा में अनजान होने की क्षमा मांगी। तभी प्रकृति के शुभ लक्षण दिखाई दिये। आकाश में घने बादलों में बिजली का प्रकाश हुआ। बाबा बुड्ढा जी ने वीर पुत्र पैदा होने का वरदान दिया :

पिख लच्छन बिसमत हुइ हरखयो, 'हुइ है नंदन बल की रासि' ॥१६॥ *(रास ३/३)*

(इस स्थान पर इस समय गुरुद्वारा बीड़ साहिब बाबा बुड्ढा जी सुशोभित है।) बाबा बुड्ढा जी के वरदान के बाद श्री गुरु अरजन देव जी पारिवारिक कलह से बचने के लिए श्री अमृतसर के समीप वडाली गांव चले गए। वहां श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म १९ जून, १५९५ (आषाढ़ २१, १६५२) को हुआ। श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित शबद *"सतिगुर साचै दीआ भेजि"* तथा *"सगल अनंदु कीआ परमेसरि"* का उल्लेख श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जन्म की खुशी के सम्बंध में किया गया है।

वडाली में तीन वर्ष रहने के बाद श्री गुरु अरजन देव जी श्री अमृतसर आये। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को सीतला (चेचक) का प्रकोप हुआ। सातवें दिन स्वास्थ्य लाभ हुआ। इसका उल्लेख श्री गुरु अरजन देव जी की बाणी में भी है : *"नेत्र प्रगासु कीआ गुरदेव ॥"* भाई संतोख सिंघ ने अपना विचार दोहे में रखा है। सीतला से बचाने वाला परमेश्वर है :

सुनि देति धीर 'नहिं करहु त्रास।
इक पारब्रहम की धरहु आस।
गुरु नानक इन के नित सहाइ।
जिन नाम जपे सभि कषट जाइ ॥२०॥
(रास ३/१३)

रास तीन का आरंभ श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जन्म से सम्बंधित उलझनों के बीच सकुशल संपन्न हुआ। रास ४ के आरंभ में उनके विवाह का प्रस्ताव श्री गुरु अरजन देव जी के जीवन में कठिनाई के नए सूत्रपात का कारण बना। सम्राट जहांगीर के दीवान चंदू ने अपनी बेटी के रिश्ते का प्रस्ताव श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के लिए किया जिसे श्री गुरु अरजन देव जी ने अस्वीकार कर दिया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का विवाह डल्ला के निवासी भाई नारायण की पुत्री दामोदरी जी से १६०५ में हुआ। बारात श्री अमृतसर से सुलतानपुर होकर डल्ला पहुंची। वर-वधू का रूप वर्णन तथा लौटने पर श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन करने का वर्णन किया गया है।

रास चार के मध्य भाग में श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के प्रसंग हैं। शहादत के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की गुरगद्दी के समय दसतारबंदी की गई। उस समय से श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अखंड पाठ की परंपरा का आरंभ किया गया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब २५ मई, १६०६ को गुरगद्दी पर बैठे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने शूरवीरता के प्रतीक श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना १६०९ में की :

दसवी सुदी असाढ़ मझारी।
आदित वार तेज बल धारी।
उदयाचल तुल तखत बिसाला।
उदय आप जिम दिनकर बाला ॥

जिस प्रकार प्रात: काल के समय सूर्य लाल प्रकाश से चमकता आकाश के पूर्व क्षितिज पर प्रतिष्ठित होता है, उसी तरह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब असाढ़ सुदी १०, संवत् १६६६ को रविवार को श्री अकाल तख्त साहिब पर सुशोभित हुए। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सैनिक संगठन का कार्य आरंभ किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की यश-गाथा सुनकर चंदू को पुन: ईर्ष्या हुई। रास ४ के अंतिम २० अध्याय चंदू की श्री गुरु हरिगोबिंद

साहिब को मुगल शासक जहांगीर को हरकत में लाने तथा उसकी अनुसरण कार्यवाही का हिस्सा हैं। गुरु जी श्री अमृतसर से दिल्ली आए। जहांगीर के साथ शिकार खेलने आगरा पहुंचे। चंदू ने जहांगीर को अंधविश्वास में डाल कर गुरु जी को ग्वालियर में कैद करा दिया। कैद की अवधि का निर्धारण निश्चित नहीं हो पाया है। सूफी संत साईं मियां मीर जी ने जहांगीर से मिलकर गुरु जी के स्वभाव की महिमा बताई:

सहिज ब्रति ते नित चित सीतल।
मगन सदा आतम रस हीतल।
जीवन मुकति अवसथा झूलति।
वृति एक रस कबहू न भूलति ॥ (रास ४/६४)

साईं मियां मीर जी ने जहांगीर को आगाह किया कि जब वह हाथ जोड़कर गुरु जी से क्षमा मांगेगा तभी खता (अपराध) मुक्त होगा।

जहांगीर ने वजीर खां को दिल्ली से गुरु जी की मुक्ति के लिए ग्वालियर भेजा। तब 'बंदी छोड़' श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब सभी अन्य राजाओं को मुक्त करा कर दिल्ली आए। भाई संतोख सिंघ ने वजीर खां को गुरु जी के श्रद्धालु सिक्ख के रूप में दर्शाया है। वह गुरु जी के आध्यात्मिक स्तर का ज्ञानी है। श्री अमृतसर से दिल्ली आने पर वजीर खां ने गुरु जी की सेवा की तथा प्रभु की ज्योति मानते हुए सत्पुरुषों के अंदर व्यापक सत्ता के रूप में माना :

जिन के सदा सतो गुण लहो।
जन प्रेमी के उर नित रहो।
जो माने भाणा करतार।
तन हंता जुति तजे विकार ॥३१॥
सदा सुधीरज उर को हेरे।
तहां बास निज करहु बडेरे। (रास ४/५२)

ग्यालियर से रिहा होने के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन की सहज कथा राशि ५ में शांत रस की विविध धाराओं में बहकर वीर-रस के स्रोत तक पहुंचती है। गुरु जी दिल्ली से श्री अमृतसर होते हुए लाहौर पहुंचे। वहां पिता का शहीदी-स्थान देखा। शहीदी-स्थान पर मंजी स्थापित करके भाई लंगाह की सेवा-कार्य सौंपा :

निज कर सो करि मंजी थान।
बच लंगाह संग कीन बखान।
तू पितु को प्रिय रहु इह थान।
दीपक आदि सेव कहु ठानि ॥ (रास ५/४३)

गुरु जी ने कश्मीर-यात्रा की। लौटते समय बारामूला, तलवंडी होते हुए मरवी गांव में रुके। गुरु जी तरनतारन होते हुए डरौली गए जहां दामोदरी जी की बहन रामो और उनके पति साईंदास रहते थे। डरौली के बाद गुरु जी करतारपुर गए। करतारपुर के निकट के गांव से खान मुसलमान गुरु जी से मिलने आए। उन्होंने नवयुवक पैंदे खां को गुरु जी की सेवा में प्रस्तुत किया। पैंदे खां गुरु जी के साथ रहने लगा।

करतारपुर से पेहोवा जाते समय एक पिंगले की नेत्र-ज्योति चरण-रज से ठीक हुई:

धरयो उपानह गुर को चीन।
लै तिनि उंगरी घिसावन कीन।
जब नेत्रिम के बिचतिम पाई।
भाई अंजनु जनु प्रथम बनाई ॥ (अध्याय ३२)

पेहोवा से गढ़मुक्तेश्वर होते हुए श्री नानकमता साहिब गए। वहां सिद्धों के संवाद के बाद डरौली आए। डरौली में माता दामोदरी के घर पुत्र गुरदित्ता जी का जन्म हुआ। डरौली निवास के बाद श्री अमृतसर आकर बाबा गुरदित्ता जी को माथा टिकाया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की कश्मीर-यात्रा का कारण श्रीनगर में सेवादास की माता भागभरी का उत्कट प्रेम था। वह प्रभु के गुणों का विचार करती थी और दर्शन की उत्सुक थी। गुरु के गुण गाते हुए उसने रूई की कताई की। सूत से सुंदर वस्त्र बनवाए :

सुनहु प्रभु मम बैस बिहाई।
गुर दरसन इछ है अधिकाई।
मरण परयंत आस मैं करिहो।
निस बासर सिमरन मन धरिहों ॥
(अध्याय ४७/४०)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब वजीराबाद होते हुए श्रीनगर पहुंचे। वे माता भागभरी के मकान के पास हरीपर्वत के किले के दरवाजे पर पहुंचे। भागभरी का मनोरथ सफल हुआ :

सने सने सामीपी होइ।
कर महि गहि पद पंकज दोइ।
सिर धरि धरि पर कर परिनामा।
देखत पुन सरूप अभिरामा ॥
अंतर जाइ बसतु को लिआई।
जिस पर अधिक सुगंध सिचाई।
करहि सीघ्रता धरयो अगारी।
हाथ जोरि पुन बंदन धारी ॥ (अध्याय ४९/२५)

भागभरी ने निर्मल जल लिया। उसने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के चरण-कमलों का प्रक्षालन किया। उस निर्मल जल को जब अपने मुख में डाला तो अंतःवृत्ति एकाग्र होकर परमात्मा से तादात्मय हो गई। दिव्य दृष्टि से उसे वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो गया :

पुनि बिरधा निरमल जल लीने।
पद अरबिंद पखारन कीने।
सो लै जब अपने मुख डारा।
दिब द्रिसटि होई लखि सारा।
रूप वासतव आपन जाना।
उर आनंद अंत लगि धिआना ॥ (अध्याय ४९/२९)

रास पांच में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के घटनाक्रम में एक विशेष मोड़ अध्याय ६३ में लक्षित होता है। बाबा बुड्ढा जी ने माता गंगा जी (सुपत्नी श्री गुरु अरजन देव जी) को शांति-रस का प्रतीक माना है। माता गंगा जी का परलोक-गमन गांव बकाला में एक श्रद्धालु सिक्ख के घर में हुआ। भविष्य-दृष्टा बाबा बुड्ढा जी ने यह इच्छा व्यक्त की कि वे अब निर्जन स्थान में प्रभु-चिंतन करेंगे :

इक दिन भाई बिरध बखाना।
रावर करने कौतुक नाना।
अब करने बहु जंग अखारे।
समय भयो प्रापति इस बारे ॥१५॥
मात गंग अब तन कउ तिआगयो।
तबि लगि वीर रस नहिं जाग्यो।
हुईअ बिघन अनेक प्रकारे।
कारन प्रथम शसत्र तुम धारे ॥१६॥
(अध्याय ६३/१५, १८)

वीर-रस भरे संदर्भ में पैंदे खां का भी उल्लेख है :

आयुध विदिआ बहु अभिआसे।
करहि सुभट बहु करहि तमासे।
पैदा खां वीर रस होवा।
जिसके सम को दुतिय न होवा ॥

उक्त अध्याय में श्री गुरु तेग बहादर जी का वीरतापूर्ण उल्लेख के साथ जन्म का उल्लेख है:

बालक जनमयो भयो अनंदु।
रखिबे हित जग वीर ज हिंद।
जिन के सभ जग भयो न कोइ।
पर हित सीस दियो जिनि जोइ ॥ (अध्याय ६३/३६)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का गुरगद्दी-काल का पूर्वार्द्ध (१६०५ से १६२७) जहांगीर के शासन-काल का था। इस अवधि में शासन के साथ युद्ध नहीं हुए। युद्ध की अनिवार्यता शाहजहां के शासन से आरंभ हुई। "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" में युद्ध की औपचारिक घोषणा रास छः से नारद के द्वारा कलह के आह्वान से की गई है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब शिकार खेलने जाते हैं। वहां सिक्ख शाही बाज को पकड़ने में समर्थ हो जाते हैं। गुरु जी पांचों गुरु साहिबान की वंदना विघ्न-नाश के लिए करते हैं। मुगल सेना का संचालन मुखलिस खां ने किया। युद्ध

लोहगढ़ में हुआ। मुखलिस खां मारा गया।

लोहगढ़ युद्ध के बाद गुरु जी ने शहीदों का दाह संस्कार किया तथा झबाल ग्राम पहुंचे जहां बेटी वीरो का विवाह सम्पन्न किया। शाहजहां उस समय लाहौर में था। उसका क्रोध वजीर खां ने शांत किया।

लोहगढ़ के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का द्वितीय युद्ध श्री हरिगोबिंदपुर में हुआ। श्री गुरु अरजन देव जी ने इस नगर की नींव रखी थी। वहां के भूमि अधिपति शाही मालगुजार भगवान दास घेरड़ ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का विरोध किया। वो मारा गया। फिर घेरड़ के पुत्र रतन चंद और चंदू के पुत्र करम चंद ने जलंधर के सूबेदार अब्दुल खां को युद्ध के लिए प्रेरित किया। युद्ध में अब्दुल खां अपने दो भाइयों और दो पुत्रों सहित मारा गया। युद्ध के बाद नगर निरीक्षण किया गया तथा नगर में एक मस्जिद का निर्माण कराया गया।

रास ६ में लोहगढ़ और श्री हरिगोबिंदपुर के युद्धों के उपरांत गुरु जी के चरित्र के गुणों पर प्रकाश डालने वाली घटनाएं हैं। सभागा नाम का सिक्ख गुरु जी के लिए पांच घोड़े लाया। गुरु जी ने ३ घोड़े भाई बिधीचंद, बाबा गुरदित्ता जी और पैंदे खां को दिये। एक घोड़ा भाई गोपला को जपु जी साहिब का शुद्ध पाठ करते समय अंत में घोड़े की कामना करने के कारण दिया।

रास ६ के अध्याय ४९ और ५३ में बाबा बुड्ढा जी के परलोक-गमन सम्बंधी विवरण है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा जी के मुख से तीन गुरु साहिबान के विशेष विवरण सुने। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्रद्धापूर्ण वचनों का उच्चारण किया :

सुनि स्री गुर शुभ उत्तर दीना।
तुम सिखी मुख उज्जल कीना।
रावर को आचरन गहैंगे।
सो सिख अघ बहिन दहैंगे ॥३०॥ . . .
तोह नाम लै सिखी धरैं।
कहो किओं न भवसागर तरैं ॥३१॥ (अध्याय ५३)

बाबा बुड्ढा जी ने अंतिम श्वास १६३१ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की गोद में लिए।

गुरु जी ने दीपावली त्यौहार श्री अमृतसर में मनाया। परिवार का मिलन हुआ। गुरु जी ने बाबा गुरदित्ता जी को करतारपुर भेजा जहां पौत्र धीरमल का जन्म हुआ।

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की रास ७ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की जीवन-गाथा का विकास चार मुख्य धाराओं में है--पारिवारिक घटनाक्रम, भाई गुरदास परीक्षा, भाई बिधीचंद घोड़ा अपहरण तथा भाई साधू और रूपा से जल ग्रहण करना।

पारिवारिक घटनाक्रम में गुरु जी के द्वितीय पुत्र बाबा सूरज मल की सगाई (अध्याय १) तथा शादी का (अध्याय ६-८) वर्णन है। गुरु जी चारों पुत्रों समेत बाबा श्रीचंद के साथ भेंट करने गए तथा बाबा श्रीचंद को अपना बेटा भाई गुरदित्ता सौंप दिया। भाई गुरदित्ता जी ने करतारपुर नगर बसाया। वहां बुड्ढणशाह फकीर चिर-काल से बकरी का दूध लेकर विश्राम कर रहा था। गुरु नानक साहिब के वर के अनुसार भाई गुरदित्ता जी ने दूध ग्रहण किया :

उठहु संत जी पै मुझ दीजै।
गुरसुत अहै छुदित लख लीजै।

करतारपुर में श्री गुरू हरिराय साहिब का जन्म हुआ :

स्री गुरदिता सभि सुख दै के।
नर सकेलि करि तहां बसै के ॥
बसै आप भी बहु सुख पाइ।
सभि की सुधि सभह चित लाइ ॥
धरे गरभ नेती बडभागन।
बसहि सदा गुर की अनुरागन।
पात साह सप्तम प्रसूत।

बधत चंद सम गरभ सपूत ॥ (अध्याय ९/६४)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब श्री अमृतसर पहुंचे। पुनः तीर्थ-यात्रा में चोहिला साहिब परिवार सहित पहुंचे। वहां से डरोली गए। डरोली में माता दामोदरी जी का परलोक गमन हुआ। पारिवारिक शोक की कड़ी में माता दामोदरी जी की बहन बीबी रामो, बहनोई भाई साईंदास, पिता भाई नारायण दास तथा माता दया कौर के परलोक-गमन ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को वैराग्यमय बना दिया:

देखहु जग सनेहु की चाली।
इक दिन भरे एक दिन खाली।
कबहुं हरे सुसक कब जावहि।
कबहु जनम कबहु बिनसावहि ॥७॥
कब मेला कब विरह दुहेला।
कब संकट कब होत सहेला।
सदा प्रणामवंति जग अहै।
नही एक दस थिरता लहै ॥८॥
मिलबे ते हरखहि नहि गिआनी।
विछरे शोक न दुख को जानी।
लखहि कूर नहि करहि सनेहा।
बिनसि जाइ जबि किओं दुख लेहा ॥९॥
जो वसतू नित इक रसि रहै।
करि अनुराग तिसै उर लहै।
सदा शांति चित संत उदारा।
तिन को बंदन अहै हमारा ॥१०॥
बसिबो इस थल मोहि न भावै।
साई दास द्रसटि नहि आवै।
रामो सहित सेव को ठाने।
नित नूतन मन प्रेम महाने ॥११॥ (अध्याय २३)

पारिवारिक घटनाओं के आरंभ में बाबा सूरज मल की सगाई और शादी के मध्य के अध्याय २-४ में भाई गुरदास जी के गुरु में विश्वास की परीक्षा है। अगर गुरु स्वांग करता है तो सिक्ख को विश्वास नहीं खोना चाहिए। भाई गुरदास जी के इस कथन को श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने परखा। उन्होंने भाई गुरदास जी को घोड़ा खरीदने को काबुल भेजा, किंतु भुगतान के समय सोने की अशरफी के बदले मिट्टी की ठीकरी का भ्रम पैदा कर दिया। भाई गुरदास जी को गुरु-महिमा का अनुभव हुआ। भाई गुरदास जी को क्षमा किया गया। दैवयोग से कुछ दिनों बाद भाई गुरदास जी का परलोकवास हुआ। उनका दाह संस्कार गोइंदवाल में किया गया।

रास ७ के उत्तरार्द्ध में भाई बिधीचंद के अनोखे साहस का नाटकीय वर्णन है। काबुल के मसंद बखतमल तथा ताराचंद गुरु जी के लिए घोड़े ला रहे थे। रास्ते में शाहजहां के कर्मचारियों ने घोड़े का अपहरण किया और घोड़े शाहजहां के पास पहुंचा दिये। भाई बिधीचंद ने लाहौर रहकर घास खोदने का काम किया और एक घोड़ा लाने में सफल हो गया। पुनः बिधीचंद खोजी के रूप में पहुंचा तथा दूसरा घोड़ा भी प्राप्त करने में सफल हो गया। दूसरा घोड़ा लाते समय भाई बिधीचंद ने घोषणा की:

मै गुरदास बिधीचंद नामू।
लै गमनयो पूरब अभिरामू ॥३८॥
हय दिलबाग रुदन बहु कीना।
खान पान सरब करि नहि लीना।
या ते इह घोरे हित आयो।
तन खोजी का भेस बनायो ॥३९॥
मैं तसकर सतिगुर पति मेरा।
नहि बिसरहु लखि नाम वडेरा।
अब गुल बाग जीन को पाइ।
तुमने दीनसि मति उप जाइ ॥४०॥ (अध्याय ३६)

भाई बिधीचंद विनम्रता के साथ गुरु जी के समक्ष हाजिर हुआ। घोड़ा अपहरण के बाद शाहजहां के कर्मचारियों में हलचल मच गई। लला बेग के नेतृत्व में ३५००० की सेना भेजी गई। पहले लला बेग का भतीजा काबल बेग मारा गया, फिर बिधीचंद के द्वारा लला बेग का

भाई कासम बेग मारा गया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने ललाबेग के विरुद्ध द्वंद युद्ध का अखाड़ा संभाला और विजय प्राप्त की। यह युद्ध महिराज (तहसील रामपुरा फूल, जनपद बठिंडा) से तीन किलोमीटर दूर १६ दिसंबर, १६३४ को हुआ। वर्तमान समय में प्राकृतिक सुषमा से घिरा 'गुरुद्वारा गुरूसर' शोभायमान है।

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की रास ७ के ३ मुख्य घटना-प्रसंगों के साथ भाई साधू और रूपा का उल्लेख तथा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का सिक्खों के प्रति प्रेम का मार्मिक उदाहरण है। रास ५ में भागभरी की वस्त्रों की प्रेम-भेंटा प्राप्त करने के लिए कश्मीर-यात्रा का वर्णन किया जा चुका है। रास ७ में पारिवारिक घटनाक्रम में डरोली में भाई साईंदास के पास रुके थे। भाई साईंदास का गुरु जी के स्वभाव का कथन मार्मिक है:

राज समाज दरब नहिं हेरो।
लखहु न साक संबंध बडेरो।
जहां प्रेम को चितहु गुसाई।
सभ तिआगहु तहि पहुंचहु जाई ॥ (अध्याय १७)

गुरु जी ने डरोली के समीप आकल गांव के बढ़ई साधू की कन्या को गुरसिक्ख पुत्र का वरदान दिया। बच्चे का नाम रूपचंद रखा गया। समय पाकर रूपा बड़ा हुआ। साधू और रूपा लकड़ी काट रहे थे। प्यास से उनके गले सूख गये थे। शीतल जल पाकर उन्होंने नहीं पिया, क्योंकि वे चाहते थे कि इस शीतल जल का गुरु जी पान करें। पिता-पुत्र हाथ जोड़कर खड़े थे। गुरु जी उनके प्राणों की रक्षा के लिए अकेले आये और घोड़ों को उनकी ओर प्रेरित किया तथा जल की याचना की :

गहि रकाब सतिगुरु उतारे।
तन के बसन प्रिथी पर डारे।
हाथ जोर ऊपर बैठाए।
पातन को दोना कर लिआए ॥४९॥
तब रूपे जल तरे उतारा।
भर डोन साधू कर धारा।
स्री हरिगोबिंद को पकरायो।
करयो पान पुन वाक अलायो ॥५०॥
जल ऐसो कबि पीओ न आगे।
किनही न दीनरि कर अनुरागे।
अधिक त्रिखा करि पान मिटाई।
अब तुम पियउ जियउ सुख दाई ॥५१॥ (अध्याय १९)

"श्री गुर प्रताप सुरज ग्रंथ" की रास ८ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की जीवन-घटनाओं को समेटा गया है। इस रास में पुत्रवत् पाले गये पैंदे खां के चरित्र की कमजोरी को दर्शाया गया है। श्री गुरु तेग बहादर जी की शादी के समय पैंदे खां को घोड़ा और पोशाक उपहार में दी गई। गुरु जी के सफेद बाज को पैंदे खां ने छिपा दिया। उसने झूठी शपथ लेकर कहा कि मैंने बाज की छाया तक नहीं देखी। पैंदे खां की बेमुखता देख कर भाई बिधीचंद ने बाज प्रस्तुत कर दिया। पैंदे खां की शिकायत से पुनः युद्ध हुआ। पैंदे खां की मृत्यु गुरु जी की तेग से हुई। गुरु जी की तेग कलमा (प्रार्थना) के समान है जो जीवन के मोह से बचाती है। मिश्र देश की भांति की मिसरी (तलवार) कलमा के समान मीठी है। उक्त वचन पैंदे खां ने दीन हो मरते समय गुरु जी रहबर के रूप में कहे। पितृ-वात्सल्य से द्रवित श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का हृदय कलिंग युद्ध के बाद सम्राट अशोक के समान शस्त्र-त्याग के लिए अभिभूत हो उठा :

सिपर साथ कीनस तब छाया।
होत बदन पर घाम मिटाया।
देखति खरै आसू दग झरैं।
पैदा खां के मुख पर परै ॥५॥
जिस कासट को पाल बधावै।
अपना जान तिह जल न डुबावै।
तरफत परचो छिनक मै मरयो।

सतिगुर नेह अधिक उर करयो ॥६॥
तिआगहि समत्र मनोरथ धारा।
हते हमहु नर तुरक हजारा।
प्रति पारयो निज कर ते घायो।
इतयादिक बहु दोष उपायो ॥
तज अब देत तउ कठनाई।
लरन हेतु सेना समुहाई।
सकल कहै चासति तज दए।
इमि विचार नहि तिआगत भए ॥८॥ (अध्याय २८)

बाबा गुरदित्ता जी के परलोक-गमन के बाद उनके बड़े पुत्र धीरमल की कठोरता का वर्णन है। वह करतारपुर ही रहा और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के साथ कीरतपुर नहीं गया। बाबा गुरदित्ता जी के छोटे सपुत्र श्री (गुरु) हरिराय साहिब का स्वभाव कोमल था, शोक की घड़ी में उनका मुख मुरझा गया :

स्री हरि राइ पिता को देखि।
अरु रोदति परिवार विसेख।
अलप बैस में मुख मुरझायो।
कहै बदन कुछ बाक न आयो ॥२३॥ (अध्याय ३८)

पैंदे खां के प्रसंग के बाद सन् १६३४ में गुरु जी कीरतपुर के लिए तैयार हुए। कीरतपुर पहुंचने से दो कोस पूर्व उनके घोड़े की मौत हुई। धीरमल ने शाहजहां को युद्ध में हार का समाचार भेजा। वजीर खां का वक्तव्य गुरु जी के पराक्रम का संक्षेप में कथन है :

मुगलस खां पुन अबदुल खान।
लला सु कंवर सैन महान।
बनि पैदा अब नमक हरामी।
तुमारो लसकर कर अनुगामी।
मरयो जाइ कुछ सकी न कारा।
जे गुर संग लगे जग सारा।
तउ न जीत सके मरि रहे।
कहा बात तुम लस कर अहै। (अध्याय ३४)

समय बीतने पर गुरु जी को परलोक-गमन का आभास हुआ। उन्होंने बाबा बुड्ढा जी के पुत्र बाबा भाना जी को श्री गुरु हरिराय साहिब की दसतारबंदी करने का आदेश दिया। सभी लोगों को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे श्री गुरु हरिराय साहिब को गुरगद्दी दी गई हो। कीरतपुर में दीपकों से प्रकाश किया गया। गुरु जी के निकट रहने वाले सिक्खों में भाई जोध, भाई रूपा और भाई भाना विशेष श्रद्धा के पात्र थे। श्री गुरु हरिराय साहिब की गद्दी का खुशी मनायी गयी। गुरु जी ने बाबा सूरजमल को सिक्खी का वरदान दिया। माता नानकी जी की झोली में रुमाल डाल दिया और पुत्र को गद्दी से होने वाले कष्टों का उल्लेख किया :

सहि शरीर पर कषट अनेक।
तव सुन राखहि गुरुता टेक।

गुरु जी के ज्योति-जोत समाने के स्थान पर वर्तमान समय में 'गुरुद्वारा पतालपुरी' (कीरतपुर) स्थित है।

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" के सम्पूर्ण कथा नियोजन में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन-वृत्त ग्रंथ के मध्य में एक धुरी के समान है। शांति-रस का कथा-प्रवाह रास ५ के अध्याय ६२ तक है और वीर रस का आरंभ रास ६ से होता है। इस प्रकार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन की घटनाओं का पर्याप्त अंश वीर रस के उत्साहपूर्ण वृत्तांतों से पूर्ण है।
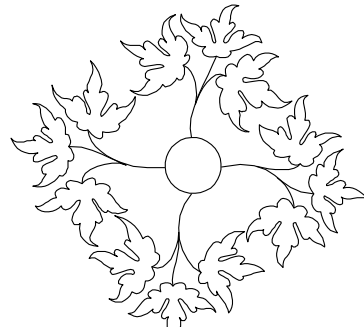
"तवारीख गुरू खालसा" कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन-परिचय

*-डॉ. परमवीर सिंघ**

श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत ने सिक्ख धर्म को नया मोड़ प्रदान किया। शांति और सद्भावना वाली जीवन-जाच द्वारा समझने-समझाने का सिलसिला लगभग समाप्त हो गया था, जिसको श्री गुरु अरजन देव जी स्वयं भी अच्छी तरह समझ गए थे लेकिन गुरु जी शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहते थे। इस रचना में बताया गया है कि गुरु जी ने सिक्खों को वचन किया, "असां शसतर पकड़ने हैन सो गुरू हरिगोबिंद दा रूप धार कर पकड़ने हैन। समय कलयुग दा वरतना है। ससत्रों दी विदिआ कर मीर दी 'मीरी' खिच लैणी है ते शबद दी प्रीत समझ कर 'पीरी' लै लैणी है। तुसां छेवीं पातशाही दे हजूर रहिणा।"

श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब का जन्म गांव (गुरु की) वडाली, जिला श्री अमृतसर में श्री गुरु अरजन देव जी और माता गंगा जी के घर हुआ। ज्ञानी जी उनकी तीन शादियों का जिक्र करते हैं जिनसे पांच पुत्र--बाबा गुरदित्ता जी, बाबा अणी राय जी, बाबा सूरज मल जी, बाबा अटल राय जी और श्री (गुरु) तेग बहादर साहिब पैदा हुए और इन पांच पुत्रों के अलावा उनके घर एक लड़की बीबी वीरो जी का भी जन्म हुआ।

श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के उपरांत जब १६०६ ई में विधिवत तरीके से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब गुरगद्दी पर विराजमान होने लगे तो उन्होंने सेली टोपी की जगह शस्त्र पहनाने को कहा। गुरु जी ने दो तलवारें धारण कीं जिसका जिक्र इतिहास की रचनाओं में आम मिलता है। गुरु साहिब ने सिक्खों को शस्त्र धारण कर गुरु-घर आने का आदेश किया और सिक्ख संगत में जोश एवं उत्साह पैदा करने के लिए ढाढियों ने वारों का गायन आरंभ कर दिया। तख्त दुनियावी बादशाह की निशानी होता है। गुरु जी ने सिक्खों के मन से दुनियावी बादशाहों का डर खत्म करने के लिए अकाल बुंगे की नींव रखी जो कि पंथ में 'श्री अकाल तख्त साहिब' के नाम से प्रसिद्ध है।

गुरु-घर के विरोधी पहले ही ऐसी साजिशें बना रहे थे जिससे गुरमति का प्रचार और प्रसार खत्म हो जाए। श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत ऐसी साजिशों का एक हिस्सा थी। गुरु-घर के विरोधियों ने जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को जोर पकड़ते देखा तो वे फिर क्रियाशील हो गए। लेखक बताता है कि विरोधियों ने लाहौर के सूबेदार कासिम बेग खां के पास रिपोर्ट दर्ज करवाई कि "गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने पहले गुरुओं की मर्यादा पीरों-फकीरों वाली छोड़कर हमलावरों वाला तरीका पकड़ रखा है और एक चबूतरे का नाम 'अकाल तख्त' रखकर वहां सभा लगाकर हाकिमों जैसा इंसाफ करता है और सारे देश के झगड़े खुद निपटाता है। शस्त्र-विद्या सीखने का उपदेश कर जंगी फौज और सामान इकट्ठा कर रहा है। सारा पंजाब इनका मुरीद है। सैंकड़े

**सिक्ख विश्वकोश विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो: ९८७२०-७४३२२*

चोर, हमलावर इनके पास आए रहते हैं। यदि अब इनका बंदोबस्त न किया गया तो अवश्य कलेश बढ़ेगा।"

बादशाहों को बहुत सारे काम अपने वजीरों की सलाह के अनुसार करने पड़ते हैं। वजीरों की नीति हमेशा अपने विरोधियों को दबाकर रखने की होती थी ताकि कभी उनकी किसी गलत बात का बादशाह को पता न लग जाए और उसके क्रोध का सामना न करना पड़े। गुरु-घर के विरोधियों का पूरा यत्न था कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब कहीं जोर न पकड़ जाएं या बादशाह की उनके साथ निकटता न पैदा हो जाए। इस कारण वे हमेशा गुरु साहिब के विरुद्ध बादशाह के कान भरते थे। इसका नतीजा यह हुआ कि गुरु साहिब को ग्वालियर के किले में कैद होना पड़ा। गुरु जी का किले में कैद होना सुनकर पंजाब की सिक्ख संगत ग्वालियर आने लगी। निष्पक्ष सोच वाले धार्मिक पुरुषों को भी यह बात अच्छी नहीं लगती थी कि बादशाह किसी के उकसाने पर किसी धार्मिक हस्ती को कैद कर ले। लेखक बताता है कि साईं मियां मीर जी ने बादशाह को सारी बात समझाई, तब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की रिहाई संभव हो सकी। रिहाई के अवसर पर गुरु जी के साथ अन्य रियासतों के बावन राजाओं को भी रिहाई मिली। इस रिहाई से गुरु-घर के विरोधियों में निराशा फैल गई और गुरु जी का प्रताप दूर-दूर तक फैल गया। इसका वर्णन करते हुए लेखक बताता है कि "राजाओं को छुड़ाने के कारण गुरु साहिब का यश सभी प्रदेशों में पूर्णमाशी के चांद की भांति प्रकाशित हो गया और दिल्ली शहर के लोग, क्या सिक्ख क्या मुसलमान, सभी दर्शन करने आए।

अनंत प्रकार का अनाज, कीमती वस्तुएं और नकदी पेश की। "धन्य सतिगुरु सचे पातशाह! धन्य सतिगुरु सचे पातशाह!" यही धुनी जगह-जगह फैल गई। गुरु जी के श्री अमृतसर पहुंचने पर सिक्खों ने दीपमाला की।

गुरु जी के बादशाह के साथ संबंधों में मिठास आई और देश-रटन के कई अवसरों पर वो गुरु जी को अपने साथ भी लेकर गया। चंदू को सिक्खों के हवाले कर दिया गया और उसका दुखदायी अंत हुआ, जिसका कि वह हकदार भी था। गुरु जी का श्री अमृतसर आना सुनकर दूर-नजदीक से सिक्ख संगत गुरु-दर्शन को आने लगी जिससे श्री अमृतसर में रौणक बढ़ने लगी। नई और बढ़िया किस्म के हथियार व घोड़े लेकर सिक्ख गुरु-घर आने लगे। गुरु जी भी सिक्खी प्रचार के लिए दूर-नजदीक के स्थानों पर चले जाते थे। गुरु जी की इन प्रचार-फेरियों से सिक्ख संगत में ज्यादा वृद्धि हो रही थी। क्या हिंदू क्या मुसलमान, जो भी गुरु जी के दर्शन करते, उनके ही होकर रह जाते। आम सिक्ख संगत के अलावा पीर-फकीर, साधू, विद्वान आदि भी गुरु जी के पास आते और आध्यात्मिक विचारें करते। जिस-जिस संत महापुरुष के साथ गुरु जी की विचारें हुईं उनमें से लेखक ने कुछ नाम इस तरह बताए हैं : बाबा जवंदा वाही क्षत्री हुरमची मुहल्ले वाला, भाई बांका अरोड़ा शहालमी दरवाजे दा, सवामी साहिब ब्राहमण, जग्गा क्षत्रीय गुमटी व महल्ले दा, दिले राम दीवान, भाई रूपा अरोड़ा, नत्थू मल्ल ब्राह्मण, जौड़े मोरी दा काहना भगत वतयां दे वेहड़े दा, बाबा मलेरा क्षत्री सूतर मंडी का, छज्जू भगत भाटिया, शाह इनायत कादरी, शाह मुहम्मद गौंस, शेख अबदुल, शाह हुसैन, दास वैरागी भैरो नाथ, सबुध नाथ जोगी, साईं मियां

मीर, जहांगीर शाह, भगवान दास गुंमटाले वाला, नरैण दास पंडोरी वाला, लाल दास धियानपुर वाला, पीर हसन अली आदि।

लेखक ने कुछेक गोष्ठियों को कलमबद्ध भी किया है जिनमें से गुजरात नगर के एक फकीर जहांगीर शाह के साथ हुई चर्चा प्रसिद्ध है जिसमें शाह ने गुरु जी से पूछा था "हिंदू क्या और पीर क्या? औरत क्या और फकीर क्या? दौलत क्या और त्याग क्या? लड़के क्या और वैराग्य क्या? आरिफ क्या और दुनियादार क्या? मजहब क्या और सचियार क्या? पुजारी क्या और सवाब क्या? मारुस्थल क्या और आब क्या?" इसके उत्तर में गुरु जी के कहा--"पीरी रब का दान है। औरत ईमान है। दौलत गुजरान है। पुत्र निशान है। आरिफ बीचार है। मजहब सुधार है। पुजारी आचार है। मारुस्थल में जल कुदरत (करतार) है।"

गुरु-घर आने वाला प्रत्येक मनुष्य उनकी चुंबकीय शख्सियत से प्रभावित हुए बगैर न रहता। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी से पहले श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा समूह वर्गों के लिए सर्वसांझे धार्मिक स्थान श्री हरिमंदर साहिब की स्थापना और उसमें जनसाधारण के मार्गदर्शन के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब की स्थापना ने लोक-मनों में प्रेम और भाईचारे के प्रति दृढ़ता के साथ-साथ गुरु-घर के प्रति श्रद्धा और सत्कार की भावना पैदा की थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब श्री गुरु ग्रंथ साहिब में रचित गुरमति सिद्धांतों को बहुत सरल भाषा-शैली में लोक-मनों में उतार देते थे। सतिसंगत के महत्व पर रोशनी डालते हुए गुरु जी बताते हैं कि 'दवाइयां एवं किताबें वैदगी की कितनी भी तैयार हों लेकिन वैद के बिना रोगी का रोग दूर नहीं होता।' श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब एक बहुत ही महत्वपूर्ण साखी के द्वारा यह सारा वृत्तांत समझाते हैं 'कि किसी कुएं में बिल्ली गिर गई। पूछने गए को पंडित ने कहा, बिल्ली बाहर निकालकर पचास कमंडल जल के भी बाहर निकाल देन। उसको बिल्ली बाहर निकालनी याद न रही लेकिन पानी बाहर निकाल दिया। कुएं में से बदबू न गई। पंडित के दोबारा कहने पर फिर सौ कमंडल पानी बाहर निकाला। इसी तरह फिर पांच सौ कमंडल पानी निकाला, परन्तु बदबू फिर भी न गई। अंततः बिल्ली निकाली गई तो जल पवित्र एवं स्वादिष्ट हो गया और बदबू भी चली गई।'

गुरु जी ने ब्रह्म-ज्ञान के द्वारा अविद्या और हउमै पर काबू पाने के लिए कहा। गुरु साहिब ने ब्रह्म-ज्ञान ग्रहण करने और प्रभु-प्रेम पैदा करने पर बल दिया। ज्ञान और प्रेम के सुमेल के बारे में गुरु साहिब बताते हैं कि केवल घी खाया हुआ खांसी, बदहजमी आदि अनेक विकार पैदा करता है और मिशरी के साथ मिलाकर खाया हुआ घी अनेक गुण पैदा करता है। अतः ज्ञान घृत प्रेमा-भक्ति मिशरी है। गुरु जी की संगत में रहने वाले सिक्ख दुनियावी पदार्थों के अनावश्यक मोह या लगाव से मुक्त हो गए हैं और मृत्यु को नए जीवन का आरंभ समझने लगे थे। उनके मन में गुरु के प्रति विश्वास और गुरु के हुक्म अनुसार लड़-मरने का जज़बा भारी हो गया था। ऐसी ही एक मिसाल हमें भाई बिधीचंद के जीवन में देखने से मिलती है। जब लाहौर के सूबे के अस्तबल में से एक घोड़ा लेकर भाई बिधीचंद गुरु साहिब के पास भाई रूपे गांव में पहुंचा तो गुरु जी ने उसे सीने से लगाया और कुछ मांगने को कहा। एक सच्चा सिक्ख गुरु जी से क्या मांग करता है, उसका विवरण देते हुए लेखक बताता है कि

भाई बिधीचंद ने गुरु जी से विनती की कि "मुक्ति तो पहले ही प्राप्त है, अन्य कूड़ पदार्थ क्या मांगने हैं? यदि कृपा में आए हो तो सतिगुरु का अंग, साधू का संग, नाम का रंग, निश्चय अभंग बना रहे।"

गुरु जी के सरल उपदेशों से प्रभावित होकर बहुत सारे हिंदू और मुसलमान गुरु-घर से जुड़ने लगे थे। मुसलमानों का बड़ी संख्या में गुरु-घर का श्रद्धालु बनना शराअ में विश्वास वालों के लिए खतरे की घंटी था और उन्होंने समय के बादशाहों को गुरु-घर के विरुद्ध भड़काने का कार्य किया। इस प्रसंग में बीबी कौलां जी का नाम विशेष तौर पर उजागर किया जाता है। कहा जाता है कि बीबी कौलां एक काजी की बेटी और गुरु-घर की श्रद्धालु थी। काजी ने शराअ में ईमान रखते हुए अन्य काजियों की तर्क पर उसके खिलाफ फतवा जारी करवा दिया। जब इस बात का पता साईं मियां मीर जी को लगा तो उन्होंने बीबी कौलां को काजी के घर से निकालकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पास भेज दिया। उसके बाद बीबी कौलां ने अपना सारा जीवन गुरु जी के प्रति श्रद्धा प्रकट करते हुए श्री अमृतसर में ही गुजार दिया। गुरु जी ने उसके नाम को सदीव जिंदा रखने के लिए एक सरोवर का निर्माण करवाया जिसका नाम 'कौलसर' रखा गया। यह सरोवर आज भी मौजूद है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब शांतमयी जीवन-जाच के समर्थक थे। उनके विरोधी उनकी चढ़दी कला और दिन-ब-दिन बढ़ रही संगत की हाजरी से घबरा रहे थे। गुरु-घर के साथ ईर्ष्या रखने वाले हिंदू और मुसलमान विरोधियों की तरफ से गुरु साहिब के विरुद्ध सांझे यत्न आरंभ किए गए। गुरु जी किसी भी तरह से जंगों-युद्धों के पक्ष में नहीं थे, लेकिन यदि कोई उनके विरुद्ध लड़ाई के विचार अधीन खुद चलकर अथवा आक्रमणकारी बनकर आता तो उसके विरुद्ध जूझने का प्रण करते हुए उन्होंने सिक्खों को आदेश भी दिए।

यह बात किसी से छुपी हुई नहीं है कि जंगों-युद्धों में आम लोगों की क्या हालत होती है। लेखक बताता है कि ऐसी परिस्थितियों के बारे में जानकारी रखने वाले गुरु जी ने गिरे हुए, हथियारहीन, बालक, वृद्ध, रोगी, शरणागत व स्त्री पर वार करने से मना कर दिया। इक्का-दुक्का झड़पों के अलावा गुरु जी को चार बड़े युद्ध--श्री अमृतसर, श्री हरिगोबिंदपुर, महिराज, करतारपुर के स्थानों पर करने पड़े तथा प्रत्येक युद्ध में उनको सफलता मिली। लेखक बताता है कि युद्ध जीतने के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब "जै होई सतिगुर नानक देव जी दी" का जैकारा छोड़ते थे। इन युद्धों में अकाल पुरख का आसरा लेते हुए गुरु जी की बख्शिश सदका सिक्खों ने अनेक कौतुक दिखाए। उनमें से बहुत सारे आखिरी श्वास तक लड़ते हुए शहीद हुए। लेखक ने बहुत सारे सिक्खों के नाम दिए हैं जो गुरु जी की सेवा में आए और जिन्होंने गुरु-आदेश के अनुसार अपना जीवन धर्म की रक्षा में लगा दिया। जिन सिक्खों के नाम लेखक बताता है वे इस प्रकार हैं--अघड़ी, अजित्ता, अब्दुल्ला ढाढी, अमीआ, आकल, अब्बलखैर गिल, सकतू, सनमुख, सरहाली, सरना, सरमुखदेउ, सराफ, सलेमशाह (भाई), साधू, साईं दास, सिंघा, सीतल दास (दीवान), संतू, सुंदर, सुंदर दास (पूरबिया), सूरतीआ (मसंद), सूरा, सूबा, सेठी क्षत्री, सेमा, सेवादास, सोढी बदली, सोधा, सोभा, सीहां, शीहां (चौधरी), शेरू (भाई), हरदास, कटारू, कटारा, कपूर ढिल्लों, करम

चंद, करोड़ी, कलयान चंद, कलिआणा, काला, कालीदीन, कीरतचंद, कुसाली गिल, कौलां, कट्टूशाह, क्रिशना, क्रिशना झंजी क्षत्री, खुशहाली गिल (भाई), खेमा, गढ़ीआ (मसंद), गुरदास (भाई), गोती, गोपाल सेठ, गोपाला क्षत्री, गंगू सिंघ (वैरागी), गज्जण, चूहड़, जगना, जमाल, जमाल खां, राजपूत, जवंदा, जीउण, जीवा, जेठा, जैता, जैता शेर, जोता, जोध शाह, जट्टू, जल्ला, झंडा, झंडू, तखत तीरथा, तखता, तखतू, तखतू ढिल्लों, तलोक चंद रसालदार, तारा चंद, तिलोका (भाई), तीरथीआ, तुलसी, तोता, थंमण, थंमण क्षत्री, दरगाही, दाना चंद, दिआल चंद, दिआला, दिलवाली, दीप चंद, दीपा, दुल्लट, देवी सिंघ, देवी दास, धीरो (भाई), नवला निहालू, नानो, निहालू, नंद चंद, नंद लाल सोहणा, नंदा, परस राम (बनवाली), परसा, परसू, परागा, परोहत सिंघ, पिराणा, प्रिथीआ (भाई), पैड़ा, पैंदे खां, पंजाबा, पंमू पुरी क्षत्री, पल्ला (चौधरी), प्रताप सिंघ राजपूत (राणा), प्रेमा, फिरणा, फतूही गरेवाल (सरदार), फते मुहंमद, बहादर सिंघ, बहिल क्षत्री (बटाले वाला), बहिलो, बखत मल, बखता, बघेला भुल्लर, बघेड़ा नाहर संधू, बडभागा, बागा, बावक, बावक रबाबी, बिधी चंद, बुलाका, बुड्ढण शाह, बुड्ढा (बाबा), बूला, बोदला, भगत, भगता, भगतू किदारा, भगवाना, भगीरथीआ, भागभरी, भाग मल (राय), भागा, भागू, भागू सावल, भाना, भाला, भूरा, भूंदड़ (भाई), भूंदड़ा, भोमा, भंडारी, भल्लण, भल्लण बराड़, मथरा, मुनशी, मुरारी, मलक जाती, माहिल, मालू, मित्तू, मुरारी, मेहरा (भाई), मेहरा सेखो, मोहन, मोहरू मोखा, मोलक, मंज, राय, राय जोध, राजू, रामा (बैद), रामा अरोड़ा, रामो, रुड़ेका, रूपा (भाई), रूपा बलोल, रोशन (कश्मीरी), लटकट, लाल कौड़ा (चौधरी), लाला, लालू बालू दीवान, लंगाहा, लक्खा, नगारची, लक्खू सुनीता।

जंगों-युद्धों में शहीद हुए सिक्खों और मुसलमानों के शरीर उनके अकीदे के अनुसार अंतिम संस्कार कर दिए जाते थे। यहां तक कि दुश्मन की लाशों को भी उनकी रीति के अनुसार दफना दिया जाता था। कूड़ का पल्लू पकड़ गुरु जी के विरुद्ध चढ़ कर आये समूह हमलावरों का एक जैसा हश्र हुआ था लेकिन गुरु जी के मन में किसी के विरुद्ध कोई नफरत नहीं थी। जिसने भी गुरु जी के चरणों में हाजरी लगाई, उसको गुरु जी ने गले से लगाकर सदा के लिए अपना बना लिया। लेखक वज़ीर के द्वारा बादशाह को गुरु जी की जीतों का वर्णन करता हुआ बताता है :

१. शाही फौज जान बचा कर लड़ती है। सिक्खों ने तन, मन, धन गुरु को अर्पण कर रखा है। वे गुरु की खुशी हासिल करने के लिए बढ़-चढ़ कर लड़ते हैं। जिसको मौत का भय नहीं वो अकेला ही दस-दस को भगा सकता है।

२. शाही सिपाही अपने आप को नौकर मानते हैं और सिक्ख अपने आप को जंग का मालिक समझते हैं।

३. शाही सिपाही यह ख्याल रख लेते हैं कि बादशाह बहुत करेगा, नौकरी से हटा देगा, कोई और काम कर गुजारा कर लेंगे। जान से ही जहान है। मर गए तो पीछे बाल-परिवार भूखा मर जाएगा। सिक्ख इन ख्यालों से पाक हैं। वे मानते हैं कि अगर गुरु जी नाराज हो गए तो यहां भी दुखी होकर मरेंगे और आगे नरक में जाएंगे।

४. गुरु जी दुश्मन के जख्मी, हारे हुए और ईन मान चुके सिपाहियों को कुछ नहीं कहते हैं बल्कि उनको भी राजी कर छोड़ देते हैं।

५. जैसे तुम अपने आज्ञाकारी और लायक आदमी का पक्ष पालते हो वैसे ही खुदावंद करीम भी अपने सच्चे संतों-भक्तों की हर तरह से मदद, पालना करके लाज रखता है और उनकी विनती मान लेता है।

हर युद्ध में दुश्मन इस आशा से गुरु जी पर आक्रमण करता था कि गुरु जी के साथ सिक्खों की गिनती बहुत कम है और उनको आसानी से जीता जा सकता है। युद्ध में सामने आ जाने पर दुश्मन सिक्खों की भारी गिनती देखकर हैरान रह जाते हैं। इसका बड़ा कारण था कि गुरु जी लोगों के धार्मिक आगू थे और हर गांव में उनके श्रद्धालु मौजूद थे। इन श्रद्धालुओं में बहुत सारे चौधरी और सरदार भी शामिल थे जो गुरु जी पर हमला होने की खबर मिलते ही अपने आदमियों सहित युद्ध के मैदान में आ डटते थे। युद्ध के आसपास के गांवों में श्रद्धालुओं की मौजूदगी होने पर लंगर-परशादे, पानी, मरहम-पट्टी आदि की कमी महसूस नहीं होती थी। श्री अमृतसर के युद्ध के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का ज्यादा समय मालवा क्षेत्र में व्यतीत हुआ और बहुत सारे स्थानों पर उनके यादगारी स्थान बने हुए हैं। जिन गांवों और नगरों को गुरु जी की चरण-छोह प्राप्त है उनमें से कुछ एक का नाम लेखक ने इस प्रकार दिया है : अकोई, अलूणा ईसड़ू, आगरा, ऐबटाबाद, अमृतसर, इकलाहा, सिधवां, सिधार, सुलतानपुर, सोतर, संघोल, श्रीनगर, हसन अबदाल, हठूर, हरिगोबिंदपुर, हाफिजाबाद, कश्मीर, कमालपुर, करतारपुर, कांगड़, कीरतपुर, कुहाला, कुरुक्षेत्र, कैण, कोटड़ा, खडूर साहिब, खमाणों, खाई, गरंटी, ग्वालियर, गढ़मुक्तेश्वर, गिल, गुजरात, गुजरवाल, गुमटाला, गोइंदवाल, घराणी, घुमाण, चपराड़, चमकौर, चब्बा, छपार, जींद (गांव), जीरा, जंडिआली, झबाल, डमरा, डरौली, डुमेली, डोड मलूका, ढबाली, तरनतारन, तलवंडी, थानेसर, दराज, दुरगापुर, धमदा, नानकमता, नोपो, पिपली साहिब, पक्खो, बकाला, बलाला, बारठ, बारामूला, बैराम, भकना (गांव), भदौड़, भड़ाना, महिराज, मजनूं का टिल्ला (दिल्ली), मटवीं, मदो, मनौली, माहिल, माड़ी, मीरपुर चौंपक, मुजंग, मुजफ्फराबाद, मंधर, मंडाली (मंडयाली), मल्ला, राड़ा, रावलपिंडी, रोडे, रोपड़, रूपा (भाई), लहिरा, लाहौर, लोपो, लंडे, वटाला, वडाली, वड्डा घर, वजीराबाद आदि। मालवे में विचरते हुए गुरु जी अक्सर अपने सिक्खों के घरों में चले जाया करते थे और सिक्ख प्रेम से जो कुछ गुरु जी को भेंट कर देते थे, गुरु जी छककर बख्शिशें कर देते थे।

लेखक ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के व्यक्तित्व का विस्तृत वृत्तांत दिया है। उसने अपनी रचना को और अधिक रौचिकता प्रदान करने के लिए मुहावरों का भी प्रयोग किया है। ये मुहावरे रचना को गहनों की तरह शृंगार देते हैं। लेखक खुद भी मालवे के इलाके से संबंधित था और उसको यहां बोले जाते मुहावरों की दीर्घ जानकारी थी। इसके अलावा बाहर के इलाकों में भी उसने स्वयं घूम-फिर कर गुरु साहिबान के इतिहास की खोज की है और जहां कहीं भी उसको गुरु साहिबान की शान में कोई पंक्ति प्राप्त हुई उसने अंकित कर दी। इसके अलावा उसने अलग-अलग इलाकों में से भी सिक्खों के बारे में जानकारी प्राप्त की है। हो सकता है कि लेखक के वृत्तांत में जो नाम आए हैं वे पहले कहीं भी कलमबद्ध न हुए हों। इसका कारण यह है कि लेखक ने गांवों और परिवारों में सीना-ब-सीना चली आ रही बहुत-सी साखियों को सुना है और वही नाम उसने अपनी रचना में दिए हैं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के वृत्तांत में उसने जिन मुहावरों का प्रयोग किया है वे इस प्रकार हैं :

१. गुजरात मसखरी पढ़के खल।
माता-पिता दी करैं नकल।
कदे बूड हैं हड़के जल।
२. शाह दौला मौला दा फकीर।
गुजरात बसे बेपीर।
३. असां परबत जेडीआं मौत तणावां हेठ।
४. वधी वेलि बहु पीड़ी चाली।
५. दुशमन बात करे अणहोंदी।
६. अग्ग नूं आई घरवाली हो बैठी।
७. बाबा गुरदित्ता, दीन दुनी दा टिक्का।
८. जट्ट कमला खुदा नूं चोर।
९. पी लै भंग अबोटे दी।
तैनूं सुद्ध न रहे लंगोटे दी।
१०. गरज वंद बउला।
११. गउं भुनावें जौं भावें गिल्ले होण।
१२. बिधी चंद छीना, गुरू का सीना।
प्रेम भगत लीना कदे कमी ना।
१३. हत्थ कार वंनी चित्त यार वंनी।
१४. अउली टले बरसासी जीवें।
१५. झूठ आखां तां कुझ बचदा है।
सच्च बोलिआं भांबड़ मचदा है।
१६. बाहर मीयां पंज हजारी,
घर बीवी झोले दी मारी।
१७. उलटा चोर कोतवाल को डांटे।
१८. सकते दा सत्तीं वीहीं सौ।
१९. छज्ज तां बोले,
हजार छेक वाली छानणी की बोले?
२०. इट्ट खड़के दुक्कड़ बजे,
आवे खलकत देग चलावे।
२१. पर हीले रिजक बहाने मौत।
२२. अल्ला मन फक्कर, फक्कर मन अल्ला।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का लोक-मनों पर गहरा प्रभाव था। इसका एक कारण यह भी था कि सारे भारत की जनता में गुरु साहिब ही ऐसी शख्सियत थे जो लोगों को हाकिमों और उनके पिठुओं के जुल्मी पंजे से निजात दिला सकते थे। मुगल बादशाह के जुल्म के सताए हुए बहुत सारे राजे और जागीरदार गुरु जी की शरण में आकर ही अपना राज एवं जागीरें बचा सके थे। क्षेत्रीय हाकिम देख चुके थे कि गुरु जी बड़ी से बड़ी फौज का मुकाबला करने के काबिल हैं। इस कारण वे लोगों पर जुल्म करने से गुरेज करने लगे। गुरु जी का गांवों और नगरों में आम लोगों जैसे मिलना, दुख-सुख में शामिल होना, उनके लिए साधारण-सी बात थी। बादशाह से गुरु जी तक पहुंच करनी बहुत ही आसान थी जिस कारण हाकिम जुल्म करने से घबराते थे। गुरु जी द्वारा मुसलमानों के लिए मस्जिदें स्थापित करने से समाज में प्रेम और भाईचारे की भावना दृढ़ हुई थी और साधारण लोग सत्कार एवं स्वाभिमान भरा जीवन बसर करने लगे थे। लेखक बताता है कि जब गुरु जी ज्योति-जोत समाए तो लोगों को भविष्य की तसवीर धुंधली दिखाई देने लगी। एक श्री गुरु हरिराय साहिब के बिना अन्य सभी शोक लहर में डूब रहे थे। आकाश में लाली और धरती पर जरदी छा गई। स्त्री-पुरुष सब फूट-फूट कर रोने लगे, अनेक गम के दरिया में गोते खाकर बेहोश हो गए।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिक्ख धर्म में मीरी-पीरी के सुमेल को प्रत्यक्ष रूप में प्रकट किया है। उन्होंने आत्म-सम्मान की भावना को कायम रखने और सरबत्त के भले के सिद्धांत को सदीवी तौर पर उजागर करने के लिए भक्ति के साथ शक्ति के प्रयोग पर भी बल दिया। लेखक ने बहुत ही भावपूर्ण ढंग से गुरु जी की ऐसी शख्सियत का वर्णन किया है।

"पंथ प्रकाश" कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का नूरानी जीवन-वृत्तांत

*-डॉ. मनजीत कौर**

समय की नजाकत को दूरदृष्टि से पहचानते हुए छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी तथा पीरी की दो तलवारें धारण कीं। भक्ति के साथ शक्ति के सुंदर सुमेल, धर्म और राजनीति के सामंजस्य व 'बंदी छोड़ दाता' के जीवन के बहुमुखी व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करती पंक्तियां कितनी सटीक हैं :

दो तलवारा बद्धीआं, इक मीरी दी इक पीरी दी।
इक अजमत दी, इक राज दी, इक राखी करे वजीरी दी।

"पंथ प्रकाश" में पृष्ठ ११८ से १४८ तक ज्ञानी गिआन सिंघ ने छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के नूरानी जीवन को ओजस्वी शैली में काव्यबद्ध किया है।

जब गुरदेव ने अपने पिता श्री गुरु अरजन देव जी के शरीर त्यागने का वृत्तांत श्रवण किया तो उनकी भुजाएं फरकने लगीं तथा नेत्र वीर-रस के प्रभाव से लाल हो गए और उन्होंने पावन वचन किए कि अभी हम दुष्ट-दमन हेतु नींव रखते हैं, क्योंकि बिना दंड के दुष्ट-दमन संभव नहीं :

धरम धुरंधर धीर धर धरिओ धरम अवतार। . . .
अब गुर खषटम की कथा सुनो सजन धरधीर।
मीरी पीरी के धनी हरि गोबिंद बरबीर।
निज पितके तन तजन का जब उन सुनिओ हवाल। . . .
बिना दंडतै दबन नाहि दैहु उनै अब सोइ।१।
(पृष्ठ ११८)

मीरी-पीरी की तलवारें धारण करना : आगे लिखते हैं कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब विचार करने लगे कि गुरु-घर में किसी ने अब तक अजमत नहीं दिखाई, अत: पिता जी की शहादत के लिए जिम्मेदार दुष्टों का दमन जरूरी है और उसके लिए शस्त्रों की अवश्यकता होगी। गुरु साहिब की भावना को समझते हुए बाबा बुड्ढा जी आदि गुरसिक्खों ने मिलकर सिक्ख संगत को एवं सगे-संबंधियों को एकत्र किया। पुन: श्री अकाल तख्त साहिब पर सिंघासन लगा। गुरु जी को सिंघासन पर विराजमान करवाया गया। उपरांत बाबा बुड्ढा जी (गुरु-घर की मर्यादानुसार) द्वारा गुरिआई की रस्म अदा करने के दौरान गुरु जी बोले कि "बाबा जी! अब तेग उठाने का समय आ गया है, अत: मुझे मीरी-पीरी की दो तलवारें धारण करवाओ।" बाबा बुड्ढा जी ने वैसा ही किया। अब गुरु साहिब ने संगत की ओर मुख कर वचन किया कि सभी लोग गुरु-घर में शस्त्र और घोड़े भेंट-स्वरूप लायें। तत्पश्चात् संगत गुरु-घर में ऐसी ही भेंट लाती। गुरु साहिब प्रसन्न हो उन्हें "नदरी नदरि निहाल" करते, यथा:

पुन मन मैं कीनो इह्व विचार।
किम लेहु पिता का बैरसार। . . .
सभ मिले गुरू का तोर पिख। . . .
पुन तखत अकाल दिवान लाइ।
गुरु को सिंघासन पर बठाइ। . . .
अब समा तेग का गयो आइ। . . .
उन दुती तेग पहिनाइ दीन। . . .
पुन संगत परती बचन कीन।

***२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३*

जो लिआवै शसत्र अस्व पीन। . . .
निज दासन को कर ही निहाल।
(पृष्ठ ११८-११९)

सिक्ख-संगत में वीर रस का संचार : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिक्खों में वीर रस का संचार करने हेतु अपने पास सेना रखनी शुरू कर दी। गुरु जी नित्य शिकार खेलने जाते। संगत भेंट लाती, मनवांछित फलों की प्राप्ति करती। ढाडी वारें गायन करते, संगत निहाल होती। स्वयं गुरु जी सिंघासन पर विराजमान होते। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में रचित वीर रस की वारें सुनकर सब में वीर रस का संचार होता। बहुमुखी प्रतिभा के धनी गुरु साहिब ने पहलवानों को भी पास रख लिया। यही नहीं, गुरु जी गुरमुखी की शिक्षा तथा हर प्रकार की विद्या में निपुंन हो गए। उनके तेजस्वी स्वरूप को देख उनकी सर्वत्र कीर्ति फैलने लगी।

गुर घनी अनी रख लई फेर।
नित खेलन जावैं चड़े अखेर। . . .
सभ संगत द्रसन करे आइ।
दे भेटा फलमन इछ पाइ। . . .
मिल ढाडी वारां पड़ै आइ।
सुन संगत सब मन मोद पाइ। . . .
पुन पहिलवान रख लए पास।
गुरु कुशती उनसै करे खास। . . .
बहु रखे गुनी ढिगु बिबध भांत।
जस फैलिओ गुरू का बड सख्यात। . . .
जब खुशटम गुर का अधक तेज।
दसहूं दिस फैलिओ जस अमेज। (पृष्ठ ११९-१२०)

मिहरबान की ईर्ष्या : दसों दिशाओं में गुरु पातशाह की फैली कीर्ति को मिहरबान बर्दाश्त नहीं कर सका और उसने चंदू के पास जाकर द्वैत भाव से अपने मन की ईर्ष्या को उजागर किया। घर में बैठी कुआरी कन्या के कारण दुखी चंदू ने पुन: जाकर जहांगीर के कान भरने शुरू किये। ज्ञानी गिआन सिंघ दुष्ट चंदू की तुलना सर्प से करते हुए लिखते हैं :

जन दुशट सरप की इहो रीति।
पिख मोका मारत डंक नीति। (पृष्ठ १२१)

अर्थात् दुष्ट और सर्प का एक-सा स्वभाव है, दोनों मौका देखते ही डंक मारते हैं।

चंदू का जहांगीर को भड़काना : पंचम पातशाह से शत्रुता रखने वाला दुष्ट चंदू अब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के खिलाफ आग उगलने लगा कि किस प्रकार उनके पास बेअंत दौलत है, फौज भी उन्होंने रख ली है, रोज शिकार खेलने जाते हैं। उन्होंने श्री अकाल तख्त साहिब भी स्थापित कर लिया है। सिक्ख संगत उन्हें 'अवतार रूप' में पूजती है। यमुना और अटक के बीच उनके सेवक रहते हैं। अगर गुरु जी के साथ आपकी (जहांगीर की) अनबन हो गई तो उन्हें काबू करना मुश्किल हो जायेगा। अत: उन्हें यहीं बुलवा लो और दो लाख जुर्माना भी वसूल कर लो, यथा :

खिसरो साही सतरु को कदत दैने हेत। . . .
नित खेलन जात शिकार खास।
रच लयो तखत अकाल नाम। . . .
जमना अर अटक मझार देस।
सब गुरु का सेवक है बसेस। . . .
इसते उनको बुलवाइ लेहु।
लिहु चटी का दुइ लाख वेहु। (पृष्ठ १२१-१२२)

जहांगीर का श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को बुलावा भेजना : जहांगीर ने छठे गुरु जी को अपने पास बुलवाने हेतु बेग उमराव को श्री अमृतसर साहिब भेजा। उसका वर्णन करते हुए ज्ञानी जी लिखते हैं कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब तो यही चाहते थे, अत: तत्काल तैयार हो गए। कुछ सिक्खों को साथ लिया। माता गंगा जी को धीरज देकर प्रसन्नतापूर्वक दिल्ली के लिए प्रस्थान किया। सं. १६७३ में वहां पहुंचे। गुरु

जी के पास पीर मौलवी आदि आये। गुरु जी की बुद्धिमता, शौर्य से हतप्रभ रह गये। पूरी शानो-शौकत के साथ गुरु जी जहांगीर के दरबार पहुंचे, यथा :

इक गुंचै बेग उमराव चंग।
वाजीर खान के पठयो संग। . . .
गुर धीरज सभको भलै दीन।
मग दिल्ली का हुइ खुशी लीन। . . .
हित प्रख मौलवी पीर आहि।
गुरु पास पठे वहिकर विचार। . . .
पहुंचे सज वज सनद्ध बद्ध। (पृष्ठ १२२-२३)

जहांगीर का गुरु साहिब के व्यक्तित्व से प्रभावित होना : गुरु साहिब के शीश पर कलगी शोभायमान थी। उनके मनभावन एवं शांत रूप को देख जहांगीर अत्यंत प्रभावित हुआ और श्रद्धावत गुरु साहिब को अपने पास चंदन की चौंकी पर बिठाया। गुरु साहिब के मुखारबिंद से आशीर्वचन सुनकर जहांगीर बहुत प्रसन्न हुआ। कुशलक्षेम पूछी तो गुरु साहिब ने वचन किया कि ईश्वर की रहमत है और हम सदैव तुम्हारा हित चाहते हैं। पूछा गया कि गुरु-घर में दो तलवारें पहनने का कारण, तो गुरु साहिब ने स्पष्ट किया कि गुरु-घर की ओर कुदृष्टि डालने वाले का मुंहतोड़ जवाब देने हेतु और स्वाभिमान की रक्षार्थ एवं मजलूमों की रक्षा हेतु दो तेगें धारण की गई हैं, यथा :

सुनइहु असीस गुन पुरख रूप।
खुशि भयो शाहि पिखकै सरूप।
ढिग चंनण चौकी पर बठाइ।
सभ खेम कुसल बूझी सुभाइ। . . .
इहु मीरी पीरी की पछान।
है राज जोग गुरु घर महान। . . .
है दुती दोखीअन गुरु नकेत। (पृष्ठ १२३-२४)

अगले दिन गुरु साहिब जहांगीर के साथ शिकार खेलने गये। वहां जंगल में अनेक वीरों का शिकार कर चुके शेर का गुरु साहिब ने शिकार किया। हाथ में खंडा लेकर शेर के दो टुकड़े कर दिए। यह देखकर जहांगीर अत्यंत प्रसन्न हुआ और दो लाख जुर्माना भी माफ कर दिया। इस प्रकार दोनों के बीच परस्पर वार्तालाप से स्नेह बढ़ता ही गया :

फिर बातै चाली जो अखेर। . . .
दिन दूसरि पहुंचे बीआ बान। . . .
इस तई तेगे सैं हते बीर। . .
गुर जड़ी ढाल वहि रुकयो फोर।
हत खंडा कीनो दोइ टूक। . . .
कर है बहु बातां मोद थाइ।
दिन दिन प्रति बढगो प्रेम भाइ। (पृष्ठ १२४-२५)

आगे ज्ञानी जी ने स्पष्ट लिखा है कि ज्यों-ज्यों जहांगीर और गुरु साहिब में प्रीति बढ़ती गई चंदू की छाती पर ईर्ष्या के सांप लोटने लगे, यथा :

दोहिरा

जहांगीर अर गुरू का जिउं जयों बढै सनेह।
तयों तयों चंदू दुशट को मतसर ताप चड़ेह।५।
(पृष्ठ १२५)

चंदू द्वारा नई साजिशें रचना : एक दिन जब जहांगीर शिकार खेलने गया तो घोड़े से गिर कर बुरी तरह से बीमार पड़ गया। चंदू ने अवसर देख एक नजूमी से कहलवा भेजा कि (जहांगीर) तुम्हारे घर साढ़सती अर्थात् गृहों का बुरा प्रभाव चल रहा है। शाहजहां ने उसके बचाव का उपाय पूछा तो उसने बताया कि हिंदू कुल का तुम्हारा हितैषी अगर ग्वालियर के किले में जाकर सवा महीने तक मंत्र का जाप करे तो बुरी ग्रह-दशा टल सकती है। जहांगीर ने फिर गुरु जी को बुलवा भेजा। गुरु जी चंदू की दुष्ट चाल को समझ गये लेकिन फिर भी ग्वालियर के किले में ४० दिन के लिए चले गये, यथा :

दुती लाइ रहिओ बहु भांतै।
पेश ना चाली जबै बखिआतै। . . .
ओन नजूमी तै कहिलायो।
साढशती ग्रहि तुझ पर आइओ। . . .
जपे गात्री हमन कराए।
सवा महीना तब गृहि टरहै। . . .
किले गुवालीएर में गए।
होम करत चाली दिन भए। (पृष्ठ १२५)

यही नहीं, वहां किले में उसने गुरु जी को जहर दिलवानी चाही लेकिन उसके नापाक इरादों पर पानी फिर गया।

गुरु साहिब ग्वालियर के किले में थे। बादशाह कमजोर पड़ गया था। किसी भी वैद्य-हकीम से उसका इलाज न हो सका। अंत में एक सिक्ख ने जहांगीर को सुचेत किया कि तूने अवश्य किसी पीर-फकीर को दुख दिया है। यह सुन कर जहांगीर भयभीत हो गया, यथा :

भाई पैड़ा गुरढिग सिख।
जोग कला मैं था अतिदिख। . . .
बादशाह दुबला अर पीरा। . . .
तै कोऊ पीर फकीर दुखाइओ। (पृष्ठ १२६-१२७)

आगे ज्ञानी जी ने साईं मियां मीर जी का दिल्ली आने का वृत्तांत वर्णन करते हुए साईं जी के गुरु-घर के प्रति श्रद्धा-भाव को शब्दों द्वारा अभिव्यक्त किया है।

साईं मियां मीर जी का जहांगीर को समझाना: साईं मियां मीर जी बीमार जहांगीर का सारा हाल सुनकर बोले, "आपने बिना कसूर के श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को कैद कर रखा है। उनके दर्शनों हेतु सिक्ख संगत तरस रही है। जरूर तुम्हें उनकी बद्दुआएं लगी होंगी। उनके पिता भी ब्रह्मज्ञानी थे। इतने कष्ट सहन करके भी उन्होंने उफ तक नहीं की।" जहांगीर ने उन्हें सताने का कारण पूछा और साईं मियां मीर जी ने सारी घटना से जहांगीर को अवगत करवाया। यह सुनकर बादशाह के नेत्र भर आये। तुरंत वजीर खान को बुलवाया और आदेश किया कि गुरु साहिब को किले से ले आओ और विनती करके उनसे मेरी भूल बख्शवाना, यथा :

हाल बिमार का सुन सारा।
मीयां मीर तब ऐस उचारा। . . .
उन कै पिता भए ब्रहम गिआनी।
सहे कशट पर हाइ न ठानी। . . .
कहिओ जाहु तुम गुर को लिआवो।
कर मम बिनै भूल बखसावो। (पृष्ठ १२७)

५२ राजाओं को मुक्त करवाना : ज्ञानी गिआन सिंघ ने आगे 'बंदी छोड़ दाता' का किले से ५२ राजाओं को मुक्त करवाने का जिक्र किया है कि किस प्रकार जब गुरु साहिब को मुक्त होते देख सारे कैदी करुणा से भर गये तो उनकी दशा देख गुरु साहिब ने उन्हें भी साथ मुक्त करने को कहा। वजीर खां ने सारी घटना बादशाह को बताई। बादशाह बोला, जितने कैदी गुरु जी का दामन पकड़ कर बाहर आ जाएं उन्हें मुक्त कर दो। अत: सभी राजा गुरु जी का चोला पकड़ कर बाहर आ गये। बादशाह ने गुरु जी से मिलकर क्षमा-याचना की। अब उसकी सारी भ्रांतियां दूर हो गईं :

पहुंचयो जब वजीर खां तहां। . . .
इह सब छूटै तब हम जावै। . . .
सब राजे फड़ बाहर आए। . . .
मीआं मीर गुर मिल खुशि होए। . . .
बढ़ी परस पर प्रीति अपारै।८। (पृष्ठ १२७-२८)

चंदू की पोल खुलना और दुष्ट का अंत : यह कहते हुए एक दिन बादशाह ने गुरु जी से माला का एक मोती मांगा ताकि आपकी याद हमारे पास हमेशा बनी रहे। गुरु साहिब ने उस वक्त चंदू की सारी करतूतों का पर्दाफाश किया। गुरु जी बोले कि एक इससे भी सुंदर माला मेरे

पिता जी के पास थी। वो इस समय चंदू के घर में है। इसने मेरे पिता जी के साथ बहुत बड़ा धोखा किया और उन पर बहुत जुल्म किए। इसे आपका जरा भी डर नहीं था। जो भी सामान उनके पास था सब चंदू ने ले लिया। जिस राज्य में इतने जुल्म होंगे वह राज्य कैसे रहेगा? फिर वह जहर देने वाला खत, वह भी बादशाह को दिखाया। यह सुन बादशाह का दिल भर आया। उसने दुष्ट चंदू को बुलवा भेजा और उनसे वह माला देने को कहा। उसने साफ इंकार कर दिया। फिर उसके घर की तलाशी ली गई। सब कुछ उसके घर से मिला। तब बादशाह ने कहा, यही खूनी आपका चोर है, इसे जो चाहो सजा दो। गुरु जी ने अपने सिक्खों से कहा, जो हमारा सच्चा सिक्ख है वो इसके सिर में पांच जूते मारे। अंत में चंदू को लाहौर ले जाया गया। उसे गली-गली में घसीटा गया। दुष्ट चंदू का तड़फ-तड़फ कर अंत हो गया :

इक दिन बैठे थे गुरू बादशाहि के पास।
फेरत करसो सिमरना काफूरन को खास।. . .
इक माला इसते आहि चंगि। . . .
इन करिओ दगा मम पिता संग। . . .
दिल जहांगीर कालियो फेर। . . .
सुन पिख खत शाहि करोध धाट। . . .
गुर तईं फड़ाकै कहयो याहि। . . .
इसके सिर पनही हनै पांच। . . .
अति खुशी भई पिख गंग मात। . . .
उन तपयो भाठका रेत डार। . . ..
तबतै गुरदिते कसम एह।
कर राखी थी तज अंठ खान।
सो सतगुरु पूरी करी जान ॥१०॥ (पृष्ठ १२८-१३१)

गुरु साहिब लाहौर एवं श्री अमृतसर में रहते हुए सिक्ख संगत में शूरवीरता के गुणों का संचार करते रहे। पांच वर्षों तक निरंतर प्रजा की सार-संभाल में तल्लीन रहे। मानो कलयुग में सबके लिए सुखदायी सतयुग आ गया हो यथा:

श्री गुर रहे लहौर गौर कर सिख बहु तारे।
श्री अंमृतसर आइ रहे मन मैं मुद धारे।. . .
पांच बरस सतगुर करी परजा की संभार।
कलि में सतजुग बरतिओ सब जन कौ सुखकार।
(पृष्ठ १३१-१३२)

सच्चे पातशाह का जहांगीर के साथ अनेक स्थानों का दौरा : लोक-परलोक के सुख देने वाले गुरु साहिब को जहांगीर अपने साथ कश्मीर ले गया। मार्ग में शिकार खेलते हुए गुरु साहिब ने अत्यधिक प्रसन्नचित्त होकर कश्मीर के प्राकृतिक सौंदर्य को निहारते हुए काबुल की ओर प्रस्थान किया। अनेक पतितों को पुनीत बनाया। उसके पश्चात अनेक स्थानों पर होते हुए अनेकों का उद्धार किया। १६८१ में वापिसी पर मार्ग में जहांगीर की मृत्यु हो गई, यथा:

इसी हेत सतगुर के तांई।
कहिने लागी खलक सथाई। . . .
मौद भए कशमीर निहरकै।
काबल की दिस शाहि पधारे। . . .
और अनेक ठौर जन तारे।
थिरे सुधासर आइ उदारे। (पृष्ठ १३२-१३३)

शाहजहां का गद्दी पर बैठना : जहांगीर की मृत्यु के पश्चात जहांगीर का पुत्र शाहजहां गद्दी पर बैठा जिसे किसी तरह का तजुर्बा नहीं था, भले-बुरे की पहचान नहीं थी। काजियों और हाकिमों के कहने में आकर गुरु साहिब से अनबन हो गई। इसके पश्चात एक बेशकीमती घोड़ा जो कि एक सिक्ख काबुल से विशेष तौर पर गुरु जी की सेवा में लाया था, जबरदस्ती उसे छीन कर बादशाह को दे दिया जो कि बीमार हो गया और गुरु साहिब के पास वापिस आने पर ही ठीक हुआ। काजी की गुरु साहिब से ठन गई, यथा :

शाहिजहां सुत जहांगीर का बादशाह पुन होयो।
बिना तजरबे उस अल्लड़ ने भला बुरा नह जोयो। . . .
राजी गुरू ढिग सीघर होयो काजी को दुखथीओ। . . .
पुन गुर को जो ध्याने केहर कोल पुंज संघारे।
(पृष्ठ १३३-३४)

बीबी कौलां का गुरु जी के दीदार करना : आगे ज्ञानी जी ने बीबी कौलां, जो कि काजी की बेटी थी और साईं मियां मीर जी की सतसंगी थी, का भी जिक्र किया है। जब गुरु जी एक बार साईं मियां मीर जी के घर गए तो पहले भी अनेक बार गुरु जी की उपमा सुन चुकी बीबी कौलां गुरु साहिब के प्रत्यक्ष दर्शन करके गुरु जी से अत्यधिक प्रभावित हुई। उस प्रसंग का मनोरम शैली में बाखूबी वर्णन किया गया है।

बीबी कौलां जब घर आकर गुरु साहिब की महिमा गाने लगी तो उसके पिता काजी रुसतम खान ने बीबी कौलां को चाबुकों से मारा और बोला, "काफिर की उपमा करती है! इसलाम धर्म के मुताबिक तुझे सजा-ए-मौत मिलनी चाहिए।" जैसा कि जगत-प्रसिद्ध है कि भक्तों और संसारियों की ठीक वैसे ही नहीं बनती जैसे हंस और कौए का कोई मेल नहीं है। बीबी कौलां को गुरु-दर्शन के बिना चैन न पड़ता। जब गुरु साहिब श्री अमृतसर जाने लगे तो वह बोली, "मुझ अभागिन को फिर कब आपके दर्शन होंगे?" काजी आगबबूला हो उठा और फतवा लगाकर उसे मारने का आदेश दे दिया। मां ममतावश दौड़कर साईं मियां मीर जी के पास पहुंची। सारी व्यथा बताई और अपने सेवक के साथ उसे मांगट ग्राम गुरु जी के पास सकुशल पहुंचा दिया। गुरु जी ने उसे बेआसरा जानकर सहारा दिया। दयालु पातशाह ने श्री अमृतसर पहुंचकर एक कमरा उसके लिए बनवा दिया जहां वह सतसंग में मगन रहती। एक दिन बीबी कौलां गुरु जी के गृह में जा पहुंची। वहां माता गंगा जी ने स्नेहपूर्वक उसे अपने पास बिठाया।

उस काजी की बेटी कौलां मीआं मीर की चेली।
थी सतसंगन भगत रब दी रंगण चड़ी नवेली। . . .
सुन महिमां अर पिख सरूप को कौलां हुइ कुरबाने। . . .
पेख तौर कौलां का काजी फड़ बहु थपड़ मारे। . . .
बेटी होत मात को पिआरी उन उस ढिग कहि दीनी। . . .
सरन तुमारी इहु विचारी जान बचान पठाई। . . .
सुनती बचन परम पद दाइक धन्य भाग निज टेरति। *(पृष्ठ १३४-१३५)*

बीबी कौलां के नाम पर कौलसर सरोवर का निर्माण : गुरु साहिब ने उसके नाम से सरोवर बनवाने का विचार किया। बीबी कौलां के पास जो कुछ भी था सब उस निर्माण-कार्य में लगा दिया। कौलसर १६८४ में तैयार हुआ। तत्पश्चात बिबेकसर रामदासपुर में तैयार करवाया, यथा :

ताल लगावन की ठटी पुन गुर तिसके नाम।
जो कुछ कौलां पास था जेवर नकद तमाम। . . .
ताल कौलसर लाइ गुर बर दीनो पुन एह।
इहां न्हाइ पुन अमीसर न्हाइ चार फल लेह। . . .
जानत हैं गुर सिख सब भयो धियाइ इतयाहि।२१।
(पृष्ठ १३६-१३७)

ज्ञानी गिआन सिंघ ने आगे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के धर्म-युद्धों का विस्तृत वर्णन किया है :

शाहजहां के बाज का झगड़ा : गुरु साहिब एक दिन शिकार खेलने निकले। शाहजहां भी

वहीं शिकार खेलने आया हुआ था। उसका बाज सतिगुरु के पास आ गया। गुरु साहिब ने वापिस नहीं दिया। गुलाम रसूल सैन ने पांच हजार की सेना लेकर चढ़ाई कर दी। जब यह खबर देश में फैली तो अनेकों सिक्ख गुरु जी की फौज में शामिल हो गए। घमासान युद्ध हुआ। शाहजहां के तीन सरदार और अनेकों जवान मारे गए। कश्मीरी सूबेदार मुखलिस खां द्वारा हमला करवाया गया। जब इस बात का पता सिक्ख संगत को चला तो माझा, मालवा, दोआबा क्षेत्र के दूर-दूर से सिक्ख आकर सेना में सम्मिलित हो गए। उसी समय गुरु साहिब ने बीबी वीरो की शादी करनी थी लेकिन परमेश्वर के रंग . . .।

लोहगढ़ का किला तैयार करवाना : भयानक युद्ध के समय गुरु जी के लोहगढ़ किले से तोपें चलीं, चारों ओर से तीर बरसने लगे। गुरु साहिब ने परिवार तथा खजाने को झबाल गांव में सुरक्षित पहुंचा दिया। तत्पश्चात गुरु जी रामसर आ गए। वहां मिठाई से भरा कमरा और बहुत-सा सामान सब तुर्कों ने लूट लिया। गुरु जी का वचन सत्य सिद्ध हुआ। बीबी वीरो के विवाह हेतु बनाई मिठाई जब माता जी ने सिक्खों को देने इंकार किया तो गुरु जी ने सहज-स्वाभाविक वचन किए कि यह मिठाई तुर्क खाएंगे। दिन निकलने पर रामसर के निकट भयानक युद्ध हुआ। गुरु जी के हाथों मुखलिस खां मारा गया और बाकी फौजें डर कर वापिस मुड़ गईं। जीत गुरु साहिब की हुई। झबाल में जाकर गुरु जी ने बीबी वीरो का विवाह किया:

तांही समें एक दिन सतगुर खेलन गऐ शिकारैं।. . .
बाज सुफैद शाहि का छुटकैं सतगुर के ढिग आयो। . . .
चढयो गुलाम रसूल सैन लै पांच हजार कजंगी। . . .
मुखलस खां कशमीरी सूबा सब पर करयो अचली। . . .
सतगुर करयो लोहगढ़ आकी तोपै काठ चलाई।. . .
कोठा भरयो मिठाई का था और समान अपारा।. . .
तांही छकी सोऊ तुरकाने बचन फुरयो गुर केरा। . . .
जगत विहार असार दिसै हैं बाजीगरी जहानै।
तब लो सिखन अरपयो चौगुन लयाइ समान महानै। (पृष्ठ १३७-३८)

बीबी कौलां का परलोक-गमन : जब गुरु साहिब करतारपुर पहुंचे तब बीबी कौलां अत्यधिक बीमार थी। गुरु साहिब के दर्शन करके निहाल हो गई और १६८५ में वो इस नश्वर संसार को त्याग प्रभु-चरणों में लीन हो गई, यथा:

आगे कौलां तिआर थी मरने हेत बीमार।३। . . .
सोलां सै पंचासीए त्यागयो जगत असार।४। (पृष्ठ १३८)

गुरु साहिब का करतारपुर आगमन : गुरु साहिब के करतारपुर आगमन पर सिक्ख संगत अनेक भेंटें लेकर गुरु जी के पास आती और मनवांछित फलों की प्राप्ति करती। गुरु जी वहां चंदू वाले रुहीला गांव में ठहरे थे। वह स्थान जहांगीर ने गुरु साहिब को भेंट कर दिया था। भगवाना नाम का क्षत्रिय चौधरी, चंदू का मित्र मौके की तलाश में था। वो गुरु साहिब को वहां रहने नहीं देना चाहता था, इस कारण तकरार बढ़ती गई।

दूसरा युद्ध गांव रूहेल में : भगवाना कड़वे वचन बोला, जो सिक्ख संगत बर्दाश्त नहीं कर सकी, तो उन्होंने उस पर हमला कर दिया और उसे मौत के घाट उतार दिया। उसका बेटा रतन चंद जलंधर के सूबेदार के पास गया और फरियाद की। अब्दुल्ला खां सूबेदार ने बहुत बड़ी फौज लेकर चढ़ाई कर दी। सिक्ख संगत को जैसे ही खबर मिली तो धर्म-युद्ध में शहीदी

पाने के लिए वो भी जोश के साथ पहुंच गई। तीन दिन घमासान लड़ाई हुई। गुरु जी ने ऐसे तीर चलाए कि रतन चंद और करम चंद मारे गए। गुरु साहिब ने यह जंग भी जीत ली और गांव का नाम 'हरिगोबिंदपुर' रख दिया :

गुर आवन सुन पुर करतारै।
आवन लागे सिख अपारै। . . .
उतरे तहां सतगुरू जाई। . . .
धेरड़ खत्री इक भगवाना। . . .
रतन चंद बेटे तिस के तब। . . .
मान इहो अबदुल खां सूबा। . . .
गाढा जंग तीन दिन माचा। . . .
मरे दुशट हुइ जोग हसीहै।
जंग जीत गुरु नगर बसाइओ।
हरि गुबिंद पुर नाम रखाइओ। (पृष्ठ १३९-४०)

इस जीत के पश्चात गुरु साहिब श्री अमृतसर में आ विराजे। वहां भाई अलमस्त नानकमता साहिब से आए और योगियों के जुल्मों का खुलासा किया कि योगी किस प्रकार नानकमता साहिब में अपनी मनमानी कर रहे हैं, यथा :

गुर नानक का पीपल जारा।
मार कढयो अलमसत विचारा। (पृष्ठ १४१)

गुरु साहिब नानकमता साहिब पहुंचे और योगियों को पछाड़ कर बाहर किया। गुरु की महिमा सुनकर वहां भी बहुत-से लोग गुरु जी के सिक्ख बन गए।

भाई बिधीचंद का घोड़े वापिस लाना : आगे लेखक ने अफगान से संगत द्वारा लाए विशेष घोड़ों का वृत्तांत बताया है जो कि रास्ते में ही छीन लिए गए। किस प्रकार भाई बिधीचंद घोड़े वापिस ले आया और गुरु पातशाह की खुशियां प्राप्त कीं, यथा :

गुरू डरौली हट कर आए।
तारे सिख सतनाम जपाए। . . .
बोले गुरु कोऊ सिख जावै।
हमरे घोड़े हम ढिग लयावै। . . .
बिधीआ घोड़ा लिआइओ तहि तब। . . .
घोड़ा दूजा लैके भाई। . . .
पेख सतगुरू अति खुशि थीए।
भाई को बर बांछित दीए। . . .
आवत है बीड़ा चुक तेग।८। (पृष्ठ १४२-४३)

तीसरा युद्ध लला बेग के साथ : जब शाहजहां को खबर हुई कि शाही अस्तबल से कोई गुरु का सिक्ख घोड़े ले गया है तो उसने लला बेग को सेना देकर हमला करने भेजा। गुरु जी ने जोध राय से सलाह करके जल की ढाब के चारों ओर मोर्चे लगा दिए और कहीं पानी नहीं था। कितने तुर्क तो पानी न मिलने के कारण मारे गए, कितनों को सिक्खों ने युद्ध में परास्त कर दिया। भूखी-प्यासी, रास्तों से अनजान तुर्क सेना की अति दुर्गति हुई। मारे सर्दी के उनके हाथ जम गए और इधर पूरी तैयारी के साथ सिक्खों ने घमासान युद्ध किया और तुर्कों के हथियार भी ले लिए। गुरु जी ने खान (गहरा खड्डा) खुदवाकर सभी तुर्कों की लाशों को उसमें दफना दिया और जो सिक्ख वीरगति को प्राप्त हुए उनका दाह संस्कार किया:

जल की ढाब तहां है भारी।
रोक लेहु सो चल्ल अगारी। . . .
तब लौ शाही लसकर आयो।
देश मराझ तब जंग मचाइओ।
गुरु के सेवक उनको मारे।
पंचम पवन तेज अति ठंडी। . . .
असटय सिखन फड़कै तेगे।
मारे तुरक बिअंतैं बेगे। . . .
ससत्र भी तिस माहि दबाए।
सिख मरे सो अगनि जलाए।१०। (पृष्ठ १४३-४४)

उपरोक्त युद्ध को 'युद्ध महिराज' के नाम से जाना जाता है तथा इस युद्ध के शहीदों का

जहां दाह संस्कार किया गया वहां गुरुद्वारा 'गुरूसर' नाम से विख्यात है।

इस युद्ध के बाद गुरु साहिब ने तीन साल तक कीरतपुर निवास किया। उसके बाद करतारपुर आए। वहां वैसाखी के मेले पर बहुत संगत एकत्र हुई और वहां संगत अपने दसवंध में से बहुत भेंटें लेकर आई।

चौथा युद्ध करतारपुर काले खां के साथ : पैंदे खां गुरु साहिब के पास गरीबी व तंगहाली में आया था। गुरु जी की बख्शिशों द्वारा एवं उनके स्नेह व पालन-पोषण से बलवान हुआ, लेकिन अपनी पत्नी व दामाद की तरफदारी करता हुआ गुरु-घर से दुश्मनी मोल ले बैठा। उसने बेवफाई की और तुर्कों के साथ जा मिला। शाहजहां, जो कि पहले से ही गुरु जी से विरोध एवं द्वैष-भाव रखता था, उसने काले खां को सेना देकर चढ़ाई करने हेतु भेज दिया। युद्ध-भूमि में आकर सिक्ख शूरवीरों ने काले खां को ललकारा। उसमान खां जो कि पैंदे खां का जंवाई था, बाबा गुरदित्ता जी ने उसे मार गिराया। अनेक जवान मारे गए, लाशों के ढेर लग गए। काले खां भी मारा गया। गुरु साहिब ने जंग विजय की खुशी में नगाड़े बजवाए। १६९१ में गुरु साहिब ने कीरतपुर में आ निवास किया, यथा:

तहि तैं चल गुर कीरतपुर को। . . .
तहि तैं फिर करतारपुर आए। . . .
नजर भेट गुर ढिग बहु आई। . . .
गुरू बाट जोधयां को दीए। . . .
पैंदे खां का तहां जमाई। . . .
निमक हराम होइ भां दफा। . . .
लड़े सूरमे बल धर रिसतै। . . .
काले खां सूबे का बेटा।
सो भी मर कर धर पर लेटा। . . .
फते जंग की सतगुर पाई। . . .
भए तिआर गुर चोजी चरजी। . . .
सोलां सै एकानवें कीरतपुर मैं आइ।
बसे गुरू फिर तहा ही रहै मदमन पाइ।

(पृष्ठ १४७)

देश-विदेश की संगत गुरु दर्शनार्थ आती और निहाल होती। पहाड़ी राजे भी गुरु जी की सेवा में तत्पर रहते।

बाबा गुरदित्ता जी का शरीर त्यागना : एक दिन बाबा गुरदित्ता जी शिकार खेलने गए और अचानक उनसे एक गऊ की हत्या हो गई, जिसे लोगों के कहने पर बाबा जी ने पुन: जीवित कर दिया। जब इस घटना की खबर गुरु जी को लगी तो गुरु जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकती। बाबा गुरदित्ता जी ने तत्क्षण अपना शरीर त्याग दिया।

धीरमल बाबा गुरदित्ता जी का बड़ा पुत्र था। वो सदैव पिता एवं दादा जी के साथ विरोध-भाव ही रखता था तथा हमेशा तुर्कों को अपने घर का भेद देता था। उसने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पावन स्वरूप भी अपने पास रख लिया था। गुरु जी ने अपने सिक्खों को आदेश किया कि वे धीरमल के साथ किसी तरह का सम्बंध न रखें और साथ ही गुरगद्दी उसके छोटे भाई श्री (गुरु) हरिराय साहिब को सौंप दी, जिसे गुरु-घर की मर्यादानुसार सप्तम पातशाह ने पूर्ण तौर पर निभाया :

संगत देस बदेस तै मिल संग मसदंन।
आवत कीरतपुर विखै गुर को कर बंदन। . . .
श्री गुरदिता जी गयो इक दिवस अखेरैं। . . .
त्रनजय निम तन तज दयो चौरावन माहैं। . . .
धीरमल सो ना ब्रतै है जो सिख हमारा। . . .
गुरता श्री हरराइ को दीनी बखिआतैं। . . .
खशटम गुर गुन गाइके इति भयो अधयाए।८।
इति श्री गुरु पंथ प्रकाशे ग्यान सिंघ विरचते

खशटम गुरू जंग जोती जोत वरननं नाम सतारमे निवास।१७। (पृष्ठ १४७-१४८)

"पंथ प्रकाश" में ज्ञानी गिआन सिंघ ने शायद विषय विस्तार के कारण कुछ प्रमुख प्रसंगों का जिक्र नहीं किया, यथा माई भागभरी, माता सुलक्खणी जी (जिसे गुरु जी से ७ पुत्र प्रप्त होने का वरदान मिला था), पीर बुड्ढन शाह, भाई मिलाप तथा भाई रूपा गांव की नींव रखना आदि। फिर भी यह कहना अतिकथनी न होगी कि ज्ञानी जी ने बहुत ही श्रद्धा-भाव से ओजस्वी शैली में वीर रस से ओत-प्रोत गुरु पातशाह का नूरानी जीवन-वृत्तांत प्रस्तुत किया है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी

*-स. करनैल सिंघ 'सरदार पंछी'**

मुट्ठी में ले ली वक्त की रफ्तार[1] आप ने।
पहनी जो मीरी-पीरी[2] की तलवार आप ने।
शक्ति न बेलगाम[3] रहे भक्ति के बिना,
पहलू-ब-पहलू बांध ली तलवार आप ने।
दुश्मन से कहा आपने, आपने तू पहले वार कर,
पहले नहीं किया है कभी वार आप ने।
किसने निभाये जंग में तहजीब[4] के उसूल?
सरकार आप ने! मेरी सरकार आप ने!!
जो हंसते-हंसते जान भी देते हैं फर्ज पर,
पैदा किये हैं हक के तरफदार[5] आप ने।
शाहों[6] आप शाह, फकीरों में थे फकीर,
इसको बनाया हिस्सा-ए-किरदार[7] आप ने।
लौटे सवाली दर से भर-भर के झोलियां,
खाली कभी न भेजा तलबगार[8] आप ने।
मांगा था एक बेटा मगर पा गयी वो सात,
चश्म[9]-ए-कर्म[10] से देखा जो दातार आप ने!
मंजिल दिखाई देती है मुक्ति की साफ-साफ,
यूं कर दिया है रास्ता हमवार[11] आप ने।
कल को सजेगी इस पे भी कलगी इसी लिये,
सर पर सजाई केसरी दसतार आप ने।
ऐ बाबा बुड्ढा! आपके वरदान को नमन,
अवतार को भी बख्शा है अवतार आप ने।
अब जिंदगी की राह में कोई खलल[12] नहीं,
पलकों से चुन लिये हैं सभी खार[13] आप ने।
दस सूरजों की बज्म[14] के सूरज हैं आप भी,
रौशन जो की है मशल[15]-ए-ईसार[16] आप ने।
मिलती रहेगी रौशनी सदियों तलक हमें,
पाया है आफताब[17]-सा किरदार[18] आप ने।
लगजिश[19] मेरी जुबां में थी, गूंगा मेरा कलम,
बख्शी है इनको कुव्वत[20]-ए-गुफ्तार[21] आप ने।

१. रफ्तार-गति, २. मीरी-पीरी-सांसारिक तथा अध्यात्मिक, ३. बेलगाम-मर्यादा रहित, ४. तहजीब-सभ्यता, संस्कृति, ५. तरफदार-पक्षधर, ६. शाहों-राजाओं, ७. हिस्सा-ए-किरदार-चरित्र का भाग, ८. तलबगार-मांगने वाला, ९. चश्म-आंख, १०. कर्म-कृपा, ११. हमवार-समतल, १२. खलल-बाधा, १३. खार-कांटे, १४. बज्म-संस्था, १५. मशल-मशाल, १६. ईसार-बलिदान, १७. आफताब-सूरज, १८. किरदार-चरित्र, १९. लगजिश-लड़खड़ाहट, २०. कुव्वत-शक्ति, २१. गुफ्तार-बोलना।

**नशेमन, पंजाब माता नगर, लुधियाना-१४१०१३, मो. : ९४१७०-९१६६८*

"दस गुर कथा' कृत कवि कंकण के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन-इतिहास

*-बीबी रविंदर कौर**

दस गुरु साहिबान के जीवन-इतिहास के बारे में जानकारी देने वाले प्रारंभिक स्रोतों में "दस गुर कथा" कृत कवि कंकण एक महत्वपूर्ण रचना है। इसमें दस गुरु साहिबान के कई अहम पक्षों के बारे में जानकारी मिलती है। इस आलेख में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन-इतिहास के बारे में मिलती जानकारी का वर्णन किया जा रहा है :

जन्म : "दस गुर कथा" के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म श्री गुरु अरजन देव जी के घर विश्व-कल्याण हेतु हुआ :

दोहरा।

तिस गुर के परगट भया हरिगोबिंद गुरि आइ।
जगत उधारन कारने जनम धरा जग आइ।४५।

मीरी-पीरी धारण करना : सिक्ख धर्म में श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत से बलिदान-परंपरा का आरंभ हुआ था। श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद सिक्ख-मनों की स्थिति बड़ी अस्थिर थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने लोग-मनों में से समकालीन जुल्म का भय निकालने और इस जुल्म के विरुद्ध सख्त टक्कर लेने के लिए मन में संकल्प लिया। यह संकल्प गुरु साहिब के खड़ग के प्यार में से पैदा हुआ था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा बुड्ढा जी से दो कृपाणें धारण कीं। इन्हें मीरी-पीरी की दो कृपाणें कहा जाता है। कवि कंकण ने मीरी-पीरी की कृपाणें धारण करने की रस्म के बारे में बताते हुए इन्हें देग-तेग, राज-योग, जोग-भोग, जो भक्ति व शक्ति की प्रतीक थीं, स्वैरक्षा की इच्छा मन में लेकर मीरी-पीरी को धारण करके उत्तम पदवी प्राप्त करने के बारे में इस प्रकार वर्णन किया है :

मानहु जग में गुर कीआ खड़ग सों हेतु पिआर।
तुरकन सेती जुद्ध की राखी मनशा धार।४६।
देग तेग दोनों गही राज जोग दुइ कीन।
जोग भोग दोनों कीए उत्तम पदवी लीन।४७।

इससे आगे कवि ने शाहजहां बादशाह के शासन का बड़े विस्तार से वर्णन किया है। कवि के अनुसार शाहजहां का शासन इक्कीस हजार कोस में था और उसके लाहौर, काबुल, कशमीर, मुलतान, पटना, बिहार, बंगाल, अजमेर, गुजरात, अलवर, आगरा, बुरहान, औरंगाबाद, बीजापुर आदि बाईस राज्य थे। इस संबंधी विस्तृत जानकारी के लिए "दस गुर कथा' के बंद ४८-५५ देखे जा सकते हैं। उदाहरण रूप में वर्णन है :

सवैया।

दिल्ली में शाहजहान बसै सभ हिंद के राज का भूप कहावै।
बीस और एक संहस्र कोस मे और न भूपत राज कमावै।
सूबे हैं बीस लहौर समेत सु एक ते एक अनूप दिखावै।
सारसुती किरपा कर है कवि कंकन तुझै सभ नाम सुनावै। . . .
सूबे-सूबे मांहि जो बसहि जि सूबेदार।

**२३, क्राऊन इन्क्लेव, जी. टी. रोड, श्री अमृतसर-१४३००५, मो. : ९७८११-६२१११*

तिनके संग जो चमू है होवत नाहि सुमार।
(४८-५५)

मुगल सैनिकों के साथ श्री अमृतसर का युद्ध : बादशाह जहांगीर ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को ग्वालियर के किले में कैद कर दिया था। रिहाई के बाद गुरु जी के सम्बंध जहांगीर के साथ मित्रतापूर्ण बन गए थे। जहांगीर की मृत्यु के पश्चात शाहजहां दिल्ली के तख्त पर बैठा तो विरोधियों के प्रभाव के कारण शाहजहां के साथ गुरु साहिब के सम्बंध बिगड़ गए। गुरु जी तथा शाहजहां के सैनिकों के मध्य चार युद्ध श्री अमृतसर, श्री हरिगोबिंदपुर, महिराज तथा करतारपुर में हुए। कवि कंकण ने अपनी रचना में केवल पहले युद्ध का ही वर्णन किया है। गुरु साहिब तथा मुगलों के मध्य पहले युद्ध का कारण तथा वर्णन-विस्तार बंद ५६ से ७७ तक लिखा है। कवि के अनुसार इस युद्ध का कारण एक सफेद बाज था। इस युद्ध में गुरु साहिब की जीत हुई :

दोहरा।
मीर शिकार जो शाह के तिन सों उडिआ बाज।
गहि लीआ निज कर गुरू बडे गरीब निवाज।५६।
हरिगोबिंद गुरूआन गुरू कहा : 'बाज इहु श्वेत।
हम क नाराइण दीआ राखों करिकै हेत।'५७।. . .
दोहरा।
दुइ दल आपस मे जुड़े भया अंधेर जहान।
सूरज नजरी न पवै गरद चड़ी असमान।७४।
स्वैया।
मार करी तरवारन की गुर लोथन ऊपर लोथ गिराई।
लोथ के ऊपर लोथ धरी सुम नो सुर लोक लौ सीढी बनाई।
जोऊ बचे तेऊ भाग गए तिन आपणे शाह सों जाइ सुनाई।
जीत भई रन मे गुर फिरी मध्य अकाश मे राम दुहाई।७५।
सुन के शाह जहान ने कीना बहु अफसोस।
'वहु तो पूरा सतिगुरू चलै न तां सों रोस'।७६।
बहुरो साखी अवर इक तो सों सुनाइ।
सुनते बकते दोऊ को होवै राम सहाइ।७७।

भाई बिधीचंद द्वारा घोड़े लाना : काबुल की संगत से छीने गए घोड़ों संबंधी फरियाद सुनकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने भाई बिधीचंद को घोड़े वापिस लाने का काम सौंपा। कवि ने शाहजहां के लाहौर वाले किले के अस्तबल में से भाई बिधीचंद द्वारा ये घोड़े बड़ी चतुराई से वापिस गुरु-दरबार में लेकर आने का जिक्र बहुत विस्तार से किया है।

संक्षिप्त रूप से कहा जा सकता है कि "दस गुर कथा' के कर्त्ता कवि कंकण ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बारे में विस्तृत जानकारी नहीं दी, केवल तीन-चार घटनाओं को, जैसे जन्म के बारे में, देग-तेग (मीरी-पीरी), शाहजहां के राज-विस्तार तथा भाई बिधीचंद द्वारा घोड़े लाने वाली साखी तक ही गुरु-इतिहास को सीमित रखा है।
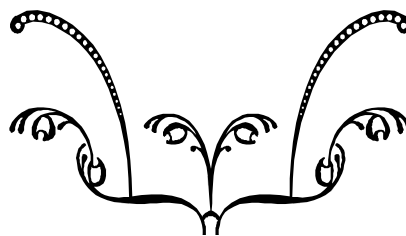
"History of the Sikhs" कृत डॉ. हरीराम गुप्ता में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

-डॉ. नवरत्न कपूर*

जन्म और सैनिक साज-सज्जा : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म १४ जून, (अधिकतर स्रोतों के अनुसार १९ जून) १५९५ को वडाली नामक कसबे में हुआ था। यह स्थान श्री अमृतसर से आठ किलोमीटर की दूरी पर पश्चिम दिशा में है। जब उनके पिता श्री गुरु अरजन देव जी को यह स्पष्ट हो गया कि मुगल शासन की क्रूरता के कारण अब उनका जीवन-काल कुछ ही दिनों का है तो उन्होंने अपने एक विश्वसनीय सेवक द्वारा 'बेल' तथा तांबे के पांच पैसे अपने बेटे श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब के पास भेजकर उन्हें अपना धर्माधिकारी मनोनीत कर दिया। अंग्रेज इतिहासकार मिस्टर एम. मैकालिफ का कथन है कि उन्होंने उसी दूत के हाथ यह आदेश भी भेजा कि वे गुरगद्दी को संभालते समय पूरी तरह शस्त्रधारी हों तथा अपनी सामर्थ्य के अनुसार सेना भी रखें। इन आदेशों के आधार पर डॉ. हरीराम गुप्ता ने कहा है कि अपने पिता की शहीदी से पूर्व भेजे गए इस आदेश का पालन श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब ने किया। बाबा बुड्ढा जी ने सब रस्में पूरी कर उन्हें गुरु-पदवी प्रदान की। बाबा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की कमर के दाहिनी ओर तलवार बांध दी। फिर एक और तलवार उनकी कमर के बाईं ओर बांध दी। गुरु साहिब ने कहा कि ये दो तलवारें 'मीरी और पीरी' अर्थात् 'शक्ति और भक्ति' को चिन्हित करती हैं। उन्होंने सिक्ख समुदाय को 'देग-तेग फतह' का नारा भी दिया। डॉक्टर साहिब के शब्दों में "One symbolised temporal power and the other spiritual power, one to smite the oppressor, the other to protect the innocent. . . . Their deg or meals for friends and teg or punishment for foes would always be ready."

यही नहीं, उन्होंने सिक्खों को एक तलवार धारण करने तथा सवारी के लिए एक घोड़ा रखने का आदेश भी दिया। उन्होंने अपने सुडौल शिष्यों को शस्त्रास्त्रों को चलाने की शिक्षा भी प्रदान की। बावन सिपाही उनके अंगरक्षक के रूप में कार्यरत रहते थे और उनकी सेना में तीन सौ घुड़सवार विद्यमान रहते थे। उनके अस्तबल में सात सौ घोड़े खड़े रहते थे। मैकालिफ का कथन है कि गुरु साहिब की घुड़सवार सेना में माझा, दोआबा और मालवा क्षेत्र के पांच सौ नौजवान भर्ती किए गए थे। इसके अतिरिक्त बहुत-से ऐसे भी घुड़सवार थे जो कि दो समय के भोजन और छ: मास के पश्चात एक नई वर्दी मिलने से ही प्रसन्न रहते थे, क्योंकि उनका विश्वास था कि गुरु साहिब अपने सही अधिकार की लड़ाई लड़ रहे हैं और ऐसे समय में उनका साथ देना प्रत्येक सैनिक के लिए मुक्तिदायक सिद्ध होगा। गुरु साहिब अपने श्रद्धालुओं को शस्त्रास्त्र और घोड़े भेंट करने के लिए कहते थे। उन्होंने श्री अमृतसर में एक किले का निर्माण करवाया, जिसका नाम 'लोहगढ़' रखा गया। उनका अपना झंडा और एक बड़ा नगाड़ा था, जो कि सूर्योदय तथा

*९०१, टावर डी-३, सागर दर्शन टावर्स सोसाइटी, पाम बीच रोड, सेक्टर-१८, नेरूल (नवी मुंबई)-४००७०६

सूर्यास्त के समय बजाया जाता था। मुगल अधिकारी इसे गुरु साहिब की राजनैतिक सज-धज मानते थे।

श्री अकाल तख्त साहिब : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अमृतसर में श्री हरिमंदर साहिब के सामने एक भवन का निर्माण सन् १६०६ ई में करवाया। इसका नाम "श्री अकाल तख्त साहिब" धरा गया। वहीं पर वे १२ फुट ऊंचे एक चबूतरे पर शाही पोशाक में सिंघासनारूढ़ होते थे। इस प्रकार श्री हरिमंदर साहिब आध्यात्मिक अधिकार का और श्री अकाल तख्त साहिब प्रशासनिक अधिकार का केंद्र कहलाने लगा। यहां बैठकर गुरु जी कुश्ती और तीरंदाजी के मुकाबले देखते थे तथा एक बादशाह की तरह दोषियों को दंडित करते एवं शूरवीरों को सम्मानित करते थे। वे स्वयं भी वीरतापूर्ण घटनाएं सुनाते थे और उनके ढाडी योद्धाओं की शूरवीरता की गाथाएं सुनाया करते थे। इन ढाडियों में अब्दुल्ला, बाबक और नत्था के नाम प्रसिद्ध हैं। वीर-गाथाओं में चित्तौड़ के राजपूत जैमल और फत्ता का महिमा-गान बड़े जोश के साथ किया जाता था। सिक्ख इतिहास में श्री अकाल तख्त साहिब ही सिक्ख धर्म का पहला तख्त (शौर्य-सूचक केंद्र) कहलाता है और वहीं पूर्ववर्ती गुरु साहिबान के भक्तिपरक सिद्धांतों में शक्तिपरक सिद्धांतों के समावेश की सुगंधि आती है। इस प्रकार मुगल राज्य के अंतर्गत एक स्वायत्त शासन की स्थापना हो गई, जिसकी निजी वित्तीय नीति को श्री गुरु अमरदास जी और पिता श्री गुरु अरजन देव जी की अनूठी देन कहना अनुचित न होगा।

सामूहिक प्रार्थना और प्रचारक : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने अनुयायियों में जहां शक्ति-संचार किया वहीं अपने पूर्वजों से चली आ रही भक्ति-भावना को सुदृढ़ करने के लिए सामूहिक प्रार्थना और श्री आदि ग्रंथ साहिब के संकीर्तन पर भी बल दिया। इस संबंध में मोहसिन फानी के विचार लेखक ने इस प्रकार उद्धृत किए हैं : "When a Sikh wished for God's favour or gift, he would come to an assembly of the Sikhs and would request them to pray for him. Even the Guru himself asked the Sikh congregation (Sangat or Anjuman-e-Sikhan) to pray for him."

इससे प्रकट है कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार से मुंह नहीं मोड़ा। श्री गुरु अरजन देव जी के जीवन-काल वाले 'मसंद' केवल पंजाब तक ही सीमित थे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने पंजाब से सटे पहाड़ी क्षेत्र (आधुनिक हिमाचल प्रदेश) के अतिरिक्त इस कार्य हेतु बिहार तथा बंगाल की ओर भी कदम बढ़ाए। बिहार और बंगाल के ही नहीं बल्कि उत्तर प्रदेश में कार्यरत बहुत-से व्यापारी भी गुरु साहिब के दर्शनार्थ आते थे और गुरु जी उन्हें विदायगी के समय सिक्ख धर्म के प्रचार में बढ़-चढ़कर रुचि लेने के लिए प्रेरित करते थे। भाई गुरदास जी ने अपनी दूसरी वार में नवल और निहाला नामक सभरवाल खत्री वंशज महानुभावों का उल्लेख किया है। इन्होंने बिहार राज्य में व्यापार करते समय अपने आदर्शमय जीवन से बहुत-से लोगों को प्रभावित किया जिसके फलस्वरूप बिहार के कई मूल निवासी सिक्ख धर्म में प्रविष्ट हो गए।

गुरु साहिब के विरोधी और गुरु जी की ग्वालियर के किले में कैद : पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के विरुद्ध मुगल बादशाह जहांगीर को भड़काने वाले चारों व्यक्ति--प्रिथीचंद, चंदूशाह, शेख अहमद सरहिंदी और शेख फरीद बुखारी, उनकी शहीदी के बावजूद अब भी बाज न आए। उन्होंने अब श्री गुरु

हरिगोबिंद साहिब के विरुद्ध बादशाह जहांगीर को उकसाया। जहांगीर ने आदेश जारी किया कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अपने पिता पर लगाए गए दो लाख रुपए के दंड की वह बकाया राशि अदा करें जो कि सरकार द्वारा बेची गई उनकी संपत्ति से भी पूरी नहीं हुई। वस्तुत: बादशाह जहांगीर गुरु साहिब के शाही ठाठ-बाठ और आखेट-क्रिया से भयभीत था। (पृष्ठ १५९) उसने गुरु साहिब को दिल्ली में बुलाकर अनेक प्रश्नोत्तर किए, जिससे संतुष्ट होकर जहांगीर ने उन्हें अपने आखेट-अभिमान में सहयोग देने के लिए कहा। गुरु साहिब ने एक शेर को मारकर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया। इससे प्रभावित होकर बादशाह गुरु साहिब को अपने साथ आगरा ले गया। रास्ते में उसने गुरु साहिब से पूछा, "आपको 'सच्चे पातशाह' क्यों कहा जाता है? क्या इसका यह अर्थ है कि बादशाह एक झूठा सम्राट है?"

इस पर गुरु साहिब ने उत्तर दिया, "मैंने किसी को नहीं कहा कि मुझे 'सच्चे पातशाह' पुकारें। जहां श्रद्धालु-जनों से प्रेम हो वहां पर औपचारिकता की आवश्यकता नहीं है। जो कोई जिस तरह किसी से व्यवहार करता है, उसी तरह का व्यवहार दूसरा उससे करता है। मैं अपने सिक्खों से उसी मात्रा में प्रेम करता हूं जितना वे मेरे प्रति दर्शाते हैं।"

आगरा में बादशाह बीमार पड़ गया। चंदूशाह ने ज्योतिषियों को भड़काया कि वे बादशाह जहांगीर से कहें कि यदि रोग-मुक्त होना है तो श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को जेल में डाल दो, क्योंकि उसी के कारण तुम ग्रह-दशा का शिकार हुए हो। फलत: गुरु साहिब को ग्वालियर के किले में कैद कर दिया गया और इसकी कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं की गई। इसका प्रमाण जहांगीर की दैनंदिनी अथवा आत्मकथा "तुजक-ए-जहांगीरी" में मिलता है। गुरु साहिब की कैद की अवधि के बारे में तत्कालीन इतिहासकारों में मतभेद हैं, फिर भी मुहम्मद मुजीब नामक इतिहासकार के कथन को प्रमाणिक मान कर डॉ. हरीराम गुप्ता ने लिखा है कि गुरु साहिब को सन् १६०९ में कैद किया गया था और साईं मियां मीर की सिफारिश पर सन् १६२० में रिहा किया गया था। गुरु साहिब ग्वालियर से लाहौर जाते समय आगरा पहुंचे तो साईं मियां मीर भी उनके साथ लाहौर की ओर चल दिए। अक्तूबर १६२० ई. में गुरु साहिब दीवाली के अवसर पर श्री अमृतसर पधारे।

गुरु साहिब के मन में जहांगीर बादशाह के प्रति कोई वैमनस्य न था। जब वह सन् १६२१ में दोबारा कशमीर वादी की यात्रा के लिए जा रहा था तो गुरु साहिब ने ब्यास नदी के किनारे उससे भेंट की। बादशाह ने उन्हें अपने साथ कशमीर में चलने का अनुरोध किया। लाहौर से कशमीर जाते समय गुजरात (पश्चिमी पंजाब, आधुनिक पाकिस्तान का एक नगर) में सड़क दो भागों में बंट जाती है। बादशाह का लश्कर वहां पर कुछ देर रुका। वहां पर गुरु साहिब की भेंट वहां के स्थानीय महिमाशाली मुस्लिम फकीर शाहदौला से हुई। उसका मत था कि एक धार्मिक व्यक्ति को सांसारिक वस्तुओं से उचाट रहना चाहिए। अत: गुरु साहिब के शाही ठाठबाठ देखकर शाहदौला ने तिलमिला कर उनसे पूछा कि उनके पास इतने अधिक श्रद्धालु, धन और घोड़े क्यों हैं? गुरु साहिब का उत्तर था, "औरत ईमान है, औलाद निशान है, जर गुजरान है, घोड़ा शान है।"

कुछ सिक्ख विद्वानों का मत है कि कशमीर में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की भेंट महाराष्ट्र केसरी शिवाजी के 'गुरु' स्वामी रामदास

से भी हुई। उन्होंने गुरु साहिब से प्रश्न किया, "मैंने सुना है कि आप श्री गुरु नानक देव जी की गद्दी पर विराजमान हो। गुरु नानक साहिब ने तो सांसारिक मोह-माया का त्याग कर दिया था, जब कि आप कृपाण धारण करते हैं, घोड़े और सेना रखते हैं, यही नहीं लोग आपको 'सच्चा पातशाह' भी पुकारते हैं, तुम कैसे साधु हो?"

गुरु साहिब ने उत्तर दिया, "बातां फकीरी, जाहिर अमीरी। तलवारें तो गरीबों की रक्षा और अत्याचारियों के विनाश के लिए धारण की हैं। बाबा नानक ने संसार का त्याग नहीं किया था, उन्होंने तो माया का त्याग किया था।"

स्वामी रामदास गुरु साहिब की हाजिर-जवाबी से प्रसन्न हुआ और कालांतर में उसी तरह का (सैनिक) प्रशिक्षण वीर शिवाजी को प्रदान किया।

सचेतना शक्ति की प्राप्ति : कशमीर से लौटने के पश्चात् श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जहांगीर के एक विश्वसनीय सहयोगी की भूमिका अदा करने लगे। मोहसिन फानी द्वारा लिखे अनुसार पंजाब के प्रशासनिक कार्यों की देखरेख का उत्तरदायित्व गुरु साहिब को सौंपा था। उन्होंने यह कार्य केवल सिक्ख धर्म की प्रतिष्ठा बढ़ाने और जालिमों को शिक्षा दिलवाने के लिए ही स्वीकार किया था। (पृष्ठ १६३)

श्री हरिगोबिंदपुर में टकराव : श्री गुरु अरजन देव जी ने सन् १५९५ ई में श्री हरिगोबिंदपुर नामक नगर अपने एकमात्र पुत्र के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में बसाया था। अपने नाम-वाचक उसी नगर के विकास के लिए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने पग उठाया। उस कसबे की कुछ बंजर जमीन पर भगवानदास नामक एक खत्री ने अधिकार जताया। वह एक सूदखोर व्यक्ति था और लोग उसे 'किरार' पुकारते थे। गुरु साहिब वहां पर कुछ इमारतें बनवाना चाहते थे, जिसका विरोध भगवानदास ने किया। यही नहीं, कुछ बदमाशों को साथ लेकर उसने गुरु साहिब के शिविर पर हमला भी कर दिया। गुरु साहिब के सैनिकों ने भगवान दास को मार गिराया। इस घटना से कुपित भगवान दास के बेटे रतन चंद ने चंदूशाह के पुत्र करमचंद से सांठ-गांठ करके जलंधर के मुस्लिम फौजदार की शरण ली और उसने उनकी विनती सुनकर अपनी सेना की कुछ टुकड़ियां श्री हरिगोबिंदपुर की ओर भेजीं। गुरु साहिब ने आगे बढ़कर ब्याद नदी के रहिलाघाट पर उन्हें रोक लिया, जिसके कारण सभी सैनिक डर के मारे भाग गए।

कीरतपुर की स्थापना : गुरु साहिब शाही ठाठबाठ से रहते थे, जिसके कारण अनेक ईर्ष्यालु उनसे चिढ़े रहते थे। गुरु साहिब ने संभावी आपातकाल को दृष्टि में रख कर पहाड़ी क्षेत्र में अपना सुरक्षित डेरा बनवाने का निश्चय किया। एतद्‌र्थ उन्होंने सन् १६२४ ई में अपने बड़े सपुत्र बाबा गुरदित्ता जी को हिंडूर (नालागढ़) के राजा धरम चंद के पास भेजा। धरम चंद ने बाबा गुरदित्ता जी का गर्मजोशी से स्वागत किया और अपने मनोनुकूल स्थान चुनने के लिए कहा। बाबा गुरदित्ता जी को भटकाने वाली पहाड़ियां पसंद न आईं। वे ऐसे स्थल की तलाश में थे जो कि मैदानी क्षेत्र के समीप हो, किंतु दिल्ली और लाहौर वाली आम सड़क से दूर हो। उन्होंने शिवालिक की पहाड़ियों की तलहटी में स्थल चुना। यह क्षेत्र कहलूर अथवा बिलासपुर रियासत के अंतर्गत आता था। कहलूर के राजा कल्याण चंद ने वह जगह २३ अप्रैल, सन् १६२४ को उन्हें तोहफे के रूप में मुफ्त भेंट की। बाबा गुरदित्ता जी ने वहां कुछ घर और एक गुरुद्वारा बनवाया। गुरुद्वारे में सुबह-शाम नियमित रूप से श्री आदि ग्रंथ साहिब

का कीर्तन होने के कारण लोग इसे 'कीर्तनपुर' पुकारते थे। कालांतर में यह 'कीरतपुर' के नाम से विख्यात हुआ।

गुरु साहिब के युद्ध : बादशाह जहांगीर का देहांत ७ नवंबर, १६२७ ई को राजौरी (जम्मू-कशमीर रियासत) में हो गया। आपसी घरेलू विवाद के कारण उसके पुत्र शाहजहां को बादशाहत २४ फरवरी, १६२८ ई को प्राप्त हुई। यद्यपि उसकी माता एक हिंदू की बेटी थी, फिर भी वह कट्टर मुसलमान बादशाह के रूप में नजर आया। उसने पंजाब के तीन मंदिरों को विध्वंस करवाकर उनकी जगह मस्जिदें बनवा दीं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने पिता गुरु अरजन साहिब की स्मृति में एक बाउली (जल सरोवर) बनवायी थी, जिसमें कूड़ा-कर्कट भरवा दिया गया और उसके समीपस्थ 'लंगर' (भोजनशाला) को एक मस्जिद का रूप दे दिया गया।

ऐसी उत्तेजक हरकतों के बावजूद गुरु साहिब ने बादशाह जहांगीर की भांति उसके पुत्र नए सम्राट शाहजहां से सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने की चेष्टा की और पंजाब के फौजदार यार खां से मित्रता रखी। सन् १६२८ में बादशाह शाहजहां जल्लू (लाहौर और श्री अमृतसर का मध्यवर्ती क्षेत्र) नामक जंगल में शिकार कर रहा था। संयोगवश गुरु साहिब भी अपने सिक्खों के साथ पहुंच गए। वहां पर शाही नौकरों के साथ एक बाज को मार गिराने के सिलसिले में गुरु साहिब के सेवकों में हाथापाई तक की नौबत आ गई। तद्नंतर शाहजहां के मन में बदले की भावना ने घर कर लिया और उसने सिक्ख धर्म विरोधी कार्य शुरू कर दिए। इसके फलस्वरूप गुरु साहिब और मगुलों के मध्य पांच युद्ध हुए, जिनका स्थान और समय इस प्रकार है :

१. संगराणा की लड़ाई, सन् १६२८
२. श्री अमृतसर की लड़ाई, १४ अप्रैल, सन् १६३४
३. लहरा तथा गुरूसर की लड़ाई, दिसंबर सन् १६३४
४. करतारपुर की लड़ाई, २६ अप्रैल, सन् १६३५
५. फगवाड़ा की लड़ाई, २९ अप्रैल, सन् १६३५

वस्तुत: ये लड़ाइयां गुरु साहिब ने आत्म-रक्षा हेतु लड़ीं। फिर भी उन्होंने प्रत्येक युद्ध में अपने विरोधी के छक्के छुड़ा दिए और अंतत: करतारपुर (जलंधर, पंजाब का एक प्रसिद्ध नगर) में सन् १६३५-१६४४ तक भजन-कीर्तन और संगत-सेवा में लीन रहे। वहीं पर वे रविवार, ३ मार्च, सन् १६४४ को ज्योति-जोत समा गए।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के व्यक्तित्व का विश्लेषण उनके समकालीन और आधुनिक इतिहासकारों ने गहन दृष्टि से किया है। सभी के विचारों का विश्लेषण देखकर अंतत: डॉ. हरीराम गुप्ता ने यह टिप्पणी की है :

"Hargobind was the first Guru to have restored to arms in order to redress the grievances of the community. The constitution agitation was meaningless as there was no constitution. He made it clear to everybody the fighting against the wrongs was not against the spirit of any religion, but it was an essential ingredient of a practical religion and that hunting and sport was not opposed to religious piety. The Guru had fully justified his wearing of two swords, representing Miri and Piri. He combined in himself the spiritual and military leadership. The political aspect of it was left out as the time was not opportune." (Page 178)

"सिक्ख रिलीजन" कृत मैकालिफ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन-वृत्तांत

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

मिस्टर मैक्स आर्थर मैकालिफ ने अपने ग्रंथ "सिक्ख रिलीजन" के चौथे भाग में छठम पातशाह साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन-वृत्तांत को प्रस्तुत किया है।

प्रारंभिक जीवन : मिस्टर मैकालिफ ने छठम पातशाह के आरंभिक जीवन का वर्णन श्री गुरु अरजन देव जी के जीवन-वृत्तांत में किया है। मैकालिफ के अनुसार आषाढ़ महीने की २१ तारीख संवत् १६५२ वि. मुताबिक सन् १५९५ ई को वडाली गांव में बाबा बुड्ढा जी के पुत्र-प्राप्ति वर के फलस्वरूप माता गंगा जी की कोख से (गुरु) हरिगोबिंद साहिब ने अवतार धारण किया।

पंचम पातशाह के बड़े भ्राता प्रिथीचंद स्वयं 'गुरु' बनना चाहता था, परंतु उसकी दुष्ट वृत्तियों के कारण चौथे पातशाह ने उसे अयोग्य माना। बाद में प्रिथीआ और उसकी पत्नी करमो अपने पुत्र मिहरबान को 'गुरु' बनवाना चाहते थे। पंचम पातशाह के घर पुत्र न होने के कारण ये दोनों बड़े प्रसन्न थे कि अब मिहरबान को 'गुरु' बनने से कोई नहीं रोक सकता।

जब प्रिथिए और करमो को (गुरु) हरिगोबिंद साहिब के जन्म के विषय में पता चला तो उनकी ईर्ष्या का अंत न रहा। उन्होंने बाल (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को मारने के षड़यंत्र रचने शुरू कर दिये। पहले एक कपटी दाई को भेजकर बालक को विष देने की कोशिश की गई, फिर सपेरा भेज सांप से डंसवाने की साजिश रची, फिर कई जादू-टोने किये गये, परंतु अकाल पुरख की कृपा से सारे षड़यंत्र विफल गये। (गुरु) हरिगोबिंद साहिब अपने ताया महादेव की देख-रेख में शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करते रहे।

मुगल बादशाह का दीवान चंदू अपनी बेटी सदा कौर का विवाह (गुरु) हरिगोबिंद साहिब से करना चाहता था। वो अहंकारवश गुरु-घर के प्रति अनेक अपशब्दों का प्रयोग भी करता था। अत: पंचम पातशाह ने चंदू से रिश्ता तोड़कर (गुरु) हरिगोबिंद साहिब का अनंद कारज माघ सुदी सप्तमी संवत् १६६१ वि. को एक सिक्ख नारायण दास की कन्या से कर दिया। इससे चंदू प्रिथिए और मिहरबान के साथ मिलकर पंचम पातशाह के विरुद्ध षड़यंत्र रचने में जुट गया।

अनेक षड़यंत्रों एवं जहांगीर की हठधर्मिता के चलते पंचम पातशाह को लाहौर आना पड़ा। गुरु जी को भविष्य का ज्ञान था, सो आपने परंपरा के अनुसार (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को गुरगद्दी सौंपी और लाहौर आ गये, जहां मात्र पांच दिनों बाद पंचम पातशाह ने शहादत प्राप्त की।

गुरिआई-प्राप्ति : मैकालिफ लिखता है कि पंचम पातशाह की शहादत के उपरांत दस दिनों तक श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी का पाठ एवं कीर्तन जारी

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ०९४१७२-७६२७१*

रहा। छठम गुरु जी ने सिक्ख संगत को उपदेश दिया कि पुरातन अंतिम संस्कार की रीतियां न की जायें। उसकी जगह श्री ग्रंथ साहिब का पाठ किया जाये और अरदास की जाये। इसके उपरांत पवित्र लंगर बरताया गया।

मीरी-पीरी की कृपाणें धारण करना : मैकालिफ लिखता है जब बाबा बुड्ढा जी गुरु हरिगोबिंद साहिब को पारंपरिक 'ऊनी सेली' बांधने बांधने लगे तो मात्र ग्यारह वर्षीय छठम पातशाह ने फरमाया कि 'सेली' को तोशेखाने में रखवा दिया जाये। मेरी 'सेली' मेरी तलवार की पेटी होगी और मैं अपनी दसतार पर कलगी सजाया करूंगा। फिर गुरु साहिब ने स्वयं को सैनिक ढंग से सजाया और दो कृपाणें धारण कीं। बाबा बुड्ढा जी युवा गुरु जी की सैनिक सजधज देखकर कुछ रोष में आ गये तो छठम पातशाह ने फरमाया कि "मेरा जन्म आपके आशीर्वाद से हुआ है। मैं आपकी भविष्यवाणी को पूरा करूंगा। मैंने आपके आशीर्वाद सदका 'मीरी' और 'पीरी' की दो तलवारें धारण की हैं जो सांसारिक और आध्यात्मिक प्रभु-सत्ता की प्रतीक हैं। गुरु-घर में अब सांसारिक और धार्मिक कार्य साथ-साथ चलेंगे। 'देग' का प्रयोग गरीबों की जरूरतें पूरी करने के लिए और 'तेग' का प्रयोग जालिमों का नाश करने के लिए होगा।"

सिक्खों को शस्त्रधारी बनाना : इसके साथ ही गुरु जी ने सिक्खों को शस्त्रधारी बनाने के प्रयास भी शुरू कर दिये। मैकालिफ ने लिखा है कि गुरु जी ने मसंदों और सिक्ख संगत को पत्र लिखे कि यदि वे धन की जगह हथियार एवं घोड़ों की भेंट लेकर आयेंगे तो हमें अधिक प्रसन्नता होगी। शीघ्र ही बहुत से जंगजू और पहलवान गुरु जी की प्रसिद्धि सुनकर उनकी सेवा में हाजिर हो गये। गुरु जी ने अपने विशेष दसते के रूप में ५२ वीर योद्धाओं को चुना जो भविष्य की सिक्ख-सेना का केंद्र-बिंदु बने। मैकालिफ ने इस संदर्भ में एक अन्य स्थान पर जिक्र किया है कि माझे और दोआबे के ५०० नौजवान गुरु जी के पास फौजी भर्ती के लिए आये। इन नौजवानों ने गुरु साहिब से निवेदन किया कि उनके पास भेंट करने के लिए जीवन के सिवा कुछ नहीं है। तनखाह के रूप में उन्हें सिर्फ गुरु जी का आध्यात्मिक उपदेश ही चाहिए। गुरु जी ने प्रत्येक नौजवान को एक घोड़ा व शस्त्र दिये और अपनी सेना में भर्ती कर लिया।

मैकालिफ आगे लिखता है कि गुरु जी की सैनिक तैयारियों को देखकर भ्रष्टाचारी व बेईमान मसंद भयभीत हो गये। उन्होंने माता गंगा जी से प्रार्थना की कि "गुरु जी अभी लड़कपन की उम्र में हैं। हमें मार्ग दिखाने वाला कोई सियानी उम्र का व्यक्ति नहीं है। गुरु जी सैनिक तैयारियों में लगे हैं। फकीरों के लिए शासन करना खतरे से खाली नहीं। पहले पांच गुरु साहिबान ने शस्त्रों का प्रयोग नहीं किया।" माता गंगा जी ने उन्हें उत्तर दिया कि "गुरु नानक साहिब का हाथ हमारे सुपुत्र पर है। बाबा बुड्ढा जी के वचन कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब दुनियावी और आध्यात्मिक दोनों दुनिया के हुक्मरान होंगे और दो कृपाणें धारण करेंगे, अवश्य पूरे होने वाले हैं।" उधर गुरु जी ने जब यह सब सुना तो फरमाया कि "माता जी, आप चिंता न करें, सब कुछ अकाल पुरख के भाणे में है।"

सेना का आकार बढ़ता चला गया। गुरु जी ने भाई बिधीचंद, भाई पिराणा, भाई जेठा, भाई पैड़ा और भाई लंगाह को जत्थेदार नियुक्त किया।

श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना : मैकालिफ के अनुसार आषाढ़ संवत् १६६३ वि. के शुक्ल पक्ष पंचमी वाले दिन गुरु जी ने 'अकाल

बुंगे' की नींव रखी। ठोस चिनाई से उसारे जाने के बाद छठम पातशाह ने इस पर अपना सिंघासन सजाया।

छठम पातशाह की दिनचर्या : मैकालिफ ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की दिनचर्या का भी विस्तार से वर्णन किया है। वह लिखता है कि गुरु साहिब अमृत वेला उठते, स्नान करते, सैनिक पोशाक पहनते और श्री हरिमंदर साहिब में जाकर नाम-सिमरन में लीन हो जाते। 'जपु जी साहिब' और 'आसा की वार' का कीर्तन सुनते। फिर सिक्खों को उपदेश देते। 'अनंदु साहिब' के पाठ के बाद अरदासा सोधा जाता। फिर सारी संगत बिना किसी भेदभाव के एक ही पंगत में बैठकर लंगर छकती। इसके पश्चात् गुरु जी कुछ समय विश्राम करते और फिर दल-बल के साथ शिकार खेलने चले जाते।

'रहरासि' के समय गुरु जी अपने तख्त पर विराजते और संगत से वचन-विलास करते। रागी गुरबाणी गायन करते, 'सो दरु' पढ़ा जाता और अरदास सोधी जाती। फिर गुरु जी और सिक्ख लंगर छकते। इसके बाद एक और एकत्रता होती जिसमें ढाडी वीररसी वारों का गायन करके सिक्खों में वीरता उभारने का प्रयास करते। अंत में 'सोहिला' पढ़ने के उपरांत गुरु जी अपने रैण-बसेरे में चले जाते। माता जी को माथा टेकते और आशीष प्राप्त करके शयन के लिए चले जाते।

जहांगीर से भेंट और उसकी चीते से रक्षा: चंदू निरंतर गुरु-घर का वैरी बना हुआ था। उसने जहांगीर के कान भरे कि गुरु हरिगोबिंद साहिब आपसे अपने पिता का बदला लेने की फिराक में हैं। उन्होंने सेना इकट्ठी करनी शुरू कर दी है। उनसे बगावत का डर है। गुरु-घर के प्रेमी वजीर खां ने गुरु जी के प्रेम एवं मानवतावादी दृष्टिकोण का हवाला देकर बादशाह को समझाने का भरसक प्रयास किया, परंतु जहांगीर फिर भी छठम पातशाह से मिलना चाहता था। उसने वजीर खां और किंग बेग को गुरु जी को लाने हेतु भेजा। उधर सिक्ख-संगत में यह मसला बहस का विषय बन गया कि गुरु जी को दिल्ली जाना चाहिए या नहीं, क्योंकि जब पंचम पातशाह उसके पास गये थे तो कभी वापिस नहीं आये। सिक्खों को फिर बादशाह से हानि की आशंका थी।

अंतत: सूझवान सिक्खों के मशवरे के बाद यह तय हुआ कि गुरु जी बादशाह से मुलाकात के लिए जायेंगे। मैकालिफ के अनुसार २ माघ संवत् १६६९ वि. (१६१२ ई.) को गुरु जी दिल्ली की ओर चल दिये।

गुरु जी ने दिल्ली पहुंचकर 'मजनूं का टीला' स्थान पर ठहराव किया। बादशाह ने गुरु जी का स्वागत किया और मात्र १७ वर्ष की आयु में उन्हें आध्यात्मिक गुरगद्दी पर विराजमान देख आश्चर्यचकित रह गया। उसने गुरु जी के रूहानी ज्ञान को परखने के लिए कई प्रश्न किये। गुरु जी ने गुरबाणी के आधार पर ऐसी व्याख्या की कि बादशाह का संशय श्रद्धाभाव में बदल गया।

इसके उपरांत बादशाह ने गुरु जी को आगरा चलने की विनती की। गुरु जी की शिकार में दिलचस्पी देखकर जहांगीर गुरु जी के साथ शिकार पर निकला। जंगल में एक चीते ने अचानक बादशाह पर आक्रमण कर दिया। गुरु जी तुरंत घोड़े से उतरे और ढाल पर चीते के पंजों को संभालते हुए कृपाण का एक ऐसा वार किया कि चीते के दो टुकड़े हो गये। जहांगीर अब गुरु जी का पूरा मुरीद बन गया।

ग्वालियर के किले में प्रवास : इतने में

जहांगीर बीमार पड़ गया। जहांगीर थोड़ा वहमी भी था। चंदू के भेजे एक पाखंडी ज्योतिषी ने उसे भ्रम में डाल दिया कि यदि गुरु जी ग्वालियर के किले में रहकर आराधना करेंगे तो उसके बुरे ग्रह टल जायेंगे। जहांगीर ने गुरु जी से प्रार्थना की तो वे खुशी-खुशी ग्वालियर के किले में जाने के लिए तैयार हो गये।*

गुरु जी ग्वालियर के किले में पहुंचे तो वहां की व्यवास्था देखकर बड़े दुखी हुए। वहां जहांगीर द्वारा कैद किये गये ५२ राजा भी थे जो बड़ी मंदी हालत में रह रहे थे। गुरु जी की आमद के विषय में सुनकर राजाओं के लिए अच्छे भोजन और वस्त्र का प्रबंध करवाया।

गुरु जी ने कहा कि वे किले का भोजन नहीं करेंगे। यदि कोई सिक्ख किरत-कमाई करके उन्हें लंगर छकायेगा तो वे खुशी-खुशी छक लेंगे। सो अगले दिन सिक्ख एक ठठेरे के यहां गये, सारा दिन तांबा कूटा। उस कमाई से वे जो भोजन लाये उसे गुरु जी ने प्रेमपूर्वक छका।

उधर चंदू ने किलेदार को बहकाकर, षड़यंत्र रचकर गुरु साहिब को मारने की कई चालें चलीं, परंतु किलेदार गुरु जी से इतना प्रभावित था कि उसने चंदू की हर साजिश छठम पातशाह के सामने बेनकाब कर दी।

जब गुरु जी लंबे समय तक वापस नहीं आये तो चिंतित माता गंगा जी ने बाबा बुड्ढा जी को भेजा। गुरु जी ने माता जी को दिलासा देते हुए एक पत्र लिखा कि यहां किले में अनेक प्रेमी मेरे पास हैं, आप चिंता न करें, मैं शीघ्र ही आकर आप से मिलूंगा।

मैकालिफ ने गुरु जी के 'बंदी छोड़ स्वरूप' का भी सुंदर वर्णन किया है। वह लिखता है कि गुरु जी ने बादशाह को संदेश भेजा कि सभी कैदी राजाओं को रिहा कर देना होगा। बादशाह ने कहा कि वे लाखों रुपयों के देनदार हैं, परंतु गुरु जी नहीं माने। सभी राजाओं ने गुरु जी के चोले की झालर पकड़ ली और तब तक पकड़े रखी जब तक वे सारे मुक्त नहीं हो गये। मैकालिफ लिखता है कि इसलिए छठम पातशाह को 'बंदी छोड़ बाबा' भी कहा जाता है। इसके बाद गुरु जी दिल्ली होते हुए श्री अमृतसर वापस आ गये।

साईं मियां मीर जी से भेंट : इन्हीं दिनों गुरु जी की पंचम पातशाह के परम मित्र साईं मियां मीर जी से भेंट हुई। साईं जी ने कहा, "गुरु जी अल्लाह के सच्चे और सहृदय पात्र हैं। इनका दिल पावन है और इनके शब्द मन को प्रभावित करते हैं।"

बीबी कौलां का प्रसंग : मैकालिफ ने बीबी कौलां के प्रसंग का विस्तार से वर्णन किया है। बीबी कौलां लाहौर के काजी की पुत्री थी जो साईं मियां मीर जी की शिष्या थी। उसके हृदय में गुरु-घर एवं छठम पातशाह के प्रति बहुत श्रद्धा थी। काजी गुरु साहिब को पसंद नहीं करता था। जब उसने बेटी के मुंह से गुरु जी की प्रशंसा सुनी तो आग-बबूला हो उठा। नाराज होकर काजी ने बेटी को इसलाम-विरोधी आचरण के लिए सजा देने की ठानी। बीबी कौलां की मां को जब इसकी भनक पड़ी तो उसने पुत्री को साईं मियां मीर जी के यहां भेज दिया। साईं मियां मीर जी ने उसे गुरु जी की हिफाजत में जाने की सलाह दी। गुरु जी एवं माता गंगा जी ने बीबी कौलां के गुरमति-

**बहुत से इतिहासकारों का मत है कि जहांगीर ने गुरु जी को धोखे से ग्वालियर के किले में कैद कर लिया था। -संपादक।*

प्रेम से प्रभावित होकर उसे शरण में ले लिया। गुरु जी ने बीबी कौलां के नाम पर एक सरोवर **'कौलसर'** खुदवाया और निकट भवन बनवाकर उसे आध्यात्मिक साधना करने के लिए कहा। बीबी कौलां ने श्री अमृतसर में सारा जीवन गुरु-आज्ञा के अनुसार व्यतीत किया।

काजी ने बादशाह से शिकायत की, परंतु जहांगीर ने गुरु जी के विरुद्ध कोई भी बात सुनने से इंकार कर दिया।

श्री नानकमता साहिब एवं कश्मीर की फेरी: इसके उपरांत गुरु जी बाबा अलमस्त के बुलावे पर उत्तर प्रदेश (अब उत्तराखंड) के श्री नानकमता साहिब स्थान पर गये। प्रथम पातशाह श्री गुरु नानक देव जी तीसरी उदासी के समय यहां आये थे और सिद्धों के साथ गोष्ठी करके उन्हें निरुत्तर करके इस स्थान का उद्धार किया था। **'गोरखमता'** कहलाने वाला यह स्थान तब से **'नानकमता'** कहलाने लगा था।

बाबा अलमस्त ने गुरु जी से प्रार्थना की कि सिद्ध पन: इस स्थान कब्जा करना चाहते हैं। उन्होंने प्रथम पातशाह के पावन स्पर्श से हरे-भरे पीपल को भी सुखा दिया है। छठम पातशाह श्री नानकमता साहिब गये और उसे सिद्धों से मुक्त करवाया। गुरु जी ने पीपल के नीचे एक चबूतरा बनवाया, उस पर बैठकर **'सो दरु'** का पाठ किया। फिर गुरु जी ने सूखे पीपल पर केसर छिड़का। सूखा पीपल पुन: हरा-भरा हो गया। सिद्धों ने अपनी शक्तियों से छठम पातशाह को भयभीत करना चाहा, परंतु उनकी एक न चली। अंतत: वे शर्मिंदा होकर चले गये।

इसके बाद गुरु जी कश्मीर-यात्रा पर चले गये। श्रीनगर में प्रेमी सिक्ख सेवादास की मां भागभरी ने गुरु जी को लंबे समय से तैयार किया हुआ **'सुंदर पोशाका'** भेंट किया। इसके बाद गुरु जी शाहदौला आदि संतों से भेंट करते हुए वजीराबाद, हाफिजाबाद, गुजरांवाला, लाहौर होते हुए वापस श्री अमृतसर साहिब आ गये।

गुरु साहिब की प्रथम जंग : मैकालिफ ने गुरु जी की जंगों का बहुत विस्तार से वर्णन किया है। जहांगीर की मौत के बाद उसका बेटा शाहजहां बादशाह बना। एक बार शाहजहां लाहौर से शिकार खेलता हुआ श्री अमृतसर की ओर आया। इधर सिक्ख भी शिकार खेलने निकले हुए थे। शाहजहां के पास एक सफेद बाज था जो उसे ईरान से सौगात के रूप में मिला था। शिकार के दौरान शाहजहां ने अपना बाज एक बत्तख के पीछे लगा दिया। बाज बत्तख को जल्दी न पकड़ सका। देर होती देख शाहजहां बाज को छोड़कर लाहौर वापिस चला गया।

इधर सिक्खों के बाज ने शिकार और शाही बाज दोनों को गिरा लिया। जब शाहजहां की सैनिक टुकड़ी बाज को ढूंढती हुई आई तो बाज सिक्खों के कब्जे में मिला। आपसी विवाद बढ़ने पर शाही टुकड़ी और सिक्खों में झड़प हो गई। कई शाही सैनिक मरे, कई जख्मी हुए। बाकियों ने भागकर बादशाह के सामने दुहाई दी।

क्रोध में आकर शाहजहां ने मुखलिस खान को एक बड़ा लश्कर देकर सिक्खों को सबक सिखाने के लिए भेजा। मैकालिफ लिखता है कि शाहजहां ने मुखलिस खान को समझाया कि श्री अमृतसर पहुंचते ही वह गुरु जी को हिरासत में ले लेगा और बिना हथियारों के प्रयोग से उन्हें लाहौर दरबार में पेश करेगा।

उधर श्री अमृतसर में छठम पातशाह की

सुपुत्री बीबी वीरो का अनंद कारज होने वाला था। आक्रमण की खबर सुनकर गुरु जी ने परिवार को झबाल भेज दिया और किला लोहगढ़ की सुरक्षा पक्की कर ली।

मैकालिफ ने इस युद्ध का बड़े विस्तार से वर्णन किया है। उसके अनुसार नौ घंटे की लड़ाई के बाद सिक्ख सेना की जीत हुई। छठम पातशाह ने अपनी तलवार के भरपूर वार से मुखलिस खान को मौत के घाट उतार दिया।

मैकालिफ के अनुसार यह जंग सन् १६२८ ई में लड़ी गई थी। शाहजहां इस हार से बहुत भड़का मगर गुरु-घर हितैषी वजीर खां के समझाने से शांत हो गया।

श्री हरिगोबिंदपुर साहिब की स्थापना-जलंधर के सूबेदार से जंग : गुरु जी ने ब्यास के दक्षिणी किनारे पर एक नगर बसाया। नगर का नाम रखा गया 'श्री हरिगोबिंदपुर'। उस इलाके का जमींदार भगवान दास जनता पर बहुत जुल्म करता था। जब उसे नये नगर की स्थापना की खबर मिली तो वह अपना दसता लेकर आ धमका। सिक्खों के साथ हुई इस मुठभेड़ में भगवान दास मारा गया।

भगवान दास का बेटा रतनचंद जलंधर के सूबेदार अब्दुल्ला के पास भागा गया। रतनचंद के भड़काने पर अब्दुल्ला दस हजार की फौज लेकर श्री हरिगोबिंदपुर पर हमला करने आया। जबरदस्त युद्ध में अब्दुल्ला और रतनचंद मारे गये। यह वही युद्ध था जिसमें भाई नानो ने अलीबख्श और भाई बिधीचंद ने करीम बख्श का वध किया था।

बाबा श्रीचंद जी से भेंट-बाबा गुरदित्ता जी की सौंप : प्रथम पातशाह श्री गुरु नानक देव जी के सपुत्र बाबा श्रीचंद जी ने छठम पातशाह से प्रार्थना की कि वे उनके एक बच्चे को गोद लेना चाहते हैं ताकि उसे अपने आध्यात्मिक मार्ग पर लगा सकें। छठम पातशाह ने अपने बड़े पुत्र भाई गुरदित्ता जी को सौंप दिया। बाबा श्रीचंद जी ने बाबा गुरदित्ता जी को ईरानी टोपी पहनाई और गले में कमल-बीजों की माला डाल कर अपना लिया।

बाबा अटल राय का प्रसंग : मैकालिफ ने गुरु जी के आठ वर्षीय सपुत्र बाबा अटल राय के प्रसंग का भी भावना-प्रधान वर्णन किया है। आध्यात्मिक शक्ति-सम्पन्न बाबा अटल राय ने खेल-खेल में, बाजी देने वाले मृत सात वर्षीय बालक मोहन को पुनर्जीवित कर दिया था। इस चमत्कार से गुरु जी बहुत अप्रसन्न हुए। बाबा अटल राय ने अपना अपराध स्वीकारा और प्रायश्चित स्वरूप अपनी ज्योति अकाल पुरख में सम्मिलित कर दी।

भाई गुरदास जी का अभिमान-खंडन : मैकालिफ लिखता है कि भाई गुरदास जी को अपनी रचना के कारण अभिमान हो गया। गुरु जी ने भाई गुरदास जी को विनम्रता सिखाने का कार्यक्रम बनाया। गुरु जी ने घोड़ों के सौदों का कौतुक रचा। थैलियों में सिक्कों की जगह ठीकरे निकले और गुरु जी के समक्ष आने से झिझकते हुए भाई गुरदास जी गुरु जी के पास न आकर बनारस चले गये। फिर भाई जेठा जी उन्हें बनारस से वापस लेकर आये और भाई गुरदास जी ने अपनी गलती के लिए क्षमा मांगी।

श्री करतारपुर साहिब और भाई रूपा की स्थापना : गुरु जी ने शीघ्र ही कीरतपुर साहिब और भाई रूपा दो अन्य नगर भी बसाये।

भाई बिधीचंद का प्रसंग : मैकालिफ ने भाई बिधीचंद के प्रसंग को बड़े विस्तार से जीवन-

वृत्तांत के पंद्रहवें, सोलहवें और सत्रहवें--तीन अध्यायों में दिया है। भाई बिधीचंद के पूर्व जीवन, गुरु जी की शरण में आना और सिक्ख सेना का महान जत्थेदार बनना आदि सबका वर्णन मैकालिफ ने बड़े भावपूर्ण ढंग से किया है।

मैकालिफ ने भाई बिधीचंद द्वारा लाहौर दरबार में घोड़े लाने के प्रसंग का अत्यंत सुंदर वर्णन किया है। हुआ यूं कि काबुल से एक जत्था गुरु जी के दर्शन के लिए आ रहा था। उस जत्थे में बखतमल और ताराचंद नाम के दो श्रद्धालु गुरु साहिब के लिए दो अत्यंत श्रेष्ठ घोड़े दिलबाग और गुलबाग लेकर आ रहे थे। रास्ते में शहंशाह के सैनिकों ने वे घोड़े छीनकर बादशाह के अस्तबल में पहुंचा दिये।

गुरु जी ने भाई बिधीचंद को घोड़े वापस लाने का काम सौंपा। भाई बिधीचंद ने शाही अस्तबल में घसियारे की नौकरी कर ली और दोनों घोड़ों से निकटता स्थापित कर ली। भाई जी रोज रात एक पत्थर दरिया में फेंकते जिससे सैनिक पत्थर गिरने की आवाज सुनने के अभ्यस्त हो गये। इसी तरह एक दिन दिलबाग पर सवार होकर भाई बिधीचंद ने दरिया में छलांग लगा दी। सैनिकों को लगा कि पत्थर गिरा होगा, परंतु भाई जी दिलबाग को लेकर निकल गये।

इसके बाद भाई बिधीचंद ज्योतिष का वेश धारण करके फिर लाहौर दरबार जा पहुंचे और सबको मूर्ख बनाते हुए गुलबाग को भी उसी प्रकार निकाल कर गुरु जी के पास ले आये।

सन् १६३१ का युद्ध : नाराज होकर शाहजहां ने ललाबेग को एक बड़ा लश्कर देकर गुरु जी पर चढ़ाई करने भेजा। ललाबेग अपने भाई कमरबेग, दो बेटों कासिम बेग व शमस बेग और भतीजे काबली बेग के साथ हमलावर हुआ। भाई रूपा के निकट गुरूसर में लड़ी गई इस जंग में सिक्खों की शानदार फतह हुई।

पैंदे खान का विद्रोह व १६३४ ई की जंग: गुरु जी ने पैंदे खान को यतीम जानकर शरण दी थी। पैंदे खान और उसके लश्कर ने गुरु जी के लिए जंगों में बड़ी बहादुरी भी दिखाई थी, परंतु पैंदे खां धोखेबाज निकला। वह शत्रुओं से मिल गया और गुरु जी पर मुहिम चढ़ा दी। फलस्वरूप करतारपुर (जलंधर) में भयानक जंग लड़ी गई और पैंदे खान तथा उसके साथ असमान खां को उनके किये का फल अपने जीवन गंवाने के रूप में मिला।

धीरमल का विरोध-गुरु हरिराय साहिब को गुरगद्दी : मैकालिफ ने बाबा गुरदित्ता जी के बेटे धीरमल की गुरु-घर विरोधी गतिविधियों का भी विस्तार से वर्णन किया है। धीरमल द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पावन बीड़ न देने की घटना का मैकालिफ ने विशेष जिक्र किया है। गुरु जी ने श्री गुरु हरिराय साहिब को सभी प्रकार से योग्य जानकर गुरगद्दी की जिम्मेदारी सौंप दी।

छठम पातशाह का ज्योति-जोत समाना : मैकालिफ के अनुसार गुरु जी ने सिक्खों को अंतिम उपदेश दिया और सन् १६४५ ई में ज्योति-जोत समा गये।

इस प्रकार मैकालिफ ने २३ अध्यायों में छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन-वृत्तांत का विस्तार से वर्णन किया है।

"History of the Sikhs" कृत कनिंघम में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जीवन-बिंब

*-प्रो सुरिंदर कौर**

श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के गुरता-गद्दी पर विराजमान होने वाला प्रसंग सिक्ख इतिहास में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने वाला प्रसंग सिद्ध हुआ। अब तक चली आ रही इतिहास की धारा को इसने ऐसा मोड़ा कि सदियों तक इसका प्रभाव दृष्टिगोचर होता रहा। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का गुरु-काल कई दृष्टिकोणों से विलक्षण व नवीन सिद्ध हुआ। ऐसा नहीं कि गुरु साहिब ने बाकी गुरु साहिबान के आदेशों से हटकर कुछ किया, सिक्ख धर्म में आरंभ से ही सभी गुरु साहिबान इन सिद्धांतों की प्रौढ़ता करते आ रहे थे, परंतु उन्हें व्यवहारिक रूप में नहीं लाया गया था। समय की मांग ही ऐसी थी पर पंचम पिता की शहादत के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने इन सिद्धांतों को अमली जामा पहनाते हुए भक्ति और शक्ति का प्रत्यक्ष संगम किया। सिक्ख धर्म को एक पृथक अस्तित्व देते हुए श्री अकाल तख्त साहिब व निशान साहिब की स्थापना श्री हरिमंदर साहिब के प्रांगण में की, शस्त्रों के अभ्यास और घुड़सवारी को प्रोत्साहन दिया। ऐसा पहले पांच गुरु साहिबान के काल में नहीं हुआ, इसलिए इतिहासकारों की दृष्टि में इनके प्रवर्तक व संचालक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ही थे। हर इतिहासकार, विद्वान व दार्शनिक ने इसे अपने दृष्टिकोण से देखा और अपनी व्यक्तिगत समझ के अनुसार उसकी व्याख्या की।

कनिंघम ने भी उस समय के प्राप्त दस्तावेजों के आधार पर गुरु साहिब का चित्रण अपने शब्दों में किया है। वैसे भी कनिंघम का ध्यान सिक्खी की मुख्य धारा के विकास पर केंद्रित रहा है, इसलिए उन्होंने गुरु साहिबान के व्यक्तिगत जीवन का वर्णन न करते हुए उनके गुरु-काल की गतिविधियों को अंकित किया है। उन्होंने गुरु-घर और स्वयं गुरु साहिब के बाहरी परिवर्तित आचरण को बहुत महत्व दिया है। उनके अनुसार इसका कारण कुछ हद तक समय की मांग था और कुछ हद तक मुगल बादशाहों के रहन-सहन का आम जनता पर पड़ने वाला प्रभाव था, जिसका अनुकरण गुरु साहिब कर रहे थे। उन्होंने ज्यादातर मुहसिन फानी के दस्तावेजों के आधार पर अंकलन किया है, इसलिए निष्पक्षता की बात एक ओर रह जाती है, फिर भी अपनी ओर से उन्होंने भरसक प्रयास किया है कि गुरु साहिब की सही छवि प्रस्तुत कर सकें। कनिंघम ने जिन तथ्यों पर अधिक बल दिया उन्हीं के आधार पर यह लेख लिखा जा रहा है और लड़ीवार उन तथ्यों का विवेचन किया जा रहा है। आगे का वर्णन कनिंघम द्वारा लिखित "History of the Sikhs" पर आधारित है।

प्रारंभिक जीवन : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म जुलाई १५९५ को श्री गुरु अरजन देव जी के घर हुआ। उनकी माता का नाम माता गंगा जी था और जन्म-स्थान श्री अमृतसर

**Room No. 2, Banta Singh Chawl, Opp. Manish Park, Jija Mata Marg, Pump House, Andheri (E), Mumbai-400093, Mob. 8097310773*

जिले का वडाली गांव था। उनके जन्म के समय तक श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण-कार्य पूरा हो चुका था और उनके गुरु-पिता माझे के क्षेत्र में धर्म प्रचार कर रहे थे। उनकी शिक्षा का दायित्व उन्होंने अपने भरोसे के सिक्खों के सुपुर्द किया जिनमें से बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी प्रमुख थे। सन् १६०४ में श्री आदि ग्रंथ साहिब को श्री हरिमंदर साहिब में स्थापित किया गया। चाहे उस समय श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब की आयु केवल नौ सालों की थी फिर भी गुरबाणी के भाव और उसका आदर उनके मानस पटल पर अंकित हो चुका था। वे प्रत्यक्ष रूप से गुरु-घर की रोजमर्रा की मर्यादा और देश भर से आने वाले श्रद्धालुओं का व्यवस्थापन देख और समझ रहे थे। सन् १६०६ में अपने पिता की त्रासदी भरी शहादत के बाद उनकी आज्ञानुसार गुरतागद्दी उनके इकलौते बेटे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को ही मिली। उस समय उनकी आयु मात्र ग्यारह वर्ष थी फिर भी उनकी योग्यता में कोई कमी नहीं थी। यह उनके गुरु-काल में लिए गए निर्णयों और पंथ-संचालन से स्पष्ट हो जाता है, लेकिन एक बात अवश्य है कि अपने पिता के निर्दोष होते हुए उन्हें इतनी यातनाओं के साथ शहीद होता देख उनके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिसके कारण आने वाले समय में उन्होंने सिक्खी की शांत धारा में शक्ति की उग्र धारा को भी प्रभावित कर दिया।

गुरतागद्दी के आरंभिक कार्य : अब तक गुरतागद्दी मिलने के बाद प्रत्येक गुरु साहिब ने गुरु नानक साहिब के सिद्धांतों को अपनी क्षमता के अनुसार आगे बढ़ाया और अपनी ओर से सिक्ख पंथ को संगठित करने के लिए कई नए कदम भी उठाए। कनिंघम के शब्दों में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बड़ी तेजी से पंथ की शक्ल बदल दी। उन्होंने गुरतागद्दी पर बैठते समय शस्त्रों (मीरी-पीरी) को धारण किया। जहां पहले गुरु साहिबान शाकाहारी थे वहीं उन्होंने मांस खाने की आज्ञा अपने सिक्खों को दी। (शायद कनिंघम ने गुरु नानक साहिब के जीवन के बारे में सिक्ख स्रोतों से अध्ययन नहीं किया, क्योंकि वहां उनके मांस खाने का उल्लेख मिलता है और गुरबाणी में कई शबद ऐसे हैं जो इस भ्रम को दूर करते हैं।) उन्होंने शिकार को प्रोत्साहन दिया और साथ ही स्वयं भी शिकार पर जाने लगे। शस्त्र-विद्या और घुड़सवारी का प्रशिक्षण अब नियमित रूप से होने लगा। यह सब वीर-रस को जगाने में बहुत सहायक हुआ जो सचमुच में समय की बहुत बड़ी मांग थी। उन्होंने अपना धार्मिक ध्वज (निशान साहिब) भी लहराया और अपने पंथ की स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। (कनिंघम ने स्पष्ट तो नहीं लिखा, परंतु उनका अभिप्राय श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना से है।) इस प्रकार से आध्यात्मिक केंद्र-स्थल से उन्होंने पहली सिक्ख राजनीति के बीज बोए। यह एक प्रकार से राष्ट्र में ही पृथक राष्ट्र वाली बात थी, जिसे जहांगीर सहन नहीं कर सका। उन्होंने अपनी वेशभूषा आम संतों जैसी न रखकर, राजसी परिधान को अपनाया। उनका बाज पालने का शौक भी राजसी प्रवृत्ति का द्योतक है। उन्होंने समय की संवेदनशीलता को देखते हुए कई पूर्व अपराधियों को सिक्खी की मुख्य धारा में शामिल कर लिया। (शायद कनिंघम का अभिप्राय भाई बिधीचंद से है।) कनिंघम की दृष्टि में इसके दो कारण हैं, एक तो अपने पिता की शहादत का श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था और दूसरा अपनी दूरंदेवाली दृष्टि

द्वारा उन्होंने देश की भावी राजनीतिक अस्थिरता को देख लिया था और यह समझ लिया था कि मुगल यहीं पर बस नहीं करेंगे और न ही सिक्ख किसी जुल्मी के आगे घुटने टेकेंगे, अत: भविष्य में टकराव होते रहेंगे। यह न केवल समय की मांग थी बल्कि एक चुनौती थी, जिसे हर हाल में उन्होंने स्वीकार किया और अपनी ओर से तैयारी शुरू कर दी। उनके पास घुड़साल में ८०० घोड़े और ३०० प्रशिक्षित घुड़सवार थे जो गुरु-घर तथा गुरु साहिब की सेवा में तत्पर रहते। ६० बलिष्ट घुड़सवार उनकी निजी सुरक्षा में तैनात थे।[१]

गुरु साहिब और जहांगीर के संबंध : कनिंघम ने लिखा है : "गुरु हरिगोबिंद साहिब जहांगीर के समर्थक बन गए और अपने जीवन के अंतिम समय तक उनके सैनिक अभियानों में हिस्सा लेते रहे।[२] वे जहांगीर के साथ कशमीर भी गए और वहां भी एक धार्मिक नेता की भांति आचरण करते रहे। उनके इस मुक्त आचरण के कारण वे मुगल दरबार के नियम-कानूनों का भी उल्लंघन करते रहे जिससे जहांगीर नाराज हो गया। उसे गुरु साहिब द्वारा अपने साथ सिक्ख सैनिकों के जत्थे रखना भी पसंद नहीं था, ऊपर से गिरफ्तारी के समय श्री गुरु अरजन देव जी पर लगाया गया जुर्माना भी उन्होंने नहीं भरा था। आखिर नाराज होकर जहांगीर ने गुरु साहिब को गिरफ्तार कर ग्वालियर के किले में कैद कर दिया।[३] सिक्ख अपने गुरु साहिब के लिए कुछ भी करने को तैयार थे, उनकी रूहानी शख्सियत पर जान तक दे सकते थे। सिक्ख लगातार ग्वालियर आते रहे और किले की दीवार के बाहर से ही अपने गुरु को नमस्कार करते रहे। जहांगीर इस सबसे द्रवित हो गया और कुछ हद तक अंधविश्वासों के डर से उसने गुरु साहिब को रिहा कर दिया।

उपरोक्त कथन में कनिंघम को किसी सिक्ख स्रोत से जानकारी नहीं मिली थी। उसने प्राप्त मुहसिन फानी, मलकम और फॉरेस्टर की लिखतों के हवाले से यह सब कुछ कहा है। सच्चाई तो यह है कि जिस जहांगीर ने गुरु साहिब के पिता को इतनी निर्ममता से शहीद करवाया हो वे उसके अधीन कार्य क्यों करेंगे? और भी कई तथ्यों में साफ विरोधाभास दिखाई देता है। पहले तो कनिंघम ने स्वयं लिखा ही है कि अत्याचार का सामना करने के लिए ही गुरु साहिब ने शस्त्र उठाए तो फिर अत्याचारी की अधीनता कैसे स्वीकार कर सकते हैं? दूसरी बात कनिंघम ने लिखी है कि गुरु साहिब सारी उम्र जहांगीर के वफादार रहे और अगले ही पन्ने पर स्वयं उन्होंने गुरु साहिब और मुगल सेना में होने वाले युद्धों का वर्णन किया है।

स्पष्ट है कि कनिंघम भ्रामक तथ्यों से यहां ठीक से विश्लेषण नहीं कर पाया। सच्चाई तो यह है कि गुरु साहिब की दृष्टि सदा से ही निरवैर रही है। उन्होंने कभी निजी कारणों से कोई उग्र कदम नहीं उठाया और जुल्म को मूक होकर सहन भी नहीं किया। जब अत्याचार अपनी सीमा लांघ गया तब एक सच्चे वीर का पौरुष उसे सशस्त्र मार्ग पर ले आया।

सिक्खों और मुगलों में टकराव : श्री गुरु अरजन देव जी के समय से ही मुगल सिक्खों से खार खाते आ रहे थे। उनकी शहादत के बाद भी मुगलों के रवैये में कोई फर्क नहीं पड़ा। अब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा उठाए गए कदम तो उनके लिए बिलकुल असहनीय थे। मुगलों की दृष्टि में गुरु-घर फकीरों का घर था, तब वहां शक्ति की क्या आवश्यकता है? उन्होंने

भरसक प्रयास किया गुरु-घर को बदनाम करने का, यही कारण है कि मुगल दरबार के कातिबों ने सिक्खों का उल्लेख किसी विशेष आदर के साथ नहीं किया और न ही उनकी दृष्टि में गुरु साहिब के लिए कोई सम्मान दिखाई देता है। ऐसे ही लोगों ने इस तथ्य को हवा दी कि पांच गुरु साहिबान तक गुरु-घर शांति से प्रचार और प्रसार कर रहा था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के राजनीतिक हस्तक्षेप और राजसी ठाठ-बाठ के कारण मुगलों और सिक्खों में ठन गई। साफ है कि ऐसे लेखकों ने अपने अन्नदाताओं का पक्ष बहुत सफाई अथवा चतुरता से रखा है। वे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को दोष देते हुए पहले गुरु साहिबान को शांति का समर्थक बताते हैं। इस बात का उनके पास क्या तर्क है कि यदि वे शांति के पुंज थे तब पंचम पिता को इतनी अमानवीय यातनाएं देकर शहीद क्यों किया गया? क्या उनके आका अत्याचारी नहीं थे? ऐसे हजारों सवाल उठते रहते हैं। ऐसे लेखकों के दस्तावेज सिक्खी के ऐतिहासिक स्रोत नहीं हो सकते। कनिंघम ने इन स्रोतों का आधार लिया और साथ ही स्वयं निष्पक्ष मूल्यांकन भी करने का प्रयास किया, परंतु डेढ़ सौ साल पहले के हालात आज की भांति शोध-सुलभ नहीं थे। कनिंघम ने मुगल-सिक्ख टकराव के कई कारण दिए हैं जिनमें से निम्नलिखित दो व्यक्तियों का उल्लेख महत्वपूर्ण है।

बीबी कौलां : कनिंघम ने लिखा है, "जहांगीर का गुस्सा भड़काने के लिए गुरु साहिब द्वारा बीबी कौलां को छुपा कर रखना था, जिसे सिक्ख उनकी बेटी और मुसलमान उनकी उप-पत्नी कहते थे।[४] अब बीबी कौलां के विषय में सच्चाई पर भी विचार कर लेना चाहिए।

बीबी कौलां लाहौर के काजी भुजंग खान की बेटी और साईं मियां मीर जी की शिष्या थी। बचपन से ही वो अपने मुरशिद से गुरबाणी सुनती आ रही थी। उसमें गुरबाणी के प्रति एक विशेष आकर्षण पैदा हो गया था। प्रो. साहिब सिंघ के अनुसार, "जब लाहौर में गिलटी-ताप की महामारी फैली तब आम जनता इसकी मार से त्राहि-त्राहि कर उठी, मुगल हाकिमों और उनके कर्मचारियों के कानों पर जूं तक नहीं रेंगी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब और उनके सिक्खों ने अपनी जान की बाजी लगाकर उन लोगों की सेवा की। इसका बीबी कौलां पर बड़ा गहरा असर हुआ।"[५] इससे उनके पिता समेत सारा मुसलमान समाज क्रोधित हो उठा था और बीबी कौलां जी के लिए मौत का फतवा जारी कर दिया गया। आखिर अपनी जान बचाने के लिए साईं मियां मीर जी की मदद से उसने गुरु साहिब की शरण ली और गुरु साहिब ने श्री अमृतसर में उसके रहने का प्रबंध कर दिया। शरण में आए की रक्षा करना श्री गुरु नानक देव जी के घर का नियम है। जाहिर है कि अपने धर्म से बगावत और वो भी एक स्त्री द्वारा, कट्टरपंथियों के लिए असहनीय थी। यही कारण है कि बौखला कर उन्होंने अनाप-शनाप बकना शुरू कर दिया। यह उन्हीं लोगों का काम है जिन्होंने बीबी कौलां को गुरु साहिब की उप-पत्नी कहने का कुप्रयास किया।

पैंदे खां : जिस समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब दोआबे के इलाके में प्रचार कर रहे थे तब वे ग्राम वड्डा मीर में पैंदे खां से मिले थे। उस समय गुरु साहिब अपने फौजी दसते में सिक्ख नौजवानों की भर्ती भी कर रहे थे। कई पठान भी बड़े चाव से भर्ती हो गए। इन्हीं में पैंदे खां नाम का एक सजीला पठान भी था। गुरु साहिब उस पर विशेष ध्यान देते थे और उसके

निर्वाह की पूरी जिम्मेदारी उन्होंने स्वयं ले ली थी। सिक्खों और मुगलों के बीच पहली झड़प लोहगढ़ में हुई जिसमें सिक्ख विजयी रहे। पैंदे खां इस युद्ध में बहादुरी से लड़ा, परंतु उसे इस बात का अहंकार हो गया कि युद्ध उसके कारण जीता गया। वह अपने आप को सिक्खों से कहीं ज्यादा महान समझने लगा। गुरु साहिब भी उसके अहंकारी रवैये को समझ रहे थे। उन्होंने पैंदे खां को उसके गांव वापिस भेज दिया और वहीं तनख्वाह भिजवाते रहे। कनिंघम ने भी पैंदे खां का विस्तृत वर्णन देते हुए बताया है कि वह गुरु साहिब की एक सेविका का पुत्र था। एक बार गुरु साहिब के बड़े साहिबजादे का बाज उड़कर उसके घर पहुंच गया और उसने बड़ी विनम्रता से गुरु साहिब को वह बाज लौटा दिया। गुरु साहिब इससे बहुत प्रसन्न हुए। कनिंघम ने पैंदे खां के सेना में होने का पूरा ब्यौरा प्रस्तुत किया है।

वास्तव में बाज वाली घटना कुछ दूसरे ही रूप में सिक्ख इतिहास में मौजूद है, जहां पैंदे खां का अहंकारी रवैया स्पष्ट उभर कर सामने आता है। अधिक विस्तार के भय से पूरा किस्सा बयान करना संभव नहीं है। संक्षेप में, आखिर पैंदे खां नमकहरामी पर उतर आया और लाहौर के सूबेदार से मिलकर गुरु साहिब पर आक्रमण की योजना बनाते हुए सिक्ख सेना के सारे रहस्य उन्हें बता दिए। करतारपुर वाली लड़ाई में तो उसने सीधे गुरु साहिब को ललकारा, परंतु एक वार से ही घायल होकर गिर गया और फिर गुरु साहिब अपना निरवैर स्वभाव दिखाते हुए उसे अंतिम समय में भी 'अल्लाह' का नाम याद कराते हैं।

पैंदे खां की तरह और भी कई मुगल श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब और सिक्ख सिद्धांतों से प्रेरित होकर गुरु-घर में आ गए थे। साथ ही कभी घोड़े छीन लेना, उन्हें वापिस लाना, बाज पकड़ कर ले जाना, कभी शिकार के समय की आपसी रंजिश आदि कई ऐसे कारण थे जिनके कारण सिक्खों और मुगलों के टकराव युद्धों में बदल गए।

गुरु साहिब द्वारा लड़े गए युद्ध : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा कुल चार युद्ध लड़े गए जो सिक्ख इतिहास के पहले युद्ध थे। कनिंघम ने इनका उल्लेख तो किया है, परंतु विस्तृत ब्यौरा नहीं दिया। अत: यहां केवल तुक मात्र उन युद्धों का वर्णन किया जा रहा है। उनका संपूर्ण वर्णन करने के लिए एक अलग लेख की आवश्यकता होगी। जहांगीर की मृत्यु सन् १६२७ के अंतिम महीनों में हुई और सन् १६२८ के आरंभ में शाहजहां तख्त पर बैठा। पंजाब के प्राय: सभी मुख्य इलाके मुगल साम्राज्य के लाहौर प्रांत के अंतर्गत आते थे। शाहजहां ने अपने आरंभिक वर्ष आगरा और पूर्वी भारत की व्यवस्था को संभालने हेतु वहीं व्यतीत किए जिससे लाहौर के अधिकारी सिक्खों के विरुद्ध कदम उठाने के लिए स्वतंत्र-से हो गए थे। ये सारी लड़ाइयां प्राय: लाहौर से ही संचालित होती रहीं।

१. पहली लड़ाई श्री अमृतसर के बाहर लोहगढ़ के स्थान पर जून १६२८ में हुई। सिक्खों की ओर से गुरु साहिब की अगुआई में लड़ने वाले प्रमुख सिक्खों में भाई बिधीचंद, पैंदे खां आदि थे। मुगल सैनिक मुखलिस खान की कमान में लड़ रहे थे। इस युद्ध में सिक्ख जीत गए, मुखलिस खान मारा गया।
२. दूसरी लड़ाई सन् १६३० में श्री हरिगोबिंदपुर में हुई। लाहौर के सूबेदार भगवान दास की

शिकायत पर फौज लेकर चढ़ आया, परंतु सिक्खों की फौलादी ताकत के आगे टिक न सका।

३. तीसरी लड़ाई डरौली में हुई, जहां लाहौर के हाकिम की आज्ञा से ललाबेग और कमरबेग फौज लेकर सिक्खों के विरुद्ध डट गए। यह युद्ध सन् १६३२ में हुआ, जिसमें दोनों सरदार मारे गए और गुरु साहिब की अगुआई में सिक्ख विजयी रहे।

४. चौथा युद्ध सन् १६३४ में हुआ जहां पैंदे खां लाहौर और जलंधर के फौजदार को भड़का कर सिक्खों के विरुद्ध चढ़ा लाया। पैंदे खां गुरु साहिब के हाथों मारा गया। लाहौर का सूबेदार काले खान भी मारा गया। सिक्ख विजयी रहे। इस युद्ध में श्री (गुरु) तेग बहादर साहिब ने भी अपना युद्ध-कौशल दिखाया।

कीरतपुर साहिब बसाना और अकाल चलाणा: गुरु नानक साहिब के समय से ही गुरु साहिबान किसी नगर की स्थापना कर उसे सिक्ख गतिविधियों का केंद्र बनाते रहे हैं। इसी श्रेणी में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने पंजाब के पूर्वी पहाड़ी इलाके में कीरतपुर साहिब नगर बसाया। सन् १६३० में अपनी स्थापना से लेकर अगले कई वर्षों तक पंथ का संचालन इसी नगर से होता रहा। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब बीच-बीच में लंबा समय यहीं ठहरते रहे हैं। श्री गुरु हरिराय साहिब ने अपना पूरा जीवन इसी नगर में बिताया। आखिर मार्च सन् १६४४ में श्री गुरु हरिराय साहिब को गुरतागद्दी सौंप कर वे ज्योति-जोत समा गए।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का व्यक्तित्व : कनिंघम विभिन्न स्रोतों से प्राप्त जानकारी से गुरु साहिब के जीवन संबंधी सामग्री को जुटाकर भी उनका सही व्यक्तित्व उभारने में सफल हुआ है। उसकी दृष्टि में गुरु साहिब एक कुशाग्र, कर्मठ, वीर, क्रांतिकारी, कल्पनाशील, विनम्र, निरवैर, भक्त-वत्सल, गुरबाणी के रसिए, सफल प्रचारक, संगठनात्मक और सृजनात्मक गुणों के धनी थे। कुशाग्र और कर्मठ ऐसे कि ग्यारह वर्ष की आयु में अपने पिता की शहादत के बाद अति संवेदनशील समय में भी गुरतागद्दी की जिम्मेदारियों को सफलता से संभालते हैं। कल्पनाशील, सृजनात्मक और क्रांतिकारी ऐसे कि पंथ में शक्ति की नई धारा का प्रवाह कर उसे व्यवहारिक बनाने हेतु शस्त्र, घोड़े, निशान साहिब और श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना कर सिक्ख धर्म को एक नया रूप देने में सफल होते हैं। भक्त-वत्सल, विनम्र और निरवैर ऐसे कि अपने हाथों पाले हुए पैंदे खां की नमकहरामी को भी माफ कर, अपने हाथों में उसका सिर रखकर अंतिम समय में 'अल्लाह' की शरण में जाने का उपदेश देते हैं। इसकी गवाही तो *दबिस्तान* (पृष्ठ २७५) का लेखक भी देता है। ग्वालियर के किले से आजाद होते समय ५२ निर्दोष राजाओं को भी रिहा करवाकर 'बंदी छोड़' का खिताब हासिल करते हैं। गुरबाणी के रसिए ऐसे कि विकट से विकट हालात में कीर्तन का आत्मिक आहार नियमित रूप से ग्रहण करते हैं। वीर ऐसे कि अपनी जांबाज नौसिखिया सैनिक टुकड़ी को लेकर वक्त की हकूमत के साथ टकराने से भी नहीं हिचकते और जीत हमेशा उनकी होती है। प्रचारक और संगठन-कुशल ऐसे कि इतने थोड़े समय में भी पंथ को 'भक्ति' के साथ 'शक्ति' दृढ़ करवाने में सफल होते हैं। कठिन से कठिन परिस्थिति में पंथ को बिखरने नहीं देते वरन् ऐसे हालात में भी पंथ में नई रूह फूंकते हैं। ग्वालियर की कैद

इसका प्रमाण है। कनिंघम ने इन सभी गुणों का बाखूबी वर्णन किया है। भाई गुरदास जी की यह पंक्ति उनके व्यक्तित्व को बहुत ही सरलता से व्यक्त करती है:

दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।
(वार १:४८)

संदर्भ सूची:

१. यह ब्यौरा कनिंघम को "दबिस्ताने-मजाहिब" के पृष्ठ २८४-२८६ से मिला।

२. Hargobind became a follower of Emperor Jahangir and to the end of his life conduct partook as much of the military adventurer as of the enthusiastic zealot. (History of the Sikhs- J. D. Cunningham, page 51)

३. यह सारा वृत्तांत भी कनिंघम को मुहसिन फानी की लिखत के पृष्ठ २७३, २७४, २७७ से मिला है। जाहिर है कि यह खोज उनकी अपनी नहीं है और मुगल लेखक तो अपने ही पक्ष से लिखेंगे और अपने ही बादशाह को सही ठहराएंगे। फानी ने भी यह विवरण पक्षपाती लिखा है, कुछ हद तक तो गलतबयानी भी की है।

४. And his anger was further roused by the abduction of the Sikhs says his daughter, the Muhammadans his favourited concunbine, who become enamoured of the Guru.

५. जीवन-वृत्तांत श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब- प्रो. साहिब सिंघ, पृष्ठ २८

कविता

सरबत्त दा भला

सरबत्त दे भले की अरदास जब दिल से करनी आ जायेगी।
यकीन मानो कोई कमी न हमारे जीवन में रह जायेगी।
सरबत्त के भले में अपना भला स्वत: ही छिपा है,
पर स्मरण रहे! एक का भी बुरा अगर हम चाहेंगे
तो पतन के गड्ढे में अवश्य ही गिर जायेंगे।
कांटे जो बोते हैं दुनिया में दूसरों के वास्ते।
कैसे खिलेगें फूल, सोचो, कभी अपने वास्ते?
यह तो प्यारे 'कर्मभूमि' है, प्रत्येक कर्म बीज है।
प्रकृति का नियम है, जैसा हम बोएंगे वैसा ही पाएंगे,
निबौली अगर बोएंगे तो आम कैसे खाएंगे?
अगर चाहते हैं खुशी, तो खुशियां बांटना सीखें!
नफरत की जड़ों को, जड़ से काटना सीखें!
न जलाएं कोई आशियाना, नहीं तो खुद ही जल जाएंगे।
अगर जलाने का शौंक है तो, गरीब का चूल्हा जलाएंगे।
किसी मासूम को पेट भर रोटी खिलाएं।
आशीषों और दुआओं से झोली भरवाएं।
ईश्वर के प्यारों का यही तो पैगाम है--
जहां असर नहीं करती दवा, काम आती वहां दुआ है।
दुआओं के लिए आओ! सब हाथ उठाएं।
प्रेम की खुशबू चहुं ओर फैलाएं।
आओ! सब मिलकर 'गुरमति ज्ञान' की बात करें!
अकाल रूप 'बाबा नानक जी' का पावन सिद्धांत-
"मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु" को
हम सब मिलकर आत्मसात् करें!
किरत करें, नाम जपें, मिल-बांट कर खाएं!
स्वार्थ की दलदल से निकलें और सरबत्त के भले हेतु
दिल से अरदास करें! अरदास करें! अरदास करें!

-डॉ. मनजीत कौर, २/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३

"सिक्ख इतिहास" कृत प्रिं सतिबीर सिंघ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-प्रिं अमरजीत कौर**

प्रिं सतिबीर सिंघ द्वारा रचित सिक्ख इतिहास की "गुर भारी" पुस्तक में लेखक ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन संबंधी सामग्री को आधार बनाकर योजनाबद्ध किया है। यह रचना गुरु साहिब के महान व्यक्तित्व, पवित्रता और पुनीतता के साक्षात दर्शन को उजागर कर हमें उनके बहुत करीब ले जाती है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म लेखक ने ९ जून, १५९५ ई को गांव वडाली में हुआ लिखा है। गुरु साहिब के जन्म से पहले भी प्रिथीचंद गुरु-घर से ईर्ष्या रखता था। उनके जन्म से तो वो और भी दुखी हुआ और श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब के साथ भी ईर्ष्या करने लगा। पिता-गुरु श्री गुरु अरजन देव जी सब जानते थे, लेकिन वे परमात्मा की रजा में राजी थे। प्रिथीचंद के प्रत्येक वार के निष्फल जाने के बाद वे परमात्मा के शुक्रगुजार होते और 'धुर की बाणी' का उच्चारण करते।

लेखक ने पहले अध्याय में श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब के जन्म और बचपन की प्रत्येक साखी को अच्छे ढंग से पुरातन ग्रंथों के हवाले देकर बयान किया है। बचपन के बाद जवानी में पांव रखते ही श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब की नुहार बताते हुए लेखक लिखता है कि "गुरु जी के पांव कमल के फूल जैसे लाल और शबीले, नाखुन हीरों की कतार जैसे आनंद देने वाले, दोनों टांगें सुपारी के पौधे-सी सुंदर; उनकी छाती चौड़ी और कंधे ऊंचे थे तथा मुख चंद्रमा जैसा था।

दूसरे अध्याय में लेखक बहुत खूबसूरती से बयान करता है कि "खून को ब्याज बहुत लगा करता है। शहीद की शहादत निष्फल नहीं जाती। इस शहादत के कारण ही सच्चाई की ताकत जत्थेबंद होनी शुरू हुई और उस ताकत ने बुराई का मुकाबला किया।"

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने संगत में उत्साह भरने के लिए यत्न आरंभ कर दिए। श्री गुरु अरजन देव जी शहीद होने से पहले आदेश कर गए थे कि शस्त्र पहनकर गुरगद्दी पर विराजमान होना तथा मैदान-ए-जंग में तब तक डटे रहना जब तक जालिम खत्म न हो जाएं। अपने पिता के आदेशों पर चलते हुए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने दो तलवारें धारण कीं, फौज रखी और शिकार खेलना भी आरंभ कर दिया।

तख्त पर बैठते ही गुरु साहिब ने उपदेश दिया कि "आज से मेरी भेंटा अच्छे शस्त्र और अच्छी जवानियां होंगी। मेरी खुशी लेने के लिए कसरतें करें, गतका खेलें, शिकार खेलने के लिए जंगलों में जाएं, घुड़सवारी करें।" गुरु साहिब ने ढाडी वारों को खास उत्साहित किया। वारों ने जीवन में जोश भरी झुनझुनाहट पैदा कर दी। युद्ध-चाव से खून गर्म होने लगा। इसके प्रचार से सिक्खों में एक नया जोश पैदा हुआ और वे उत्साह से गुरु साहिब की फौज में भर्ती होने लगे।

तीसरे अध्याय में लेखक ने गुरु साहिब

*३५२, गुरु नानक नगर, नजदीक गुरुद्वारा श्री गुरु तेग बहादर नगर, बटाला (गुरदासपुर)-१४३५०५, मो : ९७८१६०६९२२

द्वारा श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना से लेकर जहांगीर द्वारा गुरु साहिब को ग्वालियर के किले में कैद करने तक का जिक्र है।

फौज रखने के साथ ही रोजाना कीर्तन के उपरांत सिक्ख उत्साह से घोड़े, शस्त्र और जवानियां भेंट करते। देखादेखी गुरु साहिब की फौज में ५०० जवान भर्ती हो गए। इसके साथ ही ऐसे लोग भी गुरु साहिब की शरण में आए और फौज में भर्ती हुए जो जमाने के सताए हुए थे।

लेखक लिखता है कि गुरु साहिब ने ऐसा भी महसूस कर लिया था कि अगर लोगों को बंधनों से आजाद करवाना है तो इनमें आत्म-विश्वास भरना जरूरी है। इनके दिलों से हकूमत का दबदबा हटाना आवश्यक है। लोगों को राजनीतिक तौर पर एक दूसरे के नजदीक लाने की आवश्यकता थी। लेन-देन और झगड़ों का फैसला गुरु साहिब एक क्षण में कर देते थे। संगत में भ्रातृ-भाव पैदा हो गया था। अब जहां गुरु साहिब मल्ल-कुश्ती करवाते थे वहां गुरु साहिब ने एक 'थड़ा' बनवा दिया। उस 'थड़े' को श्री अकाल तख्त साहिब का नाम दिया। श्री अकाल तख्त साहिब की नींव खुद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने रखी। इतना ध्यान रखा कि इसके निर्माण में किसी मिस्त्री आदि का हाथ न लगे। सारा निर्माण भाई गुरदास जी, बाबा बुड्ढा जी और स्वयं गुरु साहिब ने किया। भाई गुरदास जी को श्री अकाल तख्त साहिब का पहला जत्थेदार नियुक्त किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अमृतसर नगर की रक्षा के लिए एक किले का निर्माण करवाया जिसका नाम 'लोहगढ़' रखा। इसकी खबर चारों ओर फैल गई कि धर्म की रक्षा के लिए एक नई किस्म की फौज तैयार हो रही है और श्री अमृतसर एक पनाहगाह बन गया है। लोहगढ़ किले के बन जाने के बाद सिक्ख फौज में अब इतनी शक्ति आ गई है कि वो किसी के आगे नहीं झुकेगी। जहांगीर तक खबरें पहुंच गईं और उसे हवा दी गई कि अगर गुरु साहिब को इससे न रोका गया तो वे मुसलमानों के लिए खतरे की घंटी हैं। जहांगीर ने गुरु साहिब की गिरफ्तारी के हुक्म दिए और गुरु साहिब को गिरफ्तार कर ग्वालियर के किले में कैद कर दिया गया।

लेखक ने चौथे अध्याय में प्राचीन लेखकों द्वारा लिखे गए हवाले कि गुरु साहिब ग्वालियर के किले में १२ वर्ष कैद रहे, को असत्य बताया है। लेखक ने १६१३ ई से १६२० ई तक गुरु साहिब के घर पैदा हुए पुत्र और पुत्रियों का जिक्र कर बताने की कोशिश की है कि गुरु साहिब ग्वालियर के किले में तीन से चार वर्ष रहे। जब जहांगीर को गुरु साहिब की शख्सियत का पता चला तो उसने गुरु साहिब को रिहा कर दिया। रिहाई के समय गुरु साहिब वहां बंद हुए बावन पहाड़ी राजाओं को भी रिहा करवाकर अपने साथ बाहर लाए और 'बंदी छोड़ दाता' कहलवाए।

अगले तीन अध्यायों में लेखक ने गुरु साहिब की पंजाब वापिसी के बाद प्रचार-फेरियों का उल्लेख किया है। गुरु साहिब पंजाब के बाहर भी प्रचार दौरों पर गए और सिक्खी को दूर-दूर तक फैलाया। इस दौरान गुरु साहिब बहुत-से धार्मिक पुरुषों से मिले और उनकी आशंकाओं का निवारण किया।

आठवें अध्याय में लेखक ने पंजाब में मची हलचल का जिक्र किया है। जहांगीर की मौत के बाद शाहजहां बादशाह बना। गुरु साहिब के जहांगीर के साथ मित्रता वाले संबंध थे।

शाहजहां के बादशाह बनने के बाद अंधेरगर्दी फैल गई और राज-प्रबंध फिर अपनी पुरानी जगह पर आ गया।

सिक्ख इतिहास की पहली लड़ाई को श्री अमृतसर की लड़ाई कहा जाता है। यह लड़ाई एक बाज के कारण हुई। सिक्ख फौजों और मुगल फौजों के बीच जबरदस्त लड़ाई हुई। गुरु साहिब की कमान के नीचे सिक्खों ने वीरता के जौहर दिखाए। मुगल फौज के सेनापति और गुरु साहिब के बीच आमने-सामने लड़ाई हुई जिसमें मुगल फौज का कमांडर मुखलिस खां मारा गया और गुरु साहिब की जीत हुई।

इस लड़ाई में हुई जीत से सिक्खों में बहुत उत्साह भर गया। गुरु साहिब लड़ाई के बाद करतारपुर जा टिके और दोआबे में गुरसिक्खी-प्रचार करने लगे।

दसवें अध्याय में लेखक ने गुरु साहिब द्वारा लड़ी गई दूसरी लड़ाई का हाल बताया है। प्रचार दौरे के दौरान गुरु साहिब पिता-गुरु द्वारा बसाई नगरी श्री हरिगोबिंदपुर गए और वहां सिक्खी का प्रचार करने लगे। वहां का जागीरदार गुरु जी के प्रचार से दुखी था और जलंधर के सूबेदार के साथ मिल गुरु जी पर चढ़ाई कर आया। उधर गुरु साहिब के सिक्ख सूरमे पूरी तरह से तैयार बैठे थे। घमासान की लड़ाई हुई। दो दिन तक जंग होती रही। जलंधर का सूबेदार और उसकी बहुत सारी फौज मारी गई। गुरु साहिब की जीत हुई। इस जीत ने सारे दोआबे में सिक्खी के उत्साह को बढ़ाया।

इस लड़ाई के बाद कुछ समय माहौल शांतिपूर्ण रहा और गुरु साहिब सिक्खी का प्रचार करते रहे। इस समय दौरान बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी अकाल चलाणा कर गए। गुरु साहिब ने उन दोनों महापुरुषों का अंतिम संस्कार अपने हाथों से किया।

तीसरी जंग का कारण भाई बिधीचंद द्वारा घोड़े वापिस लाना था। गुरु साहिब का एक सिक्ख गुरु साहिब की भेंटा में काबुल से घोड़े ला रहा था। लाहौर में मुगल फौज ने वो घोड़े छीन लिए। भाई बिधीचंद दोनों घोड़े लाहौर से बड़ी चतुराई से निकाल लाया तथा लाकर गुरु साहिब को भेंट किए। इसी खीझ में कमर बेग और लला बेग की कमान में मुगल फौज गुरु साहिब पर हमला करने चल पड़ी। गुरु साहिब भी आगे से मुकाबला करने के लिए नथाणा के एक ऊंचे टिब्बे पर मोर्चाबंदी कर जंग के लिए तैयार थे। नगारे की चोट सुन इलाके के और लोग भी गुरु साहिब की फौज में मुगल सेना का मुकाबला करने के लिए जम गए। मुगल सेना और सिक्ख फौज में घमासान की जंग हुई। इस जंग में भी मुगल सेना की हार हुई।

तीसरी जंग के बाद गुरु जी कीरतपुर साहिब जा टिके। लेखक ने तेरहवें अध्याय में गुरु साहिब की शख्सियत को बयान किया है। कीरतपुर साहिब पहुंचते ही वहां के इलाके की संगत गुरु साहिब के दर्शन के लिए आने लगी। कहलूर का राजा ताराचंद भी गुरु जी के दर्शन को आया जिसे गुरु साहिब ने ग्वालियर के किले से आजाद करवाया था।

थोड़ा समय कीरतपुर साहिब ठहर कर गुरु जी करतारपुर को चल पड़े। यहां गुरु साहिब सिक्खी का प्रचार करने लगे। उधर पैंदे खां काले खां और अनवर खां को साथ लेकर अपनी हार का बदला लेने के लिए फौज लेकर गुरु जी पर हमला करने के लिए आ गया। गुरु जी भी मैदान में फौज लेकर आ गए। गुरु साहिब के तीरों की बौछार से मुगल फौज के पैर उखड़ने लगे। गुरु साहिब और पैंदे खां में

आमने-सामने लड़ाई हुई। पैंदे खां मारा गया। काले खां भी गुरु साहिब के वार से मारा गया। दोनों के मारे जाने से मुगल फौज मैदान छोड़कर भाग गई। इस लड़ाई में भी गुरु साहिब की ही जीत हुई।

इसके बाद गुरु साहिब ने कीरतपुर साहिब में पक्का ठिकाना कर लिया। इससे संगत में बहुत उत्साह आया। उधर धीरमल साजिशें रच रहा था और अपने आप को गुरगद्दी का अगला उत्तराधिकारी समझने लगा था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने पांचों पुत्रों की परख की और मन ही मन अपने पौत्र श्री (गुरु) हरिराय साहिब की ओर ध्यान देने लगे। वे अभी छोटी उम्र के ही थे और अपना ज्यादा समय सेवा और सिमरन में ही लगाते थे। गुरु साहिब ने खुद उन्हें शस्त्र-विद्या दी तथा जंग के दांव-पेच बताए। उनके स्वभाव में कोमलता, नम्रता और पवित्रता आ रही थी। फिर हर तरह से प्रवीण और पूर्ण जानकर गुरु-मर्यादा के अनुसार उन्हें गुरगद्दी सौंप दी। सारी संगत को आदेश दिया कि श्री गुरु हरिराय साहिब को मेरे ही समान जानना। गुरगद्दी की जिम्मेदारी सौंप आप अधिक समय कीर्तन सुनने में ही गुजारते। ३ मार्च, १६४४ ई को आप ज्योति-जोत समा गए।

लेखक ने पुस्तक के आखिरी अध्याय में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पूरे जीवन पर रोशनी डालते हुए लिखा है कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की आयु गुरगद्दी पर विराजमान होते समय केवल ग्याहर वर्ष की थी, लेकिन गुरु जी ने न केवल कौम को बिगड़े समय से निकाला बल्कि एक मजबूत कौम बनाकर सही दिशा भी दी। सबसे पहले आपने दो कृपाणें पहनकर लोगों के गिरते साहस को बल दिया। श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना व लोहगढ़ के निर्माण के अलावा आपने मजबूत फौज भी बनाई। आपने प्रचार के काम को कभी पीछे नहीं छोड़ा। गुरबाणी का सत्कार करते और रोजाना कीर्तन श्रवण करते। मैदान में जंग की योजनाबंदी बहुत ही सही तरीके से करते और अपनी फौज में साहस भरते रहते।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब निरोल परोपकार की मूरत थे। सब्र, संतोष, सहनशीलता उनके बड़े प्रत्यक्ष गुण थे।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ऐसी महान शख्सियत थे जिन्होंने कठिन समय में कौम को संभाला और अपने पैरों पर खड़ा किया। वे सिक्खी महल इतना मजबूत कर गये कि आने वाले समय की ताकतें उसे हिलाने तक में भी नाकाम रहीं।

लेखक साहिबान से अनुरोध है कि वे अपना जीवन-ब्यौरा (Bio Data) अवश्य भेजें, जिसमें उनकी उच्च शिक्षा, साहित्यक गतिविधियों, साहित्यक प्राप्तियों का पूर्ण विवरण शामिल हो। इससे हमें लेखक साहिबान के अध्ययन-क्षेत्र तथा उनकी लेखन-रुचि आदि के बारे में जानकारी मिल सकेगी तथा हमें भविष्य में लेखक साहिबान की रुचि या अध्ययन-क्षेत्र से संबंधित रचनाएं लिखवाकर प्रकाशित करने में सुविधा रहेगी। -संपादक

प्रिं तेजा सिंघ-डॉ गंडा सिंघ के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-बीबी रजवंत कौर**

मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म १५९५ ई, जून की १९ तारीख को (गुरु की) वडाली गांव, जिला अमृतसर में पिता श्री गुरु अरजन देव जी के घर माता गंगा जी की कोख से हुआ। जब आपकी उम्र ११ वर्ष की थी तो आपके पिता जी शहीद हो गए। समय को भांपते हुए श्री गुरु अरजन देव जी ने आपको गुरगद्दी की जिम्मेदारी सौंप दी। बदलते हालात में श्री गुरु अरजन देव जी ने आपकी पढ़ाई और सिखलाई की जिम्मेदारी एक तजुर्बेकार सिक्ख बाबा बुड्ढा जी को सौंप दी। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी को कहा कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को संत-सिपाही बना दिया जाए क्योंकि उन्हें सूझ थी कि आने वाले समय के लिए यह जरूरी है। बाबा बुड्ढा जी ने आपको अक्षर ज्ञान के अलावा घुड़सवारी, शिकार खेलना, कुश्ती करना तथा बहादुरी के बहुत-से खेलों के अलावा आक्रमणकारी और रक्षा-शस्त्रों की सिखलाई दी। इसी वजह से आप एक सर्वपक्षी पुरुष के रूप में पले एवं बड़े हुए। आप शारीरिक तौर पर तंदरुस्त और बलवान थे। इसके साथ-साथ आप आध्यात्म मार्ग पर थे।

गुरगद्दी पर बैठ कर आपने दो तलवारें धारण कीं--एक मीरी अथवा सांसारिक मंडल की और एक पीरी अथवा आत्मिक मंडल की। 'मीरी' का संबंध अरबी भाषा के शब्द 'अमीर' से है। यह 'अमीर' शब्द का संक्षेप रूप है जिसका अर्थ है बादशाह, सिरदार। 'पीरी' का संबंध फारसी के 'पीर' शब्द से है, जिसका अर्थ है 'धार्मिक अधिकार' अथवा 'गुरुता'। इन दोनों शब्दों को एक व्यक्तित्व के लिए लागू होने की परंपरा का आरंभ सिक्ख धर्म में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से हुआ, इसलिए आपको 'मीरी-पीरी का मालिक' कहा जाता है। गुरु जी के दो तलवारें धारण करने के पीछे ऐतिहासिक परिस्थिति है। श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी ने सिक्ख मानसिकता को झकझोर दिया था। प्रभु की भक्ति के साथ-साथ आत्म-रक्षा का प्रश्न सामने आ गया था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने पीरी के सूचक श्री हरिमंदर साहिब के साथ ही मीरी-सूचक श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना की और अपनी जीवन-विधि को बदलते हुए वक्त के अनुरूप बदल दिया। गुरु जी ने ५२ सिक्खों की सेना रख ली और उत्साह बढ़ाने के लिए ढाढी भाई अबदुल्ला और भाई नत्था से वीर-रसी वारों को सुना जाता। आपकी सेना में माझा, मालवा और दोआबा इलाकों के ५०० नौजवान सिक्खों ने धर्म के लिए अपने आप को न्यौछावर करने के लिए गुरु जी के आगे समर्पण कर दिया। ये नौजवान वेतन भी नहीं लेते थे। गुरु जी ने इन सभी नौजवानों को एक-एक घोड़ा और युद्ध के लिए हथियार दिये। इस प्रकार उनकी एक अलग सेना तैयार हो गई। गुरु जी सुबह का धार्मिक नित्तनेम श्री हरिमंदर साहिब में करते थे। श्री अकाल तख्त साहिब पर गुरबाणी-शबदों के अलावा कुछ वारों को वीर-रसी धुनों पर सुनते थे।

दोपहर के बाद गुरु जी श्री अकाल तख्त

**452, Block-B, Sandhu Colony, Chheharta, Sri Amritsar. Mob. : 98559-44546*

साहिब के सन्मुख बैठ कर लोगों के परस्पर झगड़ों को निपटाते और सिक्खों की शिकायतों को सुनकर दूर करते थे। इसके अलावा सिक्ख नौजवान अपनी बहादुरी के जौहर दिखाते। कुश्ती और नेजेबाजी करवाई जाती। गुरु जी बाहर से आए श्रद्धालु-जनों से मिलते और बातचीत करते थे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने ऐसी मर्यादा कायम कर दी जो अभी भी चल रही है। श्री हरिमंदर साहिब की परिक्रमा में बिगुलों की गूंज, जोतों की चमक और वीर रस भरने वाली धुनों में शबदों का गयान करके कीर्तन की चौकी निकाली जाती। इससे सिक्खों में एक नई शक्ति उभरने लगी और सिक्ख हमेशा चढ़दी कला में रहने लगे। यह सब कुछ करना उन लोगों को अजीब लगा जो संत-जनों को केवल त्यागी और हाथ जोड़, आंखें मूंद कर मंत्र पढ़ने वाले ही समझते थे। सिक्ख गुरु साहिबान विलक्षण व्यक्तित्व के मालिक थे जिन्होंने मानवता की सेवा को अपने उच्च धार्मिक कामों में शामिल किया।

गुरु जी की इस तैयारी को देखकर मुगल बादशाह जहांगीर डरने लगा और उसने गुरु जी को अपने पास बुलाया। गुरु जी बादशाह के पास गए तो बादशाह ने गुरु जी को शाही कैदी बनाकर ग्वालियर के किले में भेज दिया। वहां पर और भी कई राजे कैद में थे। गुरु जी को खाने के लिए अच्छे भोजन प्रस्तुत किये गए। गुरु जी ने वो सब खाने से मना कर दिया। जो सादा भोजन सिक्ख लेकर आते थे उसे ग्रहण करके गुरु जी शुक्र में रहते थे। दूर-दूर से सिक्ख जत्थे बनाकर ग्वालियर आते थे और जिस किले में गुरु जी को रखा गया था उसकी दीवारों को चूम कर वापिस चले जाते थे। कुछ भले मुसलमानों ने भी बादशाह को कहा कि गुरु जी को रिहा कर दिया जाए। हिंदुओं, सिक्खों और मुसलमानों के मन में गुरु जी के प्रति आदर और प्यार देखकर जहांगीर ने गुरु जी को छोड़ने का हुक्म कर दिया। गुरु जी के साथ वहां पहले से कैद ५२ राजाओं का बहुत लगाव हो गया था। जब गुरु जी को छोड़ा जाने लगा तो गुरु जी ने कहा कि मेरे साथ ये राजे भी छोड़ दिये जाएं नहीं तो मैं भी नहीं जाऊंगा। बादशाह ने कहा कि जितने राजा आपका पल्लू पकड़ कर बाहर जा सकते हैं ले जाओ। सभी राजाओं ने गुरु जी के पहने हुए चोगे का कोई-न-कोई हिस्सा पकड़ लिया और सभी राजा गुरु जी के साथ कैद से बाहर आ गए। इसलिए गुरु जी को 'बंदी छोड़ गुरु' भी कहा जाता है। ये राजा आपके आत्मिक बल से बहुत प्रभावित हुए और गुरु जी के लिए उनके मन में आदर एवं स्नेह और भी बढ़ गया।

बादशाह जहांगीर इस घटना के बाद कई साल जीवित रहा, परंतु उसने गुरु जी के साथ दोबारा टकराव नहीं किया बल्कि उसने गुरु जी से मित्रता के संबंध बनाए रखने की कोशिश की। वस्तुतः उसे मालूम हो गया कि श्री गुरु अरजन देव जी के मामले में मुझे गलत बातें बताई गई थीं, इसलिए उसने चंदू को श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को सौंप दिया। चंदू को लाहौर की गलियों में घुमाया गया और एक भुनियारे ने उसके सिर पर कड़छा मारकर उसे मार दिया। जहांगीर गुरु जी के साथ शिकार करने के लिए जाता और गुरु जी की संगत का लाभ लेता। बादशाह ने श्री अकाल तख्त साहिब की इमारत को पूरा करने के लिए कुछ देने की पेशकश की तो गुरु जी ने यह कह कर मना कर दिया कि यह तख्त गुरु नानक नाम-लेवा सिक्खों की मेहनत की कमाई से ही बनेगा। मैं इसे सिक्खों की सेवा और कुरबानी का चिन्ह बनाना चाहता हूं न कि बादशाह की खुलदिली

की यादगार। इस उत्तर को सुनकर जहांगीर बादशाह बहुत प्रभावित हुआ और उसने गुरु जी के आदर्शपूर्ण स्वभाव का लोहा माना।

जब कुछ शांति का माहौल बना तो गुरु जी सिक्खी-प्रचार के काम में लग गये। श्री गुरु नानक देव जी के बाद व्यापक स्तर पर आप ही थे जो प्रचार करने के लिए पंजाब से बाहर गए। आप उत्तर में कशमीर तक गए और पूर्व में पीलीभीत के नजदीक नानकमता भी गए। उन्होंने हिंदुओं और मुसलमानों में से बहुत से लोगों को सिक्ख बनाया। जब आप मैदानी क्षेत्र में आये तो आपकी मुलाकात शाहदौला के साथ गुजरात में हुई। उस मुलाकात से आप जी की ऊंची आत्मिक अवस्था का पता चलता है। शाहदौला ने आपसे प्रश्न किया कि आप हिंदू हो इसलिए पीर कैसे हो सकते हो और आप गृहस्थी हो इसलिए फकीर कैसे हो सकते हो?

हिंदू की ते पीरी की, औरत की ते फकीरी की?
पुत्र की ते वैराग की, दौलत की ते तिआग की?

गुरु जी ने उत्तर दिया:

औरत ईमान, पुत्र निशान, दौलत गुजरान,
फकीर न हिंदू न मुसलमान।

गुरु जी के इस उत्तर से शाहदौला की तसल्ली हो गई और वह सिक्ख धर्म से बहुत प्रभावित हुआ।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने पहले गुरु साहिबान से संबंधित स्थानों की यात्रा की और उनकी यादगार में बहुत-से गुरुद्वारे बनवाये। पहाड़ी इलाकों में कीरतपुर नगर बसाया। गुरु जी कशमीर में गये तो वहां गिलटी ताप (बीमारी) बहुत फैली हुई थी। १६१६ ई से १६२४ ई तक लगातार वहां के रहने वाले लोग इस बीमारी की लपेट में आए हुए थे और बहुत दुखी थे। जो दसवंध की रकम इकट्ठी हुई थी गुरु जी ने उससे लोगों की मदद की जिससे लोगों को नया जीवन मिला और इस मदद से वहां बसने वाले बहुत-से लोग प्रभावित होकर गुरु जी के सिक्ख बन गये।

कशमीर से वापसी के समय आप ननकाणा साहिब होते हुए लाहौर गए। वहां भी लोग इस बीमारी से पीड़ित थे। समय की हकूमत ने लोगों की इस बीमारी को दूर करने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया और किसी भी तरह की कोई मदद नहीं की। वहां भी गुरु जी ने दिल खोलकर लोगों की सेवा और मदद की। फलस्वरूप बहुत-से हिंदू और मुसलमानों ने सिक्ख धर्म में प्रवेश कर लिया।

गुरु जी की इस सेवा का इतना प्रभाव पड़ा कि एक मुसलमान काजी की लड़की बीबी कौलां गुरु जी की सिक्ख बनी। यह बात एक मुसलमान काजी कैसे सहन कर सकता था? काजी ने अपनी पुत्री कौलां को बहुत ही डराया और धमकाया पर बीबी कौलां ने बाप की इन धमकियों की कोई परवाह नहीं की। काजी ने शराअ का फतवा लगवा कर कौलां को मौत की सजा करवा दी। कौलां ने साईं मियां मीर जी की मदद ली और श्री अमृतसर में पहुंच गई। यहां गुरु जी ने उसे रहने के लिए ठिकाना दिया। सिक्ख इतिहास में कहा जाता है कि पूरे के पूरे परिवार तो मुसलमानों के सिक्ख धर्म में आये ही थे लेकिन एक अकेली लड़की का सतिगुरु की शरण में आना एक शूरवीरता वाली बात थी। गुरु साहिब ने उसकी यादगार के रूप में गुरुद्वारा बाबा अटल राय साहिब से पश्चिम की ओर एक सरोवर 'कौलसर' और गुरुद्वारा बनवाया।

१६२७ ई में जहांगीर की मौत हो गई। शाहजहां राजगद्दी पर बैठा और उसने सिक्ख धर्म के प्रति कठोर नीती अपनाई। हिंदुओं के मंदिर गिरा कर वहां मसजिदें बनवा दीं। लाहौर

में सिक्खों की बाउली को मिट्टी से भर दिया और लंगर की जगह पर मसजिद बना दी। मुसलमानों पर धर्म बदलने की पाबंदी लगा दी। शाहजहां की इस नीती से सिक्खों के मन में भारी आक्रोश था। किसी भी समय आपसी झड़प होने की संभावना बनी हुई थी। १६२८ ई में एक दिन शाहजहां श्री अमृतसर के समीप शिकार खेलने आया। इधर गुरु जी के कुछ सिक्ख भी गुमटाला के पास शिकार खेल रहे थे। शाहजहां का एक बाज सिक्खों के हाथ आ गया। जब उसके आदमी अपना बाज लेने आये तो सिक्खों को उनकी पहचान न होने के कारण उन्होंने बाज देने से मना कर दिया जिससे आपस में दोनों गुट्टों में मुठभेड़ हो गई। शाही टोली मार खाकर वापिस हो गई। जब यह बात शाहजहां को पता चली तो उसने मुखलिस खां की कमान के नीचे अपनी फौज भेजी कि गुरु जी को पकड़ कर लाहौर ले जाया जाए। यह हमला अचानक किया गया। इसकी कोई खबर गुरु जी और सिक्खों को नहीं थी। गुरु जी उस वक्त अपनी सपुत्री बीबी वीरो की शादी में व्यस्त थे। उनके पास कोई भी हथियार नहीं थे। गुरु जी ने एक सूखे पेड़ को काट कर उसकी तोप बनाकर काम चलाया। इस लड़ाई में मुखलिस खां मारा गया। यह लड़ाई खालसा कॉलेज वाली जगह पर लड़ी गई थी। मुखलिस खां के मारे जाने से शाही फौज सिर पर पैर रख कर दौड़ गई। गुरु जी ने अपनी सपुत्री की शादी झबाल गांव में जाकर की जो श्री अमृतसर से लगभग आठ मील की दूरी पर है। सपुत्री की शादी का काम पूरा करके गुरु जी करतारपुर चले गए। गुरु जी का किसी से कोई जातीय वैर-विरोध नहीं था, यह सोचकर कि झगड़ा और न बढ़े तथा नुकसान न हो इसलिए आप करतारपुर में जाकर रहने लगे। गुरु जी के पिता श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री हरिगोबिंदपुर नगर बसाया था। छेवें गुरु जी ने उसका विस्तार किया और अपनी सेना में मौजूद मुसलमानों तथा वहां बसने वालों के लिए मसजिद बनवाई एवं गांव में और भी कई सुधार किये। गुरु जी के इन कामों को देखकर वहां रहने वाला हिंदू भगवान दास घेरड़ गुरु जी से ईर्ष्या करने लगा और गुरु जी से झगड़ा छेड़ लिया। इस लड़ाई में भगवान दास घेरड़ की मौत हो गई। उसके पुत्र रतन चंद ने जलंधर के फौजदार अब्दुल्ला खां की मदद से गुरु जी पर हमला कर दिया। तीन दिन लड़ाई होती रही जिसमें रतन चंद और अब्दुल्ला खां मारे गए। यह लड़ाई १६३० ई में हुई जिसमें गुरु जी की जीत हुई। इसके बाद आप सिक्ख धर्म का प्रचार करने के लिए मालवा क्षेत्र की ओर निकल पड़े, मगर गुरु जी को प्रचार करने का ज्यादा समय न मिला, क्योंकि अगले साल ही शाही सेना ने फिर गुरु जी से लड़ाई छेड़ ली।

तीसरी लड़ाई का कारण यह बना कि काबुल का एक मसंद गुरु जी के लिए दो सुंदर घोड़े लेकर आ रहा था। ये घोड़े रास्ते में एक सरकारी कर्मचारी ने उस मसंद से छीन लिये और शाही अस्तबल में भेज दिये। जब मसंद ने आकर गुरु जी को बताया तो गुरु जी ने सिक्खों से पूछा कि घोड़े वापिस लाने का काम कौन पूरा करेगा? एक सिक्ख भाई बिधीचंद, जो बहुत साहसी था, ने यह काम अपने जिम्मे ले लिया। भाई बिधीचंद बहुत ही मंनोरंजक तरीके से दोनों घोड़े वापिस ले आए। पहला घोड़ा घास डालने वाला बनकर भगा लाए और दूसरा घोड़ा एक नजूमी (पहले घोड़े का पता बताने वाला) बनकर ले आए। इस तरह दोनों घोड़े गुरु जी के पास पहुंच गए।

गुरु जी मालवा के महिराज नगर में थे

कि लाहौर के सूबेदार ने लल्ला बेग और कमर बेग की कमान तले एक शक्तिशाली सेना गुरु जी पर हमला करने के लिए भेज दी। गुरु जी और शाही सेना की यह लड़ाई महिराज नगर के पास हुई, जिसमें लगभग १२०० सिक्ख शहीद और जख्मी हुए। शाही फौज के कमांडर मारे गए और सेना भी भारी मात्रा में मारी गई। इस लड़ाई में जीत गुरु जी की हुई। इस जीत की यादगार के रूप में वहां 'अमृत सरोवर' बनाया जिसका नाम 'गुरूसर' रखा गया।

१६३२ ई में गुरु जी करतारपुर चले गए और वहां रहने लगे। गुरु जी को चैन-शांति से वहां भी नहीं रहने दिया गया। गुरु जी की सेना में एक पठान पैंदे खां था जो बहुत बहादुर और साहसी था। श्री अमृतसर की लड़ाई उसने बहुत बहादुरी से लड़ी थी। वो बहादुर तो था पर उसे इस बहादुरी का बहुत अभिमान भी था। भले ही वो गुरु जी का एक प्यारा सिक्ख था, परंतु उसके अहंकार के कारण गुरु जी ने उसे उसके गांव भेज दिया। पैंदे खां ने लाहौर के सूबेदार के पास जाकर उसको गुरु जी के ऊपर हमला करने के लिए उकसाया। लाहौर के सूबेदार ने काले खां की अगुवाई में भारी सेना भेज कर गुरु जी पर हमला करवा दिया। काले खां, मुखलिस खां का भाई था जो श्री अमृतसर की लड़ाई में मारा गया था। काले खां के साथ पैंदे खां और जलंधर के फौजदार कुतुब खां भी मदद के लिए आये। इस लड़ाई में भाई बिधीचंद और गुरु जी के बड़े सपुत्र बाबा गुरदित्ता जी ने सेना की अगुवाई की। गुरु जी के छोटे सपुत्र श्री (गुरु) तेग बहादर जी, जो १४ साल की आयु के थे, उन्होंने इस जंग में बहादुरी के जौहर दिखाये। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब खुद भी लड़ रहे थे। पैंदे खां ने गुरु जी पर वार किया। जब गुरु जी ने पैंदे खां पर पलटवार किया तो वो गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा। गुरु जी ने कहा, "पैंदे खां! तू एक मुसलमान है। अब तेरा कलमा पढ़ने का समय है।" पैंदे खां ने अपने किये पर पश्चाताप किया और कहने लगा, "गुरु जी! आपकी तलवार ही मेरा कलमा है और यही मेरी मुक्ति का साधन है।" पैंदे खां गुरु जी का प्यारा सिक्ख रहा था इसलिए गुरु जी को उस पर दया आ गई। पैंदे खां के मुंह पर जो सूरज की किरणों की गर्मी पड़ रही थी उनको रोकने के लिए गुरु जी ने अपनी ढाल से छया कर दी तथा पैंदे खां को भरी आंखों से विदायगी दी। पैंदे खां के मरने के पश्चात जल्दी ही काले खां भी मारा गया जिसको देखकर शाही फौज मैदान छोड़कर भाग गई और गुरु जी की जीत हुई। यह लड़ाई १६३४ ई में हुई।

चारों जंगों में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की जीत हुई। इससे उनकी शूरवीरता का पता चलता है कि आप कितने बहादुर और निर्भय थे। आपकी हर जंग का मकसद अपने बचाव के लिए लड़ना था। आपने किसी भी लड़ाई में एक इंच भी जगह पर कब्जा नहीं किया। आपने अपने सिक्खों में विदेशी हमलावरों का मुकाबला करने की हिम्मत जुटाई, सिक्खों के इरादों में दृढ़ संकल्प पैदा किया और गैरत से जीना सिखाया। आपने धार्मिक और राजसी गुलामी के नीचे दबे लोगों को मानवतावाद का संदेश दिया और उनमें नई जिंदगी भर दी।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिक्खी-प्रचार करना शुरू कर दिया। आप रमदास होते हुए गांव बारठ में बाबा श्रीचंद जी को मिले। आपके साथ आपके बड़े पुत्र बाबा गुरदित्ता जी भी थे। सिक्ख इतिहास से पता चलता है कि बाबा गुरदित्ता जी की नुहार गुरु नानक पातशाह से मिलती थी। बाबा श्रीचंद जी श्री गुरु हरिगोबिंद

साहिब के दर्शन कर बहुत प्रसन्न हुए और अपना परलोक गमन का समय नजदीक जानकर यह फैसला किया कि सिक्खी के प्रचार के लिए उदासी पहरावे को श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब की प्रवानगी से उनके सपुत्र बाबा गुरदित्ता जी को दे दिया जाए। बाबा श्रीचंद जी ने गुरु जी को कहा कि गुरगद्दी की जिम्मेदारी तो पहले ही आपके पास है और यह जो उदासी पहरावा हमने सिक्खी के प्रचार के लिए पहन रखा है आज से सिक्खी के प्रचार की सेवा भी आपको सौंपी जा रही है। यह कहकर बाबा श्रीचंद जी ने बाबा गुरदित्ता जी को उदासी मत का पहरावा पहना दिया। बाबा गुरदित्ता जी उदासी पहरावा पहनकर बिलकुल गुरु नानक साहिब के तरह दिख रहे थे। बाबा श्रीचंद जी ने बाबा गुरदित्ता जी को देखकर ऐसे महसूस हुआ जैसे उनके पिता जी पहली उदासी से वापिस लौटे थे और उन्हें मिले थे।

१६३६ ई में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के कहने पर बाबा गुरदित्ता जी ने सिक्खी के प्रचार के लिए चार सिक्खों को उदासी पहरावा पहनाकर प्रचारक नियुक्त किया। इन प्रचारकों के नाम अलमस्त, फूल, गोंदा और बालू हसन थे। ये चारों सिक्ख धर्म के सरगर्म प्रचारक सिद्ध हुए। इन चारों ने चार धुएं स्थापित किये। अलसमत को नानकमता और ढाका भेजा गया। उदासी प्रचारकों ने बहुत प्रसिद्धि प्राप्त की। सिक्ख धर्म का प्रचार दूर-दूर तक फैल गया।

आपने सिक्खी के प्रचार के लिए और भी कई प्रचार केंद्र स्थापित किये जिनको बख्शिशें कहा जाता है। सुथरे शाह गुरु जी का प्रचारक बहुत ही हंसमुख तरीके से लोगों में प्रचार करता था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा बिधीचंद को बंगाल में प्रचार करने भेजा और भाई गुरदास जी को घोड़ों का व्यापार करने के लिए काबुल, कंधार में भेजा। गुरु जी ने एक सिपाही को प्रचारक बनाकर भेजा। गुरु जी की इस बात से पता चलता है कि आप अपने सिक्खों को सर्वगुण-संपन्न बनाना चाहते थे। इस बात से सिक्खों के आचरण की सर्वपक्षीय उन्नति का पता चलता है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब आखिरी समय में कीरतपुर आकर रहने लगे। वहां आपने अपने दस साल भक्ति-भावना में बिताये। आप सादगी-पसंद थे और साधारण जीवन व्यतीत करते थे। आप करामात दिखाने के खिलाफ थे। आपके अपने सपुत्र बाबा अटल राय जी और बाबा गुरदित्ता जी ने जब करामात दिखाई तो आपने उनको अप्रवान किया। बाबा अटल राय जी ने एक साथी मित्र को जीवित किया। जब उन्हें पता चला कि इस बात से गुरु-पिता नाराज हैं तो बाबा अटल राय जी ने अपने प्राण त्याग दिये। इसी तरह बाबा गुरदित्ता जी ने मरी हुई गाय को जीवित किया तो गुरु जी को यह बात अच्छी नहीं लगी। बाबा गुरदित्ता जी ने भी अपने प्राण त्याग दिये। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पांच सपुत्र थे। इनमें से आपके तीन सपुत्र बाबा गुरदित्ता जी, बाबा अटल राय जी और बाबा अणी राय जी आपके होते हुए ही परलोक गमन कर गये। बाबा सूरज मल जी जरूरत से ज्यादा सांसारिक मामलों में खचित रहते थे। आपके छोटे सपुत्र श्री (गुरु) तेग बहादर साहिब भक्ति में लीन रहते थे और वे अपनी ननिहाल गांव बाबा बकाला चले गए। बाबा गुरदित्ता जी के दो पुत्र थे। धीरमल और (गुरु) हरिराय साहिब। गुरु जी ने श्री (गुरु) हरिराय साहिब को गुरगद्दी के योग्य होने के कारण उन्हें गुरगद्दी सौंप दी और खुद ३ मार्च, १६४४ ई को कीरतपुर में ज्योति-जोत समा गए।

"सिक्ख इतिहास" कृत प्रो. करतार सिंघ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-स. ऊधम सिंघ**

प्रो. करतार सिंघ ने 'सिक्ख इतिहास' पुस्तक में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के जीवन-वृत्तांत को सात खंडों में व्यक्त किया है। पहले खंड में जन्म, बचपन और गुरु साहिब की शिक्षा का वर्णन है। नम्रता और परमात्मा की रजा में राजी रहने वाले श्री गुरु अरजन देव जी के घर शादी के बाद पंद्रह साल तक कोई संतान नहीं हुई। माता गंगा जी को उनकी जेठानी ताने मारती और बुरा-भला कहती। माता गंगा जी ने अपने पति और जगत की मुरादें पूरी करने वाले श्री गुरु अरजन साहिब के आगे संतान की बख्शिश के लिए विनती की। गुरु साहिब ने उन्हें बाबा बुड्ढा जी के पास संतान-प्राप्ति का वर प्राप्त करने के लिए भेजा। इस तरह २१ आषाढ़, संवत् १६५२ को गुरु अरजन साहिब के घर एक पुत्र ने जन्म लिया जिसका नाम आपने 'हरिगोबिंद' रखा।

बाल अवस्था में आप पर आपके ताऊ प्रिथीचंद ने आपको खत्म करने के लिए कई वार किए। पहले तो प्रिंथीचंद और उसकी पत्नी करमो ने दाई (खेलावी) के स्तनों पर जहर लगवाकर उसे भेजा, लेकिन बाल श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब ने उसके स्तनों से दूध न पिया। वो जहर के साथ खुद ही मर गई। फिर उस पापी जोड़ी ने बाल श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब के कमरे में जहरीला सांप छोड़ दिया, परंतु सेवादारों को पता चलने से उसे समय रहते मार दिया गया। दो बार असफल होने के बाद भी प्रिथीचंद ने एक अन्य व्यक्ति को धन देकर दहीं में जहर मिलाकर बाल श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को खिलाने की कोशिश की। श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब ने दहीं खाने से बार-बार इंकार किया। पिता श्री गुरु अरजन देव जी ने दहीं कुत्ते को डाल दिया। जहर वाला दहीं खाते ही कुत्ता मर गया। यूं सारा भेद पता चल गया। सच सामने आने पर प्रिथीचंद की सारे शहर में बदनामी हुई। इस पर गुरु अरजन साहिब ने साहिबजादे की रक्षा करने पर वाहिगुरु का धन्यवाद किया और यह शबद उच्चारण किया:

लेपु त लागो तिल का मूलि ॥
दुसटु ब्राहमणु मूआ होइ कै सूल ॥
हरि जन राखे पारब्रहमि आपि ॥
पापी मूआ गुर परतापि ॥ (पन्ना ११३७)

इसके बाद श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब पर एक और कष्ट आया। उनको चेचक की बीमारी ने जकड़ लिया। परमात्मा ने कृपा की और आप तंदरुस्त हो गए। परमात्मा का धन्यवाद करते हुए पिता-गुरु ने एक और शबद उच्चारण किया:

जन की पैज सवारी आप ॥
हरि हरि नामु दीओ गुरि अवखधु उतरि गइओ सभु ताप ॥१॥रहाउ॥
हरिगोबिंदु रखिओ परमेसरि अपुनी किरपा धारि ॥ (पन्ना ५००)

श्री गुरु अरजन देव जी समझ गए थे कि आगे आने वाला समय ऐसा होगा कि जुल्म और बदी की ताकतों का सामना करने तथा सच्चे धर्म का प्रचार करने के लिए सिक्खों को संत-सिपाही बनना पड़ेगा। ऐसे समय में गुरगद्दी

**VPO : चविंडा देवी, श्री अमृतसर। मो. : ९८५५५-९६९२२*

पर विराजमान व्यक्ति को ऐसे गुणों और शक्तियों की आवश्यकता पड़ेगी। इसी को ध्यान में रखते हुए पंचम पातशाह ने श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को ऐसी ही शिक्षा दिलाने का फैसला किया। बाबा बुड्ढा जी की निगरानी में साहिबजादे को गुरु-घर की विद्या के साथ शस्त्र चलाने, घुड़सवारी, कुश्ती और शूरवीरों के करतबों की सिखलाई दी गई। नतीजा यह हुआ कि श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब हर तरह से संपूर्ण योग्यता वाले पुरुष बन गए।

खंड २ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरिआई मिलने और सिक्ख फौज की नींव रखने का जिक्र है। विरोधियों की झूठी शिकायतों और मजहबी ईर्ष्या में लिप्त जहांगीर ने श्री गुरु अरजन देव जी को गिरफ्तार करने का हुक्म किया। गुरु साहिब ने लाहौर जाने से पहले गुरगद्दी का अगला उत्तराधिकारी अपने साहिबजादे को नियुक्त किया और कहा कि हमारा सचखंड-वापसी का समय आ गया है, हमने लाहौर से दोबारा वापस नहीं आना। उन्होंने सिक्खों को हुक्म दिया कि समय बदल रहा है, ताकत से रहना, परमात्मा पर भरोसा रखना, सिक्खी रहित में रहना और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की कमान में पंथ की उन्नति और रक्षा के लिए तन-मन न्यौछावर करने तथा प्रत्येक तरह का कष्ट सहारने से संकोच न करना।

इस तरह २५ मार्च, सन् १६०६ को बाबा बुड्ढा जी ने गुरिआई की रस्म अदा की। उस समय आपकी उम्र ग्यारह वर्ष थी। गुरिआई देते समय बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के कहने पर उन्हें दो कृपाणें पहनायीं जो 'मीरी' और 'पीरी' की प्रतीक थीं। गुरगद्दी पर बैठते ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने संगत को हुकमनामा भेजा कि आगे से भेंटा के साथ अच्छे घोड़े तथा शस्त्र भी लेकर आएं।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अमृतसर की मजबूती के लिए लोहगढ़ का किला बनवाया। फिर श्री हरिमंदर साहिब के सामने संवत् १६६६ को प्यार, शूरवीता और कौमी भावना का प्रतीक तख्त श्री अकाल तख्त साहिब स्थापित किया। यहां ढाढी वीर-रसी वारें गाकर सिक्खों में वीरता भरते और शारीरिक करतबों के साथ बल का प्रदर्शन होता। गुरु साहिब यहीं पर अपना आसन लगाते और लोगों के झगड़ों का निपटारा करते। गुरु जी ने अपनी सेना बनाई जिसमें नौजवान भर्ती किए गए। नौजवान बिना तनखाह गुरु जी की सेना में भर्ती होते और गुरु साहिब की आज्ञा मानते। गुरु साहिब ने नगारा भी तैयार किया और निशान साहिब भी झुलाया।

खंड ३ में लेखक ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब और जहांगीर के संबंधों के बारे में बयान किया है। श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अपना तख्त और फौज बनाकर दीन-दुखियों की मुश्किलें एवं झगड़े निपटाने लगे। इससे गुरु साहिब का यश दूर-दूर तक फैल गया। चंदू और मिहरबान फिर से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के विरुद्ध जहांगीर के कान भरने लगे: "गुरु साहिब ने फौज रख ली है, नगारा बजाते और निशान झुलाते हैं, शिकार खेलते हैं। अपने लिए तख्त भी बना लिया है। सच्चा पातशाह कहलवाते हैं। वे अपने पिता की शहीदी का बदला लेने की तैयारियां कर रहे हैं। इनका अभी से बंदोबस्त करना चाहिए।"

ये बातें सुन जहांगीर ने गुरु साहिब को दिल्ली बुलवा लिया। गुरु साहिब ने अपने तीन सौ सिक्ख योद्धाओं के साथ दिल्ली में मजनू टिल्ले पर जा आसन लगाया। दिल्ली की संगत गुरु जी के दर्शन को पहुंची। फिर बादशाह ने गुरु जी का रस्मी स्वागत किया और धर्म के

बारे में पड़ताल की। गुरु साहिब ने बादशाह की हर बात का जवाब दिया। जहांगीर ने गुरु साहिब को अपने महल में रखा। एक दिन शिकार खेलते समय गुरु साहिब ने जहांगीर को शेर के हमले से बचाया तो जहांगीर ने गुरु साहिब का धन्यवाद किया। जहांगीर को फिर भी यकीन न हुआ कि गुरु साहिब ने फौज और तख्त जुल्म का नाश करने तथा दीन-दुखी की रक्षा करने के लिए बनाया है। उसने गुरु साहिब को आगरा के किले में कैद कर दिया।

उस किले में पहले ही ५२ राजे कैद में थे। गुरु साहिब कैद में भी खुशी-आनंद में रहे और संगत को परमात्मा की रजा में राजी रहने का हुक्म दिया। गुरु साहिब को कैद में रखने पर सभी धर्म वालों ने आवाज उठाई। मुसलिम धर्म वालों के भी आवाज उठाने पर जहांगीर को गुरु साहिब को छोड़ने पर मजबूर होना पड़ा। गुरु साहिब ने कहा कि मैं अकेला नहीं, बाकी सभी राजा भी रिहा किए जाएं। जहांगीर को मजबूरन कहना पड़ा कि जो गुरु साहिब का पल्ला पकड़कर बाहर निकल सकता है वो आजाद है। इस तरह गुरु साहिब ने ५० कलियों वाला चोला पहना और दो राजा गुरु साहिब के हाथ पकड़ कर बाहर आए। इस तरह आप 'बंदी छोड़ पातशाह' कहलवाए। इसके बाद जहांगीर और गुरु साहिब के संबंध अच्छे रहे। गुरु साहिब ने सिक्खी-प्रचार में अपना पूरा ध्यान लगाया।

खंड ४ में गुरु साहिब के परिवार और गुरसिक्खी परिवार का वर्णन है।

गुरु साहिब पूरी जी-जान से सिक्खी-प्रचार में जुट गए। पहले गुरु साहिब लाहौर गए, वहां अपने पिता के शहीदी-स्थान की यादगार बनाई। लाहौर से चलकर गुजरांवाला, वजीराबाद, गिंबर आदि स्थानों से होते हुए और अनेक जीवों को गुरसिक्खी दान देते हुए आप कश्मीर पहुंचे। वहां श्रीनगर में मरहट्टों के धार्मिक आगू समरथ रामदास से मिले और उनके प्रत्येक प्रश्न का उत्तर बड़ी निर्भयता से दिया। थोड़ा समय कश्मीर रहने के बाद बारामूला से होते हुए कुछ समय गुजरात ठहरे। वहां आपको प्रसिद्ध फकीर शाह दौला मिला। उसने मीरी-पीरी वाला ठाठ-बाठ देखा तो गुरु साहिब को चार सवाल किए :

१. हिंदू क्या और फकीरी क्या?
२. औरत क्या और पीरी क्या?
३. पुत्र क्या और वैराग क्या?
४. दौलत क्या और त्याग क्या?

गुरु साहिब ने चारों प्रश्नों का उत्तर ऐसे दिया :

१. औरत ईमान।
२. पुत्र निशान।
३. दौलत गुजरान।
४. फकीर न हिंदू न मुसलमान।

लेखक ने गुरु जी के इस भाव को समझाते हुए लिखा है कि इंसान की स्त्री उसका आचरण कायम रखने में सहाई होती है, पुत्र उसकी यादगार कायम रखते हैं, धन-दौलत उसके गुजारे के लिए होती है और फकीरी तो परमात्मा का प्यार होता है, फकीर न हिंदू होता है न ही मुसलमान।

गुजरात से होते हुए गुरु साहिब वजीराबाद, भाई के मटटू, हाफिजाबाद, शकरपुर आदि होते हुए ननकाणा साहिब पहुंचे। वहां सभी गुरु-स्थानों की सेवा-संभाल का प्रबंध किया और फिर गुरु साहिब श्री अमृतसर आ गए।

फिर गुरु साहिब भाई अलमस्त के कहने पर नानकमता साहिब पहुंचे और योगियों से गुरु-स्थान के अपमान का हिसाब लिया। योगी डरते मारे भाग गए। गुरु साहिब ने फिर वहां सिक्खी केंद्र स्थापित किया। वहां से गुरु साहिब ने नालागढ़, दून और अन्य पहाड़ी इलाकों का

दौरा किया तथा सभी स्थानों पर हिंदुओं और मुसलमानों को गुरसिक्खी का दान दिया।

कुछ समय बाद गुरु साहिब प्रचार के लिए मालवा के क्षेत्र में गए। वहां डरौली गांव में ठहरे। वहां सखी सरवर के दो उपासक साधू और रूपा थे। वहां गुरु साहिब ने साधू और रूपा की फरियाद सुन दर्शन दिए तथा ठंडा जल छका।

खंड ५ में लेखक ने गुरु साहिब द्वारा निर्मित स्थानों और नगरों का जिक्र किया है। गुरु साहिब द्वारा स्थान रचने और नगर बसाने के दो कारण थे। पहला तो यह कि गुरु साहिब उपदेशों द्वारा लोगों के जीवन सच्चे-सुच्चे करने और उनके दिलों में दलेरी, निडरता व स्वाभिमान के भाव तथा आजादी के लिए प्यार पैदा करना चाहते थे। दूसरा कारण था कि गुरु साहिब जगह-जगह व्यापार-व्यवहार के केंद्र स्थापित कर लोगों को कार-विहार और व्यापार में डालकर देश की तथा देशवासियों की आर्थिक दशा सुधारने के यत्न करते थे।

खंड ६ में लेखक ने गुरु साहिब द्वारा लड़ी गई जंगों का वर्णन किया है। गुरु अरजन साहिब आगे आने वाले समय को भांप गए थे। अत: अपने साहिबजादे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरगद्दी देने के साथ अपने पास फौज रखने का भी आदेश कर गए थे।

जहांगीर के रहते तो गुरु साहिब अमन-अमान से गुरसिक्खी का प्रचार करते रहे। उसने मित्रता कायम रखी और गुरु जी के काम में कोई दखलंदाजी न की। सन् १६२७ में उसकी मौत के बाद शाहजहां बादशाह बना और उसने नीति बदलते हुए मुसलमानी धर्म छोड़ने पर रोक लगा दी। उसने मंदिरों को गिरा कर मस्जिदें बनानी शुरू कर दीं। उसने लाहौर में गुरु अरजन साहिब द्वारा खुदवाई गई बाउली को पाट दिया और लंगर के स्थान पर मस्जिद बनवा दी। इस बात से सिक्खों के मन में रोष उत्पन्न हुआ। उधर मुगल भी हैंकड़ में झूमते फिर रहे थे। ऐसे में जंग होना स्वाभाविक था।

१. श्री अमृतसर की जंग : संवत् १६८५ को जहांगीर श्री अमृतसर के पास शिकार खेलने आया तो उसका बाज उड़कर सिक्खों के हाथ लग गया। शिकारी वर्ग में यह परंपरा चली आ रही थी कि यदि किसी का बाज उड़कर अन्य किसी के बाजों में जा मिले तो वह उसी की मालकी बन गया समझा जाता था। दसतूर के कारण वो सिक्खों की जायदाद बन गया। बादशाह के आदमी बाज मांगने आए और उसे रौब से छीनना चाहते थे। सिक्खों ने बाज न दिया। बादशाह के आदमियों ने बढ़ा-चढ़ा कर सारी बातें जा बताईं। बादशाह ने गुरु जी को गिरफ्तार करने के लिए मुखलिस खां की कमान तले सात हजार फौज भेजी। उधर गुरु जी इन सब बातों से बेफिक्र अपनी सपुत्री वीरो के विवाह में व्यस्त थे। गुरु जी के पास कोई तोप आदि भी नहीं थी।

मुखलिस खां फौज लेकर श्री अमृतसर आ पहुंचा। २३ ज्येष्ठ को सिक्खों और मुगल सेना के बीच जंग शुरू हुई। तीन दिन जंग चलती रही। गुरु जी ने लकड़ी की तोप चलाई। कड़े मुकाबले में मुखलिस खां मारा गया। मुगल फौज हार गई और गुरु जी की जीत हुई।

२. श्री हरिगोबिंदपुर की जंग : अमन की खातिर गुरु जी श्री अमृतसर छोड़ जलंधर के पास करतारपुर जा टिके। फिर वहां से श्री हरिगोबिंदपुर चले गए। वहां का चौधरी भगवान दास घेरड़ था जो सिक्खों के साथ वैर कमाता था। संवत् १६८७ में उसने गुरु जी से लड़ाई की जिसमें वो मारा गया। उसके बाद उसका लड़का रतनचंद जलंधर के फौजदार अबदुल्ला खां की मदद लेकर गुरु जी

पर हमला करने आया। तीन दिन तक घमासान लड़ाई हुई। अबदुल्ला खां और रतनचंद मारे गए। गुरु जी की जीत हुई।

३. मराझ की जंग : फिर दोबारा गुरु जी अमन-अमान से श्री हरिगोबिंदपुर के इलाके में सिक्खी-प्रचार करते रहे। संवत् १६८८ में काबुल से एक मसंद गुरु जी के लिए दो बढ़िया नस्ल के घोड़े ला रहा था। घोड़े रास्ते में लाहौर के सूबेदार ने छीन लिए। गुरु जी को इस बात का पता चलने पर उन्होंने भाई बिधीचंद को घोड़े लाने के लिए भेजा। भाई साहिब ने दोनों घोड़े लाकर गुरु जी को भेंट किये। इस पर जंग हो गई। लला बेग और कमरबेग बीस हजार फौज लेकर गुरु जी पर चढ़ाई करने आए। उधर गुरु जी को भी इस बात का पता लग गया था। सतलुज के पार मराझ के स्थान पर लड़ाई हुई। गुरु जी और लला बेग में तगड़ा युद्ध हुआ। लला बेग मारा गया। शाही फौज मैदान छोड़कर भाग गई। इस लड़ाई में सिक्खों का भी बहुत नुकसान हुआ, परंतु गुरु जी की जीत हुई।

४. करतारपुर की जंग : मराझ की जंग के बाद गुरु जी करतारपुर वापस चले आए। कुछ देर अमन से प्रचार करते रहे। गुरु जी की फौज में पैंदे खां नाम का एक मुसलमान पठान था। बचपन से उसे गुरु जी ने पाला था और जवान होने पर गुरु जी ने उसे अपनी फौज का सरदार नियुक्त किया। श्री अमृतसर की जंग में उसने काफी जौहर दिखाए जिससे उसे अहंकार हो गया था कि उसके बगैर गुरु जी की जीत असंभव थी। उसके जमाई ने उसे गुरु जी के विरुद्ध भड़का दिया। गुरु जी ने उसे नौकरी से निकाल दिया। वो बादशाह के पास नौकर भर्ती हो गया। उसने काले खां के साथ बादशाह की फौज लेकर संवत् १६९१ में गुरु जी के विरुद्ध करतारपुर पर चढ़ाई कर दी। घमासान लड़ाई हुई। इस लड़ाई में श्री (गुरु) तेग बहादर साहिब ने भी कमाल के जौहर दिखाए। काले खां आदि सारे पठान मारे गए। पैंदे खां की गुरु साहिब के साथ आमने-सामने लड़ाई हुई। गुरु जी ने उसे पहले वार करने को कहा। गुरु जी ने उसके सभी वार रोक एक ही वार में उसे खत्म कर दिया। पैंदे खां के मरने के साथ ही शाही फौज बिखर गई और गुरु साहिब की जीत हुई।

आखिर में लेखक ने गुरु साहिब द्वारा लड़ी गई चारों जंगों के बारे में विचार देते हुए लिखा है : "गुरु साहिब ने चार युद्ध लड़े, चारों ही जीते। चारों ही मौकों पर उन्हें अपनी रक्षा के लिए ही लड़ना पड़ा। आपने कभी पहल न की। जीत प्राप्त कर आपने एक इंच भर भी इलाका नहीं हथिआया। वे वैरी के सम्मुख होकर लड़ते, पीठ पर वार न करते। शस्त्रहीन और भागे जाते पर वार न करते। ये युद्ध राजसी नहीं थे बल्कि धर्म-युद्ध थे। ये युद्ध बाज और घोड़ों की मालिकी के लिए नहीं थे, इनका मकसद कुछ और था। गुरु साहिब दीन-दुखियों में वीर-रस भरकर जुल्म के विरुद्ध उठने और डटकर लड़ते हुए विदेशी ताकत से देश को आजाद करवाने के लिए तैयार कर रहे थे। मुगल सरकार इस तबदीली को रोकना चाहती थी। तुर्कों के साथ उनकी लड़ाइयों का यही मकसद था।

प्रचार-दौरों पर बाबा गुरदित्ता जी गुरु साहिब के साथ रहते। बाबा गुरदित्ता जी गुरु साहिब के बड़े सपुत्र थे। एक समय जब गुरु साहिब प्रचार-यात्रा पर बारठ साहिब गए तो वहां उनकी भेंट बाबा श्रीचंद से हुई। बातचीत के दौरान बाबा श्रीचंद ने गुरु साहिब से संतान के बारे में पूछा तो गुरु साहिब ने कहा कि मेरे

पांच पुत्र हैं। बाबा जी ने एक पुत्र की मांग की तो गुरु साहिब ने कहा कि इस समय मेरा बड़ा पुत्र (बाबा) गुरदित्ता मेरे साथ है। यह आपकी सेवा में हाजिर है। बाबा श्रीचंद ने अपनी सेली टोपी बाबा गुरदित्ता जी को बख्शी। इस तरह बाबा श्रीचंद का उदासी संप्रदाय आगे चला। गुरु साहिब ने बाबा गुरदित्ता जी को आगे भी सिक्खी-प्रचार का काम सौंपे रखा और आज्ञा की कि सिक्खी-प्रचार के चार मुखी नियत करें तथा सिक्खी-प्रचार का काम योजनाबद्ध ढंग से करें। इस तरह बाबा गुरदित्ता जी ने भाई अलमस्त जी, बालू हसना जी, फूलशाह जी और गोंदा जी को इस काम के लिए चुना जो सिक्खी-प्रचार के स्रोत बने।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपना सचखंड जाने का समय निकट आता देख गुरगद्दी का अगला वारिस चुनना था जो इस जिम्मेदारी को संभालने में योग्य हो। आप जी के रहते ही आपके तीन बेटे परलोक गमन कर चुके थे। शेष में से दो सपुत्र--बाबा सूरज मल जी (जिनका मन दुनियादारी की तरफ था) और श्री (गुरु) तेग बहादर जी थे, जो त्यागी स्वभाव के थे। समय की मांग अभी कुछ और थी। बाबा गुरदित्ता जी के दो सपुत्र धीरमल और श्री (गुरु) हरिराय साहिब थे। धीरमल गुरु-घर का विरोधी था। गुरु साहिब ने श्री (गुरु) हरिराय साहिब को गुरगद्दी का अगला वारिस चुना और स्वयं ३ मार्च, १६४४ को ज्योति-जोत समा गए।

सिक्ख हथियारबंद संघर्ष के अग्रणी : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

-*डॉ. भगवंत सिंघ**

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी। *(वार १:४८)*

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब छठे गुरु जी का जन्म १९ जून, १५९५ को श्री गुरु अरजन देव जी के घर माता गंगा जी के उदर से गांव वडाली, जिला श्री अमृतसर में हुआ। आपका बचपन बहुत भयावह हालातों से गुजरा। इसका मुख्य कारण प्रिथीचंद था, जो आपका ताया था। वो सारी जायदाद का मालिक बनना चाहता था। इसी कारण उसने योगियों, कहारों आदि से गुरु जी पर कई हमले करवाए। एक दाई को उसके स्तनों पर जहर लगाकर भेजा, परंतु जहर चढ़ने से दाई स्वयं ही मर गई। इसी प्रकार आपको खिलाने वाले दुनीचंद को पांच सौ रुपये देने की बात कहकर खाने वाले दही में जहर मिलवा दिया। आपने वह दहीं न खाया और खिलाने वाले के ज्यादा जोर देने पर आप ऊंचे स्वर में विरोध करने लगे। जब श्री गुरु अरजन देव जी ने आपकी आवाज सुनी तो खिलाने वाले को इसका कारण पूछा। खिलाने वाले के उत्तर देने पर श्री गुरु अरजन देव जी ने वह दहीं कुत्ते को डलवा दिया। कुछ देर बाद वह कुत्ता मर गया। सिक्खों को संदेह होने पर खिलाने वाले को जोर देकर पूछा तब उसने सारी बात बता दी। लोगों में प्रिथीचंद और उसके दुष्ट साथी की करतूत जाहिर हो गई तथा सारे शहर में उसकी बदनामी हुई।

श्री गुरु अरजन देव जी की दूरंदेशी सोच ने यह भांप लिया कि समय के हुक्मरानों की तरफ से किए जा रहे जुल्मों से टक्कर लेने के लिए शस्त्रबद्ध होना और तलवार उठानी पड़ेगी। इस कारण श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को शस्त्र-सिखलाई के लिए बाबा बुड्ढा जी को नियत किया। बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरबाणी की पढ़ाई के साथ-साथ शस्त्रों का प्रयोग, घुड़सवारी, नेजाबाजी और बहादुरी के सारे कार्यों में निपुण तथा परिपक्व बना दिया। सोलह साल की उम्र में तीरअंदाजी, नेजाबाजी, घुड़सवारी में कोई भी आपकी बराबरी नहीं कर सकता था।

२५ मई, १६०६ ई को ग्यारह साल की उम्र में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरिआई दी गई। आप जी ने सेली टोपी की जगह दो तलवारें, दसतार और कलगी धारण की। दो तलवारें बाबा बुड्ढा जी की भूलवश नहीं जैसा कि आम प्रचार किया जाता रहा है, बल्कि चेतन-स्तर पर गुरु साहिब ने 'मीरी और पीरी' के संकल्प को अमली रूप देने के लिए खुद धारण कीं। बाबा बुड्ढा जी जो कि गुरु जी को शस्त्रों और ग्रंथों का अभ्यास करवाने वाले बहुत बड़े शिक्षक, विद्वान और ज्ञानी थे, उनसे ऐसी भूल कभी नहीं हो सकती और न ही गुरु साहिब शस्त्रों के इस्तेमाल से अनजान थे।

गुरगद्दी पर विराजमान होने के बाद गुरु साहिब ने शस्त्र व अच्छे घोड़े इकट्ठे करने के

*****संपादक, जन साहित (मासिक), भाषा भवन, भाषा विभाग पंजाब, पटियाला। मो: ९८१४८५१५००

लिए दूर-नजदीक के सिक्खों को हुकमनामे जारी किए। इस प्रकार अब हर तरफ से हथियार, घोड़े और दूसरा जंगी सामान तोहफों के रूप में लगातार आने लगा। गुरु साहिब के पास बहुत घोड़े और असलाह-गृह में बहुत-से शस्त्र जमा हो गए। आपने श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना की। इसका उद्देश्य सिक्ख हृदयों में राजसी ठाठ पैदा करना था। श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना करना भक्ति और शक्ति का सुमेल करना था।

शारीरिक शक्ति और हृष्ट-पुष्ट शरीरों को योद्धा-गुरु की उतनी ही हिमायत मिली जितनी कि उच्चतम पवित्रता और रहस्य-विद्या को है।

योद्धा-गुरु की मुख्य रुचि ने उनको लाव-लश्कर की संगत में, जंग के खतरे में, शिकार की उकसाहट में आनंद प्राप्त करवाया। यह भी हो सकता है कि सांसारिक नेतृत्वकर्त्ता की नीति एक दुखी पुत्र की भावनाएं और धार्मिक नेतृत्वकर्त्ता के कर्त्तव्यों के साथ मिलजुल गई हो ताकि उनके कर्म उनकी रुचियों के अनुकूल ढल जाएं, भले ही उन्होंने अकबर के पुत्र की नरम-सी सत्ता के अधीन न्यून स्वतंत्रता और अधिक उद्देश्य भी निश्चित किया हो।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने चुनिंदा ५२ योद्धा अपने पास रखे जो सिक्खों को शस्त्र-विद्या सिखाते थे। गुरु जी की यह रुचि देखकर माझा, मालवा और दोआबा क्षेत्र में से पांच सौ के करीब सिक्ख युवा सतिगुरु जी के पास आकर इकट्ठा हुए। गुरु जी की अगुआई में सिक्ख जंगलों में शिकार खेलते। एक मतानुसार गुरु जी के पास ८०० घोड़ों का रसाला, ३०० घुड़सवार और ६० तोपचियों का एक दसता था जो उनकी निजी रक्षा करता था।

श्री कन्हैया लाल के अनुसार, "गुरु जी की फौजों की गिनती पांच हजार तक हो गई। गुरु जी के पास एक मजबूत फौज तैयार हो गई। फौज में शामिल जवान गुरु जी के लिए अपनी जान कुर्बान करते थे।

उस समय की मुगल हकूमत की जबरदस्ती से तंग आये राजपूत राजा गुरु जी के पास पनाह लेते थे, जिनमें से जैसलमेर का राजा रामप्रताप प्रमुख है। गुरु जी की फौज में मुसलमान भी शामिल हुए। पठान पैंदे खां को गुरु जी ने अपने पुत्रों की तरह पाला, परंतु वह बाद में नमकहराम हो गया और गुरु जी के हाथों करतारपुर के युद्ध में मारा गया।

जनसाधारण में गुरु जी का यश दुगुना-चौगुना फैल रहा था। पंजाब की किसानी गुरु जी की कमान के नीचे इकट्ठी हो रही थी। यह देखकर लाहौर के हुक्मरान और दीवान चंदू बहुत परेशान हो गए। उन्होंने एक चाल के तहत मुगल बादशाह जहांगीर को नजूमियों के माध्यम से कहलवा भेजा कि "आपका सितारा इस समय सही अथवा आपके हित में नहीं है। चालीस दिन निरंतर खुदा के नाम का मंत्र पढ़ा जाए तो तब आपका ग्रह टल सकता है और इस काम के योग्य केवल गुरु हरिगोबिंद जी हैं।" बादशाह ने गुरु जी को इस काम के लिए ग्वालियर भेज दिया। ईर्ष्यावादी चंदू और दूसरे अहलकारों का मंतव्य गुरु जी को ग्वालियर के किले में कत्ल कर देना था।

ग्वालियर के किले में उस वक्त विरोधी राजा, जिनसे मुगल बादशाहों को खतरा था, नजरबंद किए जाते थे। ग्वालियर के किले के अंदर कैदी राजा गुरु जी के सच्चे श्रद्धालु बन गये। उधर पंजाब तथा पंजाब से बाहर गुरु जी

की नजरबंदी को लेकर लोगों में विद्रोह की ज्वाला भड़क उठी थी। बादशाह ने समय की नजाकत को समझते हुए गुरु जी को रिहा करने का हुक्म दे दिया। गुरु जी की रिहाई का हुक्म सुनकर किले में कैद राजाओं का दिल बैठ गया, क्योंकि कैद में मिली सुविधाएं गुरु जी के कारण ही उपलब्ध हुई थीं। गुरु जी ने किलेदार के जरिए राजाओं की रिहाई के लिए बादशाह को प्रेरणा की। बादशाह ने गुरु जी की प्रेरणा पर मान लिया कि जो राजा गुरु जी का पल्ला पकड़ कर बाहर निकलना चाहता है उसे रिहा कर दिया जाए। गुरु जी ने बावन (५२) कलियों वाला एक बड़ा चोला पहन लिया। हर एक राजा ने एक-एक कली पकड़ कर कैद से रिहाई प्राप्त की।

बादशाह जहांगीर ने सिक्ख-मनों को शांत करने के लिए दीवान चंदू की जायदाद जब्त करके उसको गुरु जी के हवाले कर दिया। सिक्ख संगत ने चंदू को उसके किए की सजा दी। इस प्रकार बादशाह जहांगीर ने गुरु जी के साथ स्वस्थ सम्बंध स्थापित कर लिए।

१६२७ ई में बादशाह जहांगीर की मौत हो गई और दिल्ली के तख्त पर उसका पुत्र शाहजहां बैठा। तवस्वी, ईर्ष्यावादी और गुरु-घर के दोषियों ने शाहजहां के पास श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के खिलाफ रिपोर्ट भेजी। इस कारण मुगल सलतनत के सम्बंध सिक्ख समुदाय के साथ बिगड़ने शुरू हो गए। उसका शिखर गुरु जी के साथ चार लड़ाइयों के रूप में सामने आया। इन लड़ाइयों में गुरु जी ने उस समय की मुगल सलतनत को जबरदस्त पराजय देकर अपनी जत्थेबंदक ताकत का बाखूबी प्रकटावा किया।

पहली लड़ाई श्री अमृतसर में हुई। गुरु जी के जांबाज सिक्खों ने मुगल फौजों को भारी हार दी। मुगल फौज का कमांडर मुखलिस खां लड़ाई में मारा गया। मुगल हकूमत के साथ सिक्खों की यह पहली लड़ाई थी। सिक्खों के हौसले बुलंद थे। दूसरी लड़ाई श्री हरिगोबिंदपुर के स्थान पर हुई। गुरु जी ने बहुत थोड़े-से सिंघों के साथ हजारों की गिनती में मुगल फौजों का मुकाबला किया। इस लड़ाई में जलंधर का फौजदार मारा गया। फौजदार को मरा हुआ देखकर मुगल फौज भाग गई।

तीसरी लड़ाई मालवे में लहरे के स्थान पर हुई। इस लड़ाई का मुख्य कारण करोड़ी नामक सिक्ख श्रद्धालु से दो घोड़े गुलबाग और दिलबाग, जो वह काबुल से गुरु जी को भेंट करने के लिए ला रहा था, रास्ते में लाहौर के सूबेदार कासम बेग द्वारा बादशाह को भेंट करने के लिए जबरदस्ती छीनकर शाही अस्तबल में पहुंचाना बना। करोड़ी रोता-बिलखता गुरु जी के पास मालवा आया। गुरु जी ने घोड़े वापिस लाने के लिए बिधीचंद की ड्यूटी लगाई। बिधीचंद ने अपनी चतुराई और बहादुरी के साथ दोनों घोड़े शाही अस्तबल में से निकाल कर गुरु जी को पेश कर दिए। भाई बिधीचंद की ओर से घोड़े ले जाने से कासम बेग के तन-मन में आग लग गई। उसने उसी समय बादशाह से स्वीकृति लेकर मिर्जा करम बेग खां सेनानी और लला बेग खां को बाईस हजार फौज देकर गुरु जी को पकड़ने का हुक्म दिया।

गुरु जी ने भी तैयारी का नगारा बजा दिया। नथाणे और महिराज के नजदीक लहरे का स्थान पानी के तालाब के किनारे, जहां चारों तरफ रेत के टीले थे, गुरु जी ने रण-भूमि के लिए पसंद करके वहां डेरा लगा लिया। ज्यों-ज्यों युद्ध की तैयारी की खबर मालवे के

सिक्खों को हुई, वे दूर-पास से शस्त्र-घोड़े लेकर हाजिर हुए। इस युद्ध में सिक्खों ने जान पर खेलकर लड़ाई लड़ी। शाही सेना के दोनों सिपहसालार मारे गये और फौज में भगदड़ मच गई। इस तरह पंजाब के बहादुर जवानों ने अपने जरनैल श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की अगुआई में शाही सेना को हरा दिया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की समय की हकूमत के साथ चौथी और अंतिम लड़ाई १६३४ ई में करतारपुर में हुई। इस युद्ध में गुरु जी ने नमक-हराम पैंदे खां का अहंकार तोड़कर उसको अपनी तलवार से झटक दिया। उसके बाद मुगल सेना भारी नुकसान करवाकर मैदान से भाग गई।

इन युद्धों में जीत प्राप्त करके गुरु जी ने सोई हुई कौम को जगा दिया, कौम के हौंसले बुलंद कर दिए, क्योंकि मुगल सलतनत के दौर में जनसाधारण को पूरी तरह कुचल दिया जाता था।

गुरु जी ने जनसाधारण को हथियारबंद किया और शाही सेना को चारों लड़ाइयों में हराकर एक मिसाल कायम की।

जंग-युद्ध में निवृत्त होकर गुरु जी ने सिक्खी का प्रचार करने के लिए कीरतपुर साहिब में निवास किया। यहां ३ मार्च, १६४४ ई को गुरु जी ज्योति-जोत समा गए।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के व्यक्तित्व और स्वरूप के विषय में इतिहासकारों ने बहुत लिखा है, जिसके बारे में इस प्रकार कहा जा सकता है कि गुरु जी बहुत खूबसूरत, लंबे कद, चौड़ी छाती, लंबी बांहों और हिरन जैसे नेत्रों वाले थे। आप सदा मीठा बोलने वाले थे। आप मित्र और दुश्मन की झट पहचान कर लेते थे। एक बार आपकी शरण में आने वाला स्वयं को पूर्णतः सुरक्षित महसूस करता था।इसी लिए सिक्ख तथा दूसरे मतों वाले लोग भी आप पर सदा कुर्बान होने के लिए तैयार रहते थे। आप युद्ध-नीति में माहिर, नीतिवान, दूरंदेश, बहादुर योद्धा और शूरवीर थे। जहां आप इन गुणों के धारणी थे वहीं आप अकाल सेवी और विद्वानों के कद्रदान भी थे। फारसी का इतिहासकार व "दबिस्ताने-मजाहिब" का लेखक मुहसिन फानी आपका धर्म-मित्र था। आपने उस वक्त लोक-शक्ति पैदा करके मुगल सलतनत को बहुत बड़े झटके दिए। ४९ वर्षों से भी कम समय की आयु में ही आपने बहुत बड़े कारनामे किए।

गुर सिखी गुरसिख सुणि अंदरि सिआणा बाहरि भोला।
सबदि सुरति सावधान होइ विणु गुर सबदि न सुणई बोला।
सतिगुर दरसनु देखणा साधसंगति विणु अंन्हा खोला।
वाहगुरू गुरु सबदु लै पिरम पिआला चुपि चबोला।
पैरी पै पा खाक होइ चरणि धोइ चरणोदक झोला।
चरण कवल चितु भवरु करि भवजल अंदरि रहै निरोला।
जीवणि मुकति सचावा चोला ॥ (वार ४:१७)

अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी

*-डॉ. अमृत कौर**

श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के कारण देश में चारों ओर हाहाकार मच गई। सम्पूर्ण देश में मुगल साम्राज्य के जुल्म और अत्याचार के विरुद्ध रोष और जोश पैदा हो गया। गुरु जी की शहीदी के समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की आयु केवल ग्यारह वर्ष की थी। समय की हकूमत से टक्कर लेने के लिए श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को भाई गुरदास जी और बाबा बुड्ढा जी द्वारा तलवार चलाने, तीरंदाजी, घुड़सवारी, नेजाबाजी आदि की शिक्षा प्रदान करवानी शुरू कर दी थी। गुरु जी की शहीदी एक ऐसा मील-पत्थर सिद्ध हुई जिसने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के मन में एक संकल्प पैदा किया कि प्रत्येक सिक्ख संत-सिपाही बनेगा, जिसके एक हाथ में माला और दूसरे हाथ में तलवार होगी। उन्होंने अपनी कमर में दो तलवारें बांधकर अपने पिता का स्थान ग्रहण किया। ये तलवारें मीरी और पीरी की थीं जो सांसारिक और आध्यात्मिक शक्तियों की प्रतीक थीं। दरबारी गवैया भाई अब्दुल्ला के अनुसार:

दो तलवारां बद्धीआं, इक मीरी दी इक पीरी दी।
इक अजमत दी इक राज दी, इक राखी करे वजीरी दी।

शासकीय जुल्म और अत्याचार के विरुद्ध जनतक आंदोलन की इन जलती चिंगारियों को सैनिक स्वरूप द्वारा संगठित करके गुरु जी ने इतिहास को नया मोड़ दिया। सर आरचर के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने समझ लिया था कि शस्त्र धारण किए बिना मानवता को बचाना कठिन है. इसलिए वे संत-सिपाही बने। उन्होंने दो तलवारें धारण कीं। *"दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।"* कहलाए। गुरदेव के व्यक्तित्व में भक्ति और शक्ति, माला और कृपाण, मीरी और पीरी, राज और फकीरी, योगी और योद्धा, संत और सिपाही, तेग और देग का अद्भुत संगम था। अपने इस महान व्यक्तित्व के कारण गुरु जी सिक्ख कौम को शैक्षणिक, सैनिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक क्षेत्रों में मार्गदर्शन देने के समर्थ हुए और सिक्ख कौम को इतना शक्तिशाली व निडर बना दिया कि आने वाले तूफान उसका कुछ न बिगाड़ सकें।

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा चलाई शैक्षणिक लहर को सैनिक आधार देकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने शिक्षा-प्रणाली को एक नवीन मोड़ दिया। वे अपना और अपने साथियों का अधिकांश समय गतका खेलने, कुश्ती लड़ने, घुड़सवारी, शिकार करने, तीर और तलवार चलाने में व्यतीत करते। उन्होंने सिक्खों को आदेश दिया, "अच्छे घोड़े और शस्त्र भेंट चढ़ाओ।" श्री हरिमंदर साहिब में कीर्तन-कथा सुनने वाली संगत के साथ-साथ अब श्री अकाल तख्त साहिब के सामने के नौजवान जुड़ने लगे जो घुड़सवारी व तलवार चलाना सीखते और

**१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०४ (पंजाब), मो. : ९८१५१-०९९५७*

तीरंदाजी का अभ्यास करते ताकि मजबूत और ताकतवर शरीरों का सृजन हो सके। इन अभ्यासों में गुरु जी स्वयं भी भाग लेते। तीरंदाज इतने जबरदस्त थे कि कीरतपुर में (गुरुद्वारा तीर साहिब से) तीर चलाया तो मीलों दूर (गुरुद्वारा पातालपुरी में) जा पहुंचा। भाई गुरदास जी के अनुसार, *". . .नठा फिरै न डरै डराइआ।. . . कुते रखि सिकारु खिलाइआ।"* (वार २६:२४)

संत-सिपाही के संकल्प को रूपमान करने के लिए गुरु जी हथियारों की सिखलाई और अभ्यासी मुकाबलों की लड़ाइयों द्वारा सिक्खों को सैनिक प्रशिक्षण देते। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने ५२ चुने हुए वीर सैनिक अपने पास रखे हुए थे जो सिक्खों को शस्त्र-विद्या सिखाते थे। गुरु जी के पास ८०० घोड़ों, ३०० घुड़सवारों, ६० तोपचियों का दसता था। सैनिक सिखलाई के इन क्रियात्मक ढंगों द्वारा उन्होंने हारे हुए लोगों की सुप्त शक्तियों को जागृत कर उन्हें मृत्यु के भय से रहित निडर योद्धा, मजबूत दिलों वाले सिपाही बना दिया व आत्म-सम्मान के लिए मर-मिटने वालों ने एक नए इतिहास का सृजन हुआ। गुरु जी ने सिक्ख लहर को वक्त के अनुरूप क्रांतिकारी बना कर उसे पंजाब को विरासत के रूप में दिया।

अपनी जीवन-शैली द्वारा गुरु जी ने कुछ ऐसे मूल्यों का निर्माण किया जो सिक्ख धर्म की संस्कृति और सभ्याचार का स्थाई अंग बन गए। उन्होंने ढाढी परंपरा का विकास किया। सिक्खों में नवीन जोश और उत्साह का संचार करने के लिए गुरु जी ने गवैयों को शूरवीरों की वारें गायन करने के लिए प्रेरित किया। उनके दरबार में प्रसिद्ध रागी बाबक, जस दरिआउ, सोधा दितु, अबदुल्ला आदि अपने मनोहर वार-गायन द्वारा संगत में वीर रस का संचार करते। इस समय सिक्ख दरबार में कीर्तन के साथ जंगी वारों का गायन आरंभ हुआ। गुरु जी द्वारा प्रारंभ की यह परंपरा वर्तमान समय तक चली आ रही है। ढाढियों ने सिक्ख इतिहास की वारों द्वारा देश और कौम पर आई मुसीबत के समय जंगी भावना को कायम रखा है। कितने ही प्रसिद्ध ढाढी इस परंपरा की देन हैं।

धर्म और राजनीति के सुमेल के लिए ९ जुलाई, १६०९ ई में बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी की सहायता से श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण हुआ। डॉ. त्रिलोचन सिंघ के अनुसार श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण मुगल बादशाह की शक्ति को एक स्पष्ट चुनौती थी। इसके निर्माण द्वारा सिक्खों की राजनैतिक पहचान कायम हो गई। मुहम्मद लतीफ के अनुसार, "अब 'गुरु' केवल धार्मिक नेता न रहकर राज्य करने वाले सत्ताधारी बादशाह बन गए।" टायनिबी के अनुसार "गुरु साहिबान ने एक विकसित कौम को एक आरंभिक कौम से एक आरंभिक सिक्ख स्टेट में बदल दिया।" डॉ. हरीराम गुप्ता के अनुसार "सिक्ख कौम ने मुगल स्टेट के अंदर अपनी स्टेट कामय करके अपनी राजनैतिक उन्नति का मार्ग तैयार किया। यहां यह स्पष्ट करना अनिवार्य है कि ये परिवर्तन वक्त की चुनौतियों के साथ निपटने हेतु लाये गए थे। जहां श्री हरिमंदर साहिब सिक्खों का धार्मिक केंद्र था वहां श्री अकाल तख्त साहिब राजनैतिक गतिविधिओं का केंद्र बन गया। इसके द्वारा सिक्खों की राजनैतिक पहचान कायम हो गई। गुरु जी तख्त पर बैठकर दरबार लगाते, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक समस्याओं का समाधान करते। आज भी सिक्ख कौम के सम्पूर्ण गुरमते और हुकमनामे श्री

अकाल तख्त साहिब से जारी होते हैं। गुरु जी ने राजसी चिन्ह तलवार, बाज आदि धारण किये, शाही ठाठ-बाठ से रहना शुरू किया। इस प्रकार सिक्खों की वेश-भूषा में परिवर्तन आया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब पहले गुरु थे जिन्होंने कलगी लगाई। अपने सफेद बाज को प्राप्त करने के लिए उन्होंने मुगलों से लड़ाई की, राजकीय चिन्ह धारण किए, दसतार सजाई, अंगरक्षक रखे, सच्चे पातशाह की उपाधि धारण की।

सूरमगति सिक्खी का प्रतीक बनकर उभरी। सिक्ख की जीवन-शैली में घुड़सवारी और शारीरिक कसरतें स्वाभाविक रूप से शामिल हो गईं। गुरु जी का पहरावा, शिकार खेलने की रुचि, शहजादों वाला ठाठ-बाठ पहले से भिन्न प्रकार का था। सिक्खों को आदेश दिया कि धन की अपेक्षा शस्त्र और घोड़े भेट करो, रोज व्यायाम करो, कुश्तियां लड़ो, गतका खेलो, घुड़सवारी करो, शिकार खेलने के लिए घने जंगलों में जाओ, अत्याचार के विरुद्ध डटे रहो तथा सिर उठाकर गर्व से जीना सीखो। स्वयं भी शिकारी कुत्तों, पालतू चीतों, बाजों के साथ शिकार खेलना शुरू किया। शेरों का शिकार करना, उनसे युद्ध करना उनका मनपसंद शौक था।

श्री अकाल तख्त साहिब के सामने मैदान में शूरवीर अपने जौहर दिखाते, घुड़सवारी, नेजाबाजी और जंगी दांव-पेच के अभ्यास होते। गुरु जी के शीश पर कलगी, दायें-बायें दो तलवारें, मुख पर तेज देखकर नौजवानों को तात्कालिक अन्याय के विरुद्ध क्रियाशील होने की प्रेरणा मिलती। विशेष संगीत मंडली कायम की गई जो रात्रि के समय मशालों की रोशनी में श्री हरिमंदर साहिब की परिक्रमा करती हुई जोशीले शबद गाकर सिक्खों को स्वाभिमान और देश की शान के बदले मर-मिटने की प्रेरणा देती।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने समाज का रूप बदलने के लिए, उन्हें सैनिक रूप से शिक्षित करने के लिए, जन-शक्ति और रण-शक्ति दोनों को जागृत करने के लिए प्रचारक जत्थे नियुक्त किए। भाई जेठा जी, बाबा गुरदित्ता जी, भाई अलमस्त जी, भाई फूला जी, भाई गोंदा जी, भाई बालू हसना जी कुछ प्रमुख प्रचारक थे। बंगाल, उड़ीसा में भाई बिधीचंद, काबुल, अफगानिस्तान में भाई तिलका जी, कशमीर में भाई कटूशाह जी का नाम सम्मान से लिया जाता है। पांच-पांच की मंडलियां बनाकर सिक्ख प्रचार के लिए निकलते। इनके एक हाथ में मशाल होती दूसरे में डंडा। इनके पीछे संगत कीर्तन करती जाती। ये लोगों को समझाते कि डरो नहीं, गुरु अंग-संग है। धर्म की रक्षा के लिए तैयार रहो। गुरु जी को शस्त्र, घोड़े, जवानियां भेंट करो। प्रत्येक गांव में एक जत्था तैयार होता और प्रचार के लिए दूसरे गांव चला जाता। इस प्रकार सैकड़ों जत्थे तैयार हो गए, जो रात-दिन, गांव-गांव घूमकर जन-शक्ति जागृत करते। हमारी दैनिक अरदास "चौंकीआं झंडे जुगो जुग अटल" इस तथ्य पर आधारित है। इन जत्थों, बैठकों को चौकियां कहा जाता था।

गुरु जी की बढ़ती सैनिक-शक्ति, सिक्खों का संगठन हकूमत के लिए खतरे की घंटी थी। अपनी शक्ति और स्वाभिमान की रक्षा के लिए गुरु जी ने राज्य-सत्ता के विरुद्ध चार लड़ाइयां लड़ीं और इन चारों में उन्हें विजय प्राप्त हुई। इन युद्धों में विजय ने सिक्खों की मानसिकता को बदल दिया। अपने आत्म-सम्मान और स्वतंत्रता को कायम रखने के लिए सिर हथेली पर रखकर लड़ना सिखाया। उनमें आत्म-विश्वास, आत्मनिर्भरता को जागृत कर चढ़दी

कला में जीना सिखाया। कौम में नवीन प्राणों का संचार हुआ। आत्म-सम्मान के लिए मर-मिटने वालों के नए इतिहास का सृजन हुआ। जालिम, अत्याचारी राज्य सत्ता के चंगुल से धर्म और देश को स्वतंत्र कराने का आंदोलन शुरू हुआ।

"गुर बिलास पा: ६" का लेखक लिखता है कि जिस समय गुरु जी बाण चलाने के लिए कमान कसते थे उस समय वैरी कांप जाते थे। उनके घोड़ों की हिनहिनाहट सुनकर वैरी घबराने लगते थे। मैकालिफ के अनुसार वे चार दिशाओं में नहीं आठ दिशाओं में देखते थे।

गुरु जी युद्धों का संचालन बहुत अच्छे ढंग से करते थे। फौज को छोटी-छोटी टुकड़ियों में बांटकर उन्होंने विभिन्न कार्यों के लिए जत्थेदार नियुक्त किए हुए थे जिनके जिम्मे अलग-अलग काम होते थे। भाई लंगाह का काम था आगे बढ़ कर युद्ध करना, भाई बिधीचंद का काम था गुरिल्ला युद्ध करना। इन युद्धों ने सिक्खों को क्रियात्मक रूप से सैनिक-शिक्षा प्रदान की। मैकालिफ के अनुसार, गुरु जी के युद्ध संबंधी नैतिक आचार की दाद देनी बनती है। उनका आदेश था कि गिरे हुए, शस्त्रहीन, बालक, बूढ़े, रोगी, शरणार्थी और स्त्री पर वार नहीं करना।

सिक्ख धर्म में स्त्री को विशेष सम्मान प्राप्त है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने औरत को पुरुष का ईमान कहा है। गुरु जी के सपुत्र श्री (गुरु) तेग बहादर जी के विवाह के शुभ अवसर पर माता गुजरी जी के पिता श्री लालचंद कहने लगे, "गुरु जी, हम तो कुछ भी नहीं दे पाए।" उस समय गुरु जी ने जो उत्तर दिया वह आज भी हमारा पथ-प्रदर्शन करता है:

लाल चंद तुम दीने सकल बिसाला।
जिन तटुजा अरपन कीन।
तिन पाछै किआ रख लीन।

जिसने कन्या दे दी उसने सब कुछ दे दिया। गुरु जी की यह शिक्षा आज भी दहेज-प्रथा को रोकने के लिए विशेष रूप से सहायक सिद्ध हो सकती है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के मन में स्त्री के प्रति विशेष प्रेम और सम्मान था। जब उनका बेटा बाबा गुरदित्ता हुआ तो माता गंगा जी ने कहा, "जोड़ी रले।" इसका उत्तर जो गुरु जी ने दिया वह बेमिसाल है। उन्होंने कहा, "मां यदि वरदान ही देना है तो यह वरदान दो : *शीलखान कंनिआ इक होवे। नही तां मां ग्रिहसथ विगोवे।" (गुरबिलास पा: छेवीं, अध्याय अठवां)* "मां यदि वरदान ही देना है तो यह वरदान दो कि मेरे घर शीलवंती, गुणवंती कन्या का जन्म हो। कन्या के बिना घर की शोभा नहीं।" यह कथन आज के युग में हमारा पथ-प्रदर्शन कर सकता है।

कीरतपुर के मंजी साहिब गुरुद्वारे में एक हस्तलिखित पोथी है जिसमें अलग-अलग बाणियां लिखी हुई हैं। इस पोथी में ५५१ पन्ने हैं और यह काली स्याही में कलम से लिखी हुई है। कहा जाता है कि यह पोथी गुरु जी ने अपनी बेटी वीरो को गुरबाणी पढ़ाने के लिए लिखवाई थी। इससे पता चलता है कि स्त्री-शिक्षा का भी गुरु जी ने प्रयास किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का सम्पूर्ण समय सिक्खों को सैनिक रूप से संगठित करने में व्यतीत हुआ। उनके दरबार में नियमित रूप से कीर्तन होता है। गुरबाणी के प्रचार के लिए भाई बिधीचंद को सैंचियां तैयार कराने के लिए कहा ताकि दूर-दूर तक प्रचारकों को भेजी जा सकें। गुरु-इतिहास में लिखा मिलता है :

तद छिन कागद लिए मंगाए।

रच सैंचीआं मन महि सुखि पाए।

(गुर बिलास पा: छेवीं, पृष्ठ ५६१)

गुरु जी कुदरत में विश्वास रखते थे। उनकी फौज में एक बहुत बड़ी गिनती मुस्लिम पठानों की थी। उन्होंने पैंदे खां का पुत्रवत् पालन किया और मरने पर मुस्लिम रीति से दफनाया। साईं मियां मीर जी को गुरु जी अल्लाह का नूर कहते थे। भाई कटूशाह मुसलमान थे पर उन्होंने कशमीर में सिक्खी का खूब प्रचार किया। श्री हरिगोबिंदपुर में मुसलमानों के लिए मसजिद बनाई : *"मसीत तिनै सुंदर रची देख तुरक हित धार"*। कीरतपुर में भाई बुड्ढण शाह की याद में समाधि बनाई और वचन किया, "साईं जी तुम्हारा घर हमारा घर सांझा है।" एक पीड़ित मुस्लिम लड़की बीबी कौलां को सुरक्षा प्रदान की और उसकी याद में 'कौलसर' सरोवर बना कर उसे सदा के लिए अमर कर दिया। उनकी मातृत्व-भावना से प्रभावित हो अनेक मुसलमान सिक्ख सज गए।

बाबा बुड्ढा जी का यह वचन कि माता जी, आपके घर में ऐसा परोपकारी *"दलिभंजन गुरु सूरमा"* होगा, को श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सच कर दिखाया। श्री इंदू भूषण बैनर्जी उनके बारे में लिखते हैं कि गुरु जी सबको हृदय से प्यार करते थे। लतीफ ने उनके परलोक गमन को 'राष्ट्रीय चोट' कहा है। उन्होंने कठिन समय में सिक्खों को डगमगाने नहीं दिया जबकि लगता था कि उनका अस्तित्व मिट जाएगा। डंकन ग्रीनलेज के अनुसार, उन्होंने राजसी अत्याचार, अन्याय और जुल्म के द्वारा सताई निर्बल, कमजोर जनता को आजादी के साथ जीने की जाच सिखाई। उन्होंने सिक्खी का भवन इतना मजबूत और सबल बना दिया कि आने वाले समय के तूफान और आंधियां भी उनका कुछ न बिगाड़ सकीं।

कविता

नव वर्ष की शुभकामना

आधि-व्याधि से मुक्त हो सबका यह नव वर्ष।
आनंदित परिवार हो व्याप्त चतुर्दिक हर्ष!
स्वस्थ-सृजनरत् आपका जीवन हो शतवर्ष।
चूमें पद उपलब्धियां पाएं नव उत्कर्ष!
साहचर्य में आपके सब पाएं आलोक।
मुदित रहें, प्रभुदित करें, हरें जगत का शोक!
यही विनय है सभी पर, कृपा करें जगदीश।
सबको मिलता रहे सदा, गुरु-साहिबों का आशीष!
स्वास्थ्य-सुख-समृद्धि से, पूर्ण रहे नव वर्ष।
खुलें सृजन के द्वार, हो उपलब्धियों से हर्ष!
नव वर्ष की शुभकामना, स्वीकारें श्रीमान।
सत्कर्मों से जगत में, पाएं यश-सम्मान!
भू पर नित नवसृजन के, चित्र उकेरे भानु।
स्नेह-सलिल बरसे, बुझे हिंसा-द्वेष कृशानु!
मिटे तमिस्रा-मिमिर अब, हो सर्वत्र सुराज!
बढ़े प्रगति-पथ पर, देश, कौम, समाज।
शांति एकता-मित्रता, की हो व्याप्त सुवास!
हथियारों की होड़ का, जगत न झेले त्रास।
दीपमालिका चतुर्दिक, फैलाए आलोक।
सपरिवार प्रभु आपको, रखें स्वस्थ गतशोक!
भ्रातृभाव भरें सब में, घृणा, वैर गवाएं।
सभी के दुख को दूर कर, सुख-शांति बरतायें!
गुरु नानक साहिब का जान लें, समता का संदेश।
भेदभाव सब मिटें, हो सुख-समृद्धिमय देश!

-डॉ. दादूराम शर्मा, सेवानिवृत्त प्राध्यापक, महाराजा बाग, भैरोगंज, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१

सतिगुरु पूरा साहु है . . .

*–डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ**

भारत में जिस तरह तेजी से सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिस्थितियां बदल रही थीं और धर्मांध शक्तियां अपना वर्चस्व स्थापित करने को बेचैन थीं, पांचवें सतिगुरु अरजन साहिब की शहादत उसी का परिणाम बनकर सामने आयी। एक परम आध्यात्मिक महापुरुष की, समय की राज-सत्ता के हाथों इतनी निर्दयी और शर्मनाक नियति लिखी जा सकती है इसका शायद किसी को भी आभास नहीं रहा होगा। सच के मार्ग पर ले जाकर लोगों के हृदयों को परमात्मा की विशालता से जोड़ने वाले एक निर्विकार और निरवैर संत से हकूमत करने वाले इस कद्र भयभीत हो सकते हैं कि उसकी सांसों की लड़ी को ही तोड़ देने का फैसला ले बैठें तो निश्चय ही उन्हें लगा कि उस संत की शक्ति, उसका प्रभाव हकूमत से भी बड़ा है। वास्तविकता भी यही थी। गुरु साहिब परमात्मा का ही रूप थे और परमात्मा से अधिक शक्ति-सम्पन्न और कौन हो सकता था! श्री गुरु अरजन साहिब ने परिस्थितियों का आंकलन करते हुए ही अपने उत्तराधिकारी को यथोचित शिक्षा-दीक्षा दिलवायी जिसमें बाबा बुड्ढा जी ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। बाल श्री (गुरु) हरिगोबिंद जी को वार करने वाले और वार को बचाने वाले शस्त्रों, घुड़सवारी, तैराकी, रसायन विज्ञान, नक्षत्र विज्ञान, औषधि शास्त्र, कृषि की शिक्षा के साथ ही शासन प्रबंधन का भी ज्ञान दिया गया। उन्होंने गुरमति का विस्तृत अध्ययन किया। बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बारे में पहले ही भविष्यवाणी कर दी थी कि वे सांसारिक और आध्यात्मिक दोनों ही क्षेत्रों के शासक होंगे और दो तलवारें धारण करेंगे। गुरु अरजन साहिब की अनूठी शहादत के बाद जब नौजवान श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब गुरगद्दी पर आसीन हुए तो उन्होंने ऐसा स्वरूप धारण किया जो परिस्थितियों को चुनौती देने वाला, सच की सत्ता को सर्वोपरि साबित करने वाला और अन्याय से निर्भय करने वाला था। समय की मांग थी कि लोग परमात्मा के निरभउ और निरवैर रूप के दर्शन करके आश्वस्त हों और परमात्मा पर अपनी आस्था को टिकाये रख सकें। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी और पीरी की दो कृपाणें धारण कीं और सिर पर कलगी वाली दसतार सजाई। उन्होंने अपने स्वरूप के माध्यम से संसार को एक संदेश दिया कि सत्ता और सर्वोच्चता परमात्मा की ही है। परमात्मा का कोई विकल्प नहीं, उसके आस-पास भी नहीं और शेष सभी उसके अधीन हैं। उन्होंने अपने स्वरूप से '**ੴ**' के एकतत्व को प्रकट किया। उन्होंने सिद्ध भी किया कि जो एक है, वह पूरी तरह समर्थ है और अपनी सत्ता को स्थापित करने में पूरी तरह सक्षम भी है, तभी तो वह परिपूर्ण है और पूरे ब्रह्मांड में उसका ही अधिपत्य है। सतिगुरु का स्वरूप ही ऐसा है जिसका वर्णन भाई गुरदास जी ने निम्न प्रकार किया :

*ई-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो : ९४१५९६०५३३

सतिगुरु पूरा साहु है त्रिभवण जगु तिस दा वणजारा।
रतन पदारथ बेसुमार भाउ भगति लख भरे भंडारा।
पारिजात लख बाग विचि कामधेणु दे वग हजारा।
लखमीआं लख गोलीआं पारस दे परबतु अपारा।
लख अंम्रित लख इंद्र लै हुइ सकै छिड़कनि दरबारा।
सूरज चंद चराग लख रिधि सिधि निधि बोहल अंबारा।
सभे वंद वंडि दितीओनु भाउ भगति करि सचु पिआरा।
भगति वछलु सतिगुरु निरंकारा ॥ (वार २६:२२)

गुरु-शबद के महान विद्वान भाई गुरदास जी से अधिक प्रमाणिक और आधिकारिक व्याख्या किसी और की नहीं हो सकती। उन्होंने उपरोक्त वार में सतिगुरु को *"पूरा साहु"* अर्थात् सर्वोच्च और सर्वशक्ति सम्पन्न शासक एवं *"भगति वछलु"* अर्थात् अपने भक्तों का प्रिय कहा। त्रिभुवन अर्थात् जो भी स्थान जहां तक मनुष्य के संज्ञान में है, हर उस स्थान तक गुरु की सत्ता है और सब कुछ जिसकी कल्पना की जा सकती है उसके अधीन है। कोई भी वस्तु, सांसारिक अथवा आध्यात्मिक, उसकी पहुंच से बाहर नहीं है और भरपूर भी है। साथ ही गुरु इतना उदार और दयालु है कि अपने भरे हुए भंडारों को बार-बार बांटता चला जा रहा है। वह अपने भक्तों को प्रसन्न करने वाला, उन्हें संरक्षण प्रदान करने वाला और संतुष्ट करने वाला भी है। मीरी और पीरी की श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की अवधारणा भी इसी "पूरा साहु" और "भगति वछलु" से निकलती हुई प्रतीत होती है। श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत उनके आत्मिक बल की पराकाष्ठा और भयभीत शासक वर्ग की धर्मांधता की अपमानजनक पराजय थी। शासक वर्ग के क्रूरतम अत्याचार भी गुरु साहिब के आत्मबल को तनिक भी डिगा नहीं पाये। इससे अधिक अपमानजनक बात तत्कालीन शासकों के लिये और क्या हो सकती थी? दूसरी ओर गुरु साहिब ने विचलित हुए बिना जिस शांत ढंग से अपनी शहादत को स्वीकार किया और परमात्मा पर अपनी आस्था को बनाये रखा, उससे साबित कर दिखाया कि सच का मार्ग सबसे सशक्त मार्ग है और किसी में भी सामर्थ्य नहीं कि सच की सत्ता को डिगा सके। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का मीरी और पीरी का स्वरूप वास्तव में श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत की महानता को भौतिक रूप से रेखांकित करने का एक सार्थक कदम था। उनके इस कदम के कारण ही सिक्ख मुगल शासन के अत्याचारों से डरकर घर बैठ जाने के स्थान पर अधिक सक्रिय होकर एकजुट होना शुरू हो गये। इससे गुरु-दरबार की शोभा और अधिक बढ़ गई। गुरु की परिपूर्णता और सक्षमता ही गुरु-दरबार की शोभा है :

मेरे ठाकुरु पूरै तखति अडोलु ॥
गुरमुखि पूरा जे करे पाईऐ साचु अतोलु ॥१॥रहाउ॥
प्रभु हरि मंदरु सोहणा तिसु महि माणक लाल ॥
मोती हीरा निरमला कंचन कोट रीसाल ॥
बिनु पउड़ी गड़ि किउ चड़उ गुर हरि धिआन निहाल ॥२॥
गुरु पउड़ी बेड़ी गुरू गुरु तुलहा हरि नाउ ॥
गुरु सरु सागरु बोहिथो गुरु तीरथु दरीआउ ॥
जे तिसु भावै ऊजली सत सरि नावण जाउ ॥३॥
(पन्ना १७)

उपरोक्त वचन के अनुसार भी सतिगुरु परिपूर्ण और अविचल है। जो परिपूर्ण होगा वही

अविचल होगा। विचार को धारण करना ही पर्याप्त नहीं है उसका पोषण करना भी आना चाहिये। सच ज्ञान-मात्र ही नहीं है। ऐसे ज्ञान का कोई अर्थ नहीं जो व्यवहार में न लाया जा सके। ऐसे व्यवहार का भी क्या अर्थ जो दबाव में प्रतिकूल परिस्थितियों में विचलित हो जाये, परिवर्तित हो जाये। परमात्मा का, गुरु का दरबार निधियों से, सद्गुणों से भरपूर है और ऐसे समृद्धिशाली दरबार का स्वामी वही हो सकता है जो सर्वशक्ति-सम्पन्न हो। गुरु ऐसा ही है क्योंकि वही नाव है, वही खेवनहार अर्थात् उद्धार करने वाला है। वह सागर की तरह अपार है और ऐसे तीर्थ की तरह है जहां जाकर मुक्ति प्राप्त हो जाती है। इस तरह गुरु विचार मात्र नहीं है कि उसकी शरण में जाने से कल्याण होगा, वह तो व्यवहार में कल्याण कर भी रहा है। पीरी की तलवार गुरु का ज्ञान है और मीरी की तलवार उस ज्ञान का व्यवहार है। सिक्ख गुरु साहिबान और सिक्ख धर्म दर्शन ने कभी भी आध्यात्मिकता की कपोल-कल्पित और मानसिक विलास की बातें नहीं कीं। उन्होंने धर्म मंडल को यथार्थ के कठोर धरातल पर खड़े होकर देखा और अपने व्यवहार से आदर्श और मानदंड भी स्थापित किये कि सच को सांसारिक जीवन का आधार बनाकर कैसे सहज ही आत्मा को परमात्मा से जोड़ा जा सकता है। यह राह अत्यंत कठिन है किंतु मन अडोल हो तो इस पर चला जा सकता है।

एक बार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पास एक श्रद्धालु दर्शन करने आया और उनसे पांच चुने हुए घोड़े उन्हें उपहार में दिये। चार घोड़े उन्होंने अपने खास सिक्खों में बांट दिये और बचा हुआ घोड़ा अपने अस्तबल में भिजवा दिया। एक दिन गुरु साहिब अपने दरबार में सिक्खों को गुरबाणी का पाठ नित्य शुद्ध हृदय से करने का उपदेश दे रहे थे। उन्होंने कहा कि जो भी जपु जी साहिब का पाठ मन को एकाग्र करके करेगा उसकी सारी इच्छाएं पूरी हो जायेंगी। गोपाल नामक एक सिक्ख ने जपु जी साहिब का पाठ करने की इच्छा व्यक्त की। वह स्वच्छ होकर आया और गुरु साहिब ने उसे अपने सामने बैठकर पाठ करने के लिये आसन दिया। उसकी भावना देखकर गुरु जी अभिभूत हो गये। पाठ समाप्ति पर था तो गुरु जी के मन में विचार आया कि क्यों न इसे ही अपना उत्तराधिकारी बना गुरगद्दी सौंप दें। इस बीच जब वह सिक्ख *"सच खंडि वसै निरंकारु"* की पंक्ति पर पहुंचा तो उसके मन में आया कि "क्या गुरु साहिब प्रसन्न होकर उसे अपना अतिरिक्त पांचवां घोड़ा सौंप देंगे?" गोपाल को गुरगद्दी सौंपने का मन बना चुके गुरु साहिब उसके मनोभाव को भांप गये और गोपाल को बताया कि कैसे उसके मन की चंचलता के कारण वह गुरु-पद पाने से वंचित रह गया। बाद में गुरु साहिब ने गोपाल को घोड़ा तो दे दिया किन्तु अडोल अवस्था के महत्व को सहज ही समझा दिया। श्री गुरु अरजन देव जी ने भी ज्ञान को आचार से जोड़ा था :

अचारवंति साई परधाने ॥
सभ सिंगार बणे तिसु गिआने ॥
सा कुलवंती सा सभराई जो पिरि कै रंगि सवारी जीउ ॥ *(पन्ना ९७)*

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने उसी साहस से शस्त्र धारण किये थे जिस साहस से गुरु अरजन साहिब ने अपनी शहादत को स्वीकार किया था। जिस समर्पण से गुरु अरजन साहिब ने श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण सम्पूर्ण करा कर उसमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब को शोभायमान

किया था। उसी समर्पण से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अकाल तख्त साहिब रचकर पंथ और गुरु विचार को संस्थागत रूप प्रदान किया। गुरु अरजन साहिब ने मानवता का उपकार शहादत देकर किया और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने यह परोपकार शस्त्र धारण करके सच के साथ खड़े होने वालों को भय रहित करने के लिये किया, इसी लिये भाई गुरदास जी ने उन्हें "गुरु सूरमा" का विशेषण प्रदान किया।

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीढ़ी सोढीआ रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।
(वार १:४८)

गुरु सूरमा तभी बनता है जब उसका अंतर पूरी तरह विशुद्ध होता है। अंतर की यह शुद्धता उन गुणों से आती है जो परमात्मा के हैं। जो परमात्मा का ही स्वरूप हो, परमात्मा का ही अवतार हो वही परमात्मा के गुणों और उस आंतरिक शुद्धता को प्राप्त करके उस श्रेष्ठतम पदवी को पा सकता है जिसे भाई गुरदास जी ने 'गुरु सूरमा' का नाम दिया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने योद्धा का स्वरूप भी धारण किया और गुरगद्दी की रूहानी चमक को भी पूर्व की तरह ही बनाये रखा। उनकी दिनचर्या सामान्य तौर पर अद्भुत थी। वे पौ फूटने से पहले ही उठ जाते थे और स्नान आदि करके शस्त्र-वस्त्र धारण करते थे। इसके बाद में श्री हरिमंदर साहिब जाकर जपु जी साहिब और आसा की वार का पाठ सुनते थे, तत्पश्चात सिक्खों को उपदेश देते थे। गुरु साहिब के प्रवचन के बाद अनंदु साहिब का पाठ होता और अरदास की जाती थी। इसके उपरांत लंगर की सेवा होती। बाद में एक घंटा विश्राम करने के बाद गुरु साहिब शिकार को चले जाते। दोपहर के बाद गुरु साहिब श्री अकाल तख्त साहिब पर विराजमान होते और सिक्खों से मिलते, बातचीत करते; गुरबाणी का गायन किया जाता और सायंकाल सो दरु का पाठ होता, अरदास होती। बाद में सब लंगर के लिये चले जाते। लंगर के बाद एक बार फिर दरबार लगता जिसमें शबद-गायन किये जाते। शबद-गायन के पश्चात शूरवीरता के गीत गाये जाते और सिक्खों में वीरता की भावना भरी जाती। सोहिला पाठ करने के बाद समागम सम्पन्न होता और गुरु जी अपनी माता जी का आशीर्वाद लेने के बाद सोने के लिये अपने कक्ष में चले जाते। गुरु साहिब के 'गुरु सूरमा' स्वरूप को समझने के लिये उनकी इस दिनचर्या को जान लेना ही पर्याप्त है। जिस तरह उन्होंने अपने जीवन में अध्यात्म और पराक्रम का समन्वय किया उसी तरह उन्होंने सार्वभौम रूप से मीरी और पीरी को एक साथ आगे बढ़ा कर एक अनूठी सोच को संसार के सामने रखा। उन्होंने सदियों से चली आ रही अध्यात्म की भ्रामक अवधारणा को भी तोड़ा और शक्ति के सदुपयोग के मानक भी बनाये। जिन गुणों की कल्पना की जा सकती है वे सारे ही गुरु साहिब में थे, वे सारे गुण वस्तुतः परमात्मा के हैं :

राजन महि तूं राजा कहीअहि भूमन महि भूमा ॥
ठाकुर महि ठकुराई तेरी कोमन सिरि कोमा ॥१॥
पिता मेरो बडो धनी अगमा ॥
उसतति कवन करीजै करते पेखि रहे बिसमा ॥
(पन्ना ५०७)

मीरी और पीरी की राह पर वे स्वयं चले और अपने सिक्खों को भी ले चलने में सफल

रहे। जहां उन्होंने सारे युद्ध जीते वहीं वे सिक्खों का आत्मिक उत्थान भी कर सके। भाई गुरदास जी ने कहा कि यह मार्ग तो खंडे की धार-सा तीक्षण था जिस पर ले चलना गुरु साहिब के ही वश की बात थी और जो विस्मय पैदा कर देने वाली थी :

हरखहु सोगहु बाहरा हरण भरण समरथु सरंदा।
रस कस रूप न रेखि विचि राग रंग निरलेपु रहंदा।
गोसटि गिआन अगोचरा बुधि बल बचन बिबेक न छंदा।
गुर गोविंदु गोविंदु गुरु हरिगोविंदु सदा विगसंदा।
अचरज नो अचरज मिलै विसमादै विसमाद मिलंदा।
गुरमुखि मारगि चलणा खंडे धार कार निबहंदा।
गुर सिख लै गुर सिखु चलंदा॥ (वार २४:२१)

भाई गुरदास जी ने कहा कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब इस तरह सांसारिकताओं से ऊपर उठे हुए और सर्वगुण-समर्थ हैं जिन्हें सामान्य बुद्धि और कौशल से नहीं समझा जा सकता। उनकी महानता को समझना सामान्य दृष्टि और क्षमता से परे है। वे परमात्मा का रूप हैं और उनका स्वरूप विस्मय पैदा करने वाला है। जीवन का जो मार्ग गुरु साहिब बता रहे हैं उस पर तभी चला जा सकता है जब उनकी कृपा हो। बस वे ही इस कठिन मार्ग पर चलने और परमात्मा से मिलने की शक्ति दे सकते हैं।

आज हमें तर्कों, विवेचनाओं से परे मीरी और पीरी के उस महान और पावन सिद्धांत को अंगीकार करने की, विकारों से ऊपर उठ कर अपने मन की डोर को परमात्मा से जोड़ने और विचार को व्यवहार बनाकर जीवन के मनोरथ को पाने की जरूरत है।

कविता

कदम बढ़ाओ!

तम के बादल घेर रहे, कोई सूरज चमकाओ!
सूरज न चमका पाओ तो, सूर्य-किरण बन जाओ!
सूर्य-किरण भी बनना मुश्किल, तो फिर दीया जलाओ!
अगर दीया भी न जल पाये, चिंगारी सुलगाओ!
सबके दिल हैं बुझे-बुझे, आशा की जोत जलाओ!
जितना तुम चल सकते हो, उतने तो कदम बढ़ाओ!
हर कोई है प्यास से आकुल, सावन को ले आओ!
आशा की बदली बनकर तुम, बरसो, प्यास बुझाओ!
या फिर बनो जल-स्रोत तुम, आशा की नदिया लाओ!
नीरसता की अस्थि बहा, सुख की रसधार बहाओ!
न हो पाये तो आशा की, एक बूंद बन जाओ!
जितना तुम चल सकते हो, उतने तो कदम बढ़ाओ!
काली रात है नागिन-सी, तुम स्वयं सूरज बन जाओ!
दुखों का दावानल घेरे, सुख-मेघ बन जाओ!
कलियुग की लू जड़े थपेड़े, तुम बयार बन जाओ!
दुर्भावों की तपन जलाती, तुम फुहार बन जाओ!
संघर्षों से थकते उनका, जीवट तुम्हीं जगाओ!
भवसागर में डूबें जो, केवट बन पार लगाओ!
यह संभव है डूब रहे को, तुम तिनका बन जाओ!
जितना तुम चल सकते हो, उतने तो कदम बढ़ाओ!

-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४० बजरिया मोतीलाल, बरेली (उ. प्र.)-२४३००३; मो. : ९४११६०७६७२

आशीष की करामात

-श्री संजय बाजपेयी रोहितास*

श्री वाहिगुरु-दर टिकी आस है।
गुरु-महिल गंगा जी उदास है।
चौदह वर्ष ब्याह को हो गये।
आशा में इतने वर्ष खो गये।
सूनी कोख सिसकती ममता।
किसी काम में मन न रमता।
पति श्री गुरु अरजन देव महान,
जिनको दुनिया दे सम्मान।
गंगा जी मन उठा विचार।
गिरेगी कब दुख की दीवार?
गूंजेगी कब शिशु की किलकारी?
कब मैं पूर्ण बनूंगी नारी?
मुझ पर लोग कस रहे ताना।
बांझ को देख मिले न खाना।
मां गंगा श्री गुरु से बोली।
भर दो मेरी खाली झोली।
श्री वाहिगुरु से करो अरदास।
तृप्त हो मेरी ममता-प्यास।
श्री गुरु साहिब जी मुस्कराये।
गंगा जी से कह रहे उपाय।
जिस संग श्री गुरु नानक-आशीष।
अकाल पुरख की जिस पर है बख्शीश।
उसको श्री वाहिगुरु की दात।
पाता वह संतान-सौगात।
प्रभु-आराधन करो निरंतर।
तेरी झोली वे देंगे भर।
जन-सेवा में समय लगाओ।
प्रभु से मन-मुराद तुम पाओ।
गुरु जी से बोले उनके महिल गंगा।
तड़प रही है मेरी ममता।
आप तो प्रभु से अरदास करते।
लोगों की रिक्त झोली भरते।
मेरे लिये भी करो अरदास।
कर दो पूरी मेरी आस।
मेरी सूनी गोद भर जाये।
शिशु किलकारी दे मुस्काये।
गुरु साहिब कहें जवाब।
पूरा होगा तुम्हारा ख्वाब।
अमृतसर से नौ मील दूर।
गांव झबाल बहुत मशहूर।
ब्रह्मज्ञानी की बीड़ है वहां।
गुरु नानक जी की आशीष है जहां।
बाबा बुड्ढा जी उनका है नाम।
सबके बिगड़े संवारें काम।
तुम उनकी शरण में जाओ।
साथ में लंगर लेकर जाओ।
झुका दो चरणों में शीश।
खुश हो वे देंगे आशीष।
बाबा बुड्ढा जी मनभावना।
पूर्ण हो तुम्हारी मनोकामना।
गंगा जी अगले दिवस।
साथ में लंगर स्वादिष्ट सरस।
सब तैयार क्षण भर न देरी।
साथ में सेवादारनियां बहुतेरी।
साथ में गुरु-घर आन-बान-शान।
शानो-शौकत संग किया प्रस्थान।
बीड़ निकट पहुंची सवारी।
गगन-धूल उड़ रही थी भारी।

***C/o** जनाब हुसैनी मियां, स्टेशन रोड, कछौना (बालामऊ), जिला हरदोई (उ. प्र.)-२४११२६; मो ९७२१५२०४५६*

बाबा बुड्ढा जी की निगाह।
धूल उड़ाती है क्यों राह?
किया प्रश्न निज सेवादार से।
"कौन फौज आ रही राह से?"
तब सेवादर ने बात बताई।
"पंचम गुरु की महिल माता गंगा आई।
संग आई सखियों की संगत।
साथ आईं सेवादारनियां बहुत।"
बाबा जी बोले अगले क्षण।
"गुरु-घर में यह कैसी भगदड़?"
माता जी पहुंची बीड़ साहिब।
कर प्रणाम लंगर परोसा जब।
जिसमें नाना भांति के व्यंजन।
सब स्वादिष्ट सरस मन-रंजन।
बाबा बुड्ढा जी ने कहा।
"छत्तीस तरह के व्यंजन यहां।
आदी नहीं हैं हम खाने के।
हम भूखे प्रभु-प्रेम पाने के।
हम प्रभु-सेवक संत-फकीर।
कैसे खाएं मेवा-खीर?"
रहे सदा वाहिगुरु चरण-छाया।
भोजन संगत में बंटवाया।
माता जी लौट आईं उदास।
"कैसे पूर्ण होगी मेरी आस?"
गुरु साहिब ने सुनी दास्तान।
एक-एक बात पर पूरा ध्यान।
बात समझ गुरु साहिब बोले।
"जो दुर्भाग्य की गांठें खोले।
वो संत मनभावना का भूखा।
भक्ति-भावना से मन महका।
प्रभु-श्रद्धा में मिटते-मरते।
वाहिगुरु-सिमरन करते-करते।
चना पीस बने रोटी मिस्सी।
साथ में छाछ-दही की लस्सी।
जपते-जपते 'सत् श्री अकाल'।
खुद मथ कर मक्खन निकाल।
नानक-मुरीद की खुशी का राज।
साथ में ले अचार संग प्याज।
श्री वाहिगुरु नाम जपते-जपते।
धन की शान से छिपते-छिपते।
तुम फिर से जाओ बीड़ साहिब।
बाबा बुड्ढा जी खुश होंगे तब।"
पंचम पातशाह जी जो बोलें।
माता गंगा जी क्यों भूलें?
बात सत्य एकदम सटीक।
गंगा जी करें सब ठीक-ठीक।
वाहिगुरु सिमरन कर तैयार।
मिस्सी रोटी मक्खन अचार।
लस्सी-छाछ के संग-संग प्याज।
गंगा जी मस्तक ममता का ताज।
श्रद्धा ने मन के तार छुये।
बाबा बुड्ढा जी खुश हुये।
आशीर्वाद बना परवाना।
"मनपसंद यह मेरा खाना।"
प्याज हाथ-मुक्के से फोड़ा।
आशीष होंठ पर आया दौड़ा।
"तू मां बने महावीर पुत्र की।
मैंने प्याज की जैसी गति की।
गति दुष्टों की वह करेगा।
सिक्ख संगत में खुशी भरेगा।"
मस्तक जगमग वाहिगुरु-नूर।
गंगा जी हो गईं आत्मविभोर।
मिल गई आशीष मटकी भरी हुई।
माता जी की बाल-ए-उम्मीद हुई।
अगले वर्ष जन्मे श्री हरिगोबिंद।
जिन्हें नमन् करता है हिंद।
महापराक्रम पाठ पढ़ाते।
सब में वाहिगुरु प्रेम बढ़ाते।
बन गये सिक्ख पंथ के छठम पातशाह।
सदा सफल, सब कहते "वाह!"

सच खंडि वसै निरंकारु

*-डॉ मधुबाला**

जब मनुष्य अपने जीवन में किसी मंजिल को प्राप्त करने की प्रबल इच्छा करता है तब उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सोपान भी निश्चित कर लेता है, इसी प्रकार जब मनुष्य परमात्मा की प्राप्ति हेतु मार्ग का चयन करता है तब उस मार्ग को सफलतापूर्वक तय करने के लिए उसे नियम, युक्ति अथवा सिद्धांत-निर्माण की आवश्यकता होती है। जिस प्रकार कार्य-सिद्धि होने के बाद उस कार्य को करते समय सहन किए गए सभी कठिन क्षणों को मनुष्य भूल जाता है उसी प्रकार परमात्मा की प्राप्ति होने पर मनुष्य रास्ते में उपस्थित होने वाली सभी मुसीबतों को भूलकर परमानंद का अनुभव करता है।

'जपु जी' श्री गुरु नानक देव जी की सबसे महत्वपूर्ण बाणी है। इसे सम्पूर्ण गुरबाणी का सार माना जाता है। यही कारण है कि इसे श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आदि में रखा गया है। इसमें उन्होंने मनुष्य की जीवन-यात्रा को पांच पड़ावों में बांटा है जो मानव-जीवन के विभिन्न उद्देश्यों एवं रहस्यों से सम्बंधित हैं। इन्हें पांच खंड, मंजिल के विभिन्न पड़ाव और सीढ़ी के पांच डंडे भी कहा जाता है।

ग्रीन लीज के शब्दों में, "गुरु जी की सहायता से सीढ़ी के पांच डंडों पर चढ़ती आत्मा अपने वास्तविक घर जा पहुंचती है।"

डॉ राधा कृष्णन के अनुसार, "हम उच्च ज्ञान एकदम प्राप्त नहीं कर सकते। यह तरतीबे-यत्न और मन की गहराई का प्रतिफल है। यही तरतीबे-यत्न की पांच-मंजिलें हैं, पांच खंड हैं। विद्या, ज्ञान, धर्म, अध्यात्म ऐसे विषय हैं जिन्हें धीरे-धीरे ही अर्जित किया जाता है।

'जपु जी' में आए पांच खंड इस प्रकर हैं: (१) धरम खंड, (२) गिआन खंड, (३) सरम खंड, (४) करम खंड, (५) सच खंड

धरम खंड : प्रथम खंड 'धरम खंड' के नाम से जाना जाता है। यहां 'धरम' (धर्म) से अभिप्राय 'कर्त्तव्य' से है। इस स्थिति में जिज्ञासु अपने कर्त्तव्यों के प्रति सुचेत होता है। उसे इस बात का ज्ञान होता है कि परमात्मा ने सृष्टि की रचना कर्त्तव्यों की पूर्ति हेतु की है :

राती रुती थिती वार ॥
पवण पाणी अगनी पाताल ॥
तिसु विचि धरती थापि रखी धरम साल ॥
तिसु विचि जीअ जुगति के रंग ॥
तिन के नाम अनेक अनंत ॥
करमी करमी होइ वीचारु ॥
सचा आपि सचा दरबारु ॥
तिथै सोहनि पंच परवाणु ॥
नदरी करमि पवै नीसाणु ॥
कच पकाई ओथै पाइ ॥
नानक गइआ जापै जाइ ॥ *(पन्ना ७)*

अर्थात् रात, दिन, ऋतुएं, तिथियां और वार यह सब समय का विभाजन हैं पवन, पानी और अग्नि तीन तत्व हैं। इन तीन तत्वों के अतिरिक्त पाताल और आकाश के साथ मिलकर (कुल पांच) तत्वों के द्वारा सृष्टि की रचना होती है। धरती को धर्म का स्थान बनाकर परमात्मा ने धारण किया है। उस धरती पर कई रंग एवं कस्मों के जीव हैं जिन्हें अनेक नामों से पुकारा जाता है। उनकी गणना करना संभव नहीं है। जिन जीवों का धरती पर आगमन हुआ है वे सभी अपने-अपने पूर्व-जन्मों के कर्मों के अनुसार कार्य-चक्र में

आई-१०९, गली नं. ५, मजीठीआ इन्कलेव, पटियाला-१४७००५

चलायमान रहते हैं। अच्छे कर्मों के फलस्वरूप ही मनुष्य के मन में परमात्मा को प्राप्त करने की अभिलाषा का उदय होता है। इसी विचार का प्रस्फुटन ही मनुष्य की आत्मिक उन्नति का प्रारंभ है। यही वो कर्त्तव्य है जिसे परमात्मा स्मरण करवाना चाहता है। यही धर्म है जिसे प्रभु मनुष्य को धारण करवाना चाहता है। यही प्रथम मंजिल है, प्रथम खंड है, प्रथम सीढ़ी है जिसका विचार मनुष्य-मन में उत्पन्न होता है।

धरम खंड में कर्मों का फल प्रतिपादित किया गया। अच्छाई और बुराई का लोक-व्यवहार वर्णित है। धरती कर्म-भूमि भी है और धर्मशाला भी। प्रथम खंड में गुरु जी ने कर्त्तव्य की पहचान करने की शिक्षा दी है। मनुष्य को कर्त्तव्य-पालन में मन लगाना चाहिए, क्योंकि परमात्मा के न्याय से बढ़कर कोई दूसरी अदालत नहीं है।

गिआन खंड : इस पड़ाव पर ज्ञान का प्रकाश और आनंद का निवास है। 'गिआन खंड' का वर्णन इस प्रकार है :

धरम खंड का एहो धरमु ॥
गिआन खंड का आखहु करमु ॥
केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस ॥
केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस ॥
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस ॥
केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस ॥
केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस ॥
केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद ॥
केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद ॥
केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु ॥
(पन्ना ७)

'गिआन खंड' में मनुष्य को ज्ञान हो जाता है कि पवन, पाणी और अग्नि कई प्रकार के हैं तथा कृष्ण जी और शिव जी भी अनेकों हैं; कितने ही ब्रह्म सृष्टि की रचना कर रहे हैं। उनके रूप, रंग और भेष भी कितने ही हैं; ऐसी कर्म-भूमि और ध्रुव और उन्हें उपदेश करने वाले नाम भी अनेक हैं। इंद्र, चंद्रमा और सूरज कितने ही हैं तथा मंडल और देश भी कितने ही हैं; कितने ही सिध, बुद्ध और नाथ हैं; कितने ऐसे जीव हैं जिनका वेश-रूप दैवी है, देवता, राक्षस और मुनि भी अनेक हैं। समुद्र और उससे प्रकट होने वाले रत्न भी कितने ही हैं; खाणीआं, जिसमें से सृष्टि उत्पन्न होती है, वे भी अनेक हैं; बाणी भी कई भांति की है, राजा और पातशाह भी अनेक हैं, सूरतें भी अनेक है तथा सेवक भी अनगिणत हैं, कोई अंत नहीं है।

इस खंड में मनुष्य को परमात्मा के अंतहीन विस्तार का ज्ञान होता है। *"पाताला पाताल लख आगासा आगस"* का ज्ञान मनुष्य की बौद्धिक जागरूकता का प्रथम चरण माना जाता है। जब मनुष्य की आत्मिक उन्नति होती है तभी वह 'गिआन खंड' में प्रवेश करता है।

सरम खंड : तीसरा पड़ाव 'सरम खंड' के नाम से जाना जाता है। 'सरम' से भाव है 'श्रम, परिश्रम, मेहनत'। इस खंड में मनुष्य की सूरत घड़ी जाती है, उसको जागृति आ जाती है :

गिआन खंड महि गिआनु परचंडु ॥
तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु ॥
सरम खंड की बाणी रूपु ॥
तिथै घाड़ति घड़ीऐ बहुतु अनूपु ॥
ता कीआ गला कथीआ ना जाहि ॥
जे को कहै पिछै पछुताइ ॥
तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि ॥
तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि ॥ (पन्ना ७)

'गिआन खंड' में पहुंचकर प्राप्त हुआ ज्ञान प्रचंड रूप धारण कर लेता है, क्योंकि ज्ञान प्राप्त करने के बाद उस ज्ञान को जीवन का अंग बनाने की आवश्यकता है, उस पर अमल करने का समय है। जीव सृष्टिकर्त्ता की प्रत्येक वस्तु में परमात्मा की सुंदरता का अनुभव करता है और उसमें लीन होने लगता है। किसी दृश्य को देखकर सुरति परमात्मा में लीन हुई और प्रभु की मस्ती उस पर छा जाती है। इस खंड की बाणी में रूप द्वारा संयोग होता है। साधारण रूप में तो मन के भाव

बोलकर प्रकट किए जाते हैं, परन्तु 'सरम खंड' की बोली रूप है। जब परमात्मा के रूप का दर्शन हो जाता है तब अनेक चेष्टाएं करने पर भी व्यक्ति उस रूप का बखान करने में असमर्थ होता है। उन परिस्थितियों में सुरति और बुद्धि घड़ी जाती है। सहजता का ज्ञान होने से मनुष्य की चेतना में निखार आता है। 'गिआन खंड' में जागृत विस्मादी भाव 'सरम खंड' में सूक्ष्मता के शिखर पर पहुंचता है।

करम खंड : 'करम खंड' में भक्ति के आत्मिक-बल की प्रधानता रहती है। परमात्मा की कृपा से मनुष्य को सृष्टि के कण-कण में परमात्मा का दर्शन होता है। 'करम खंड' के बारे में गुरु जी ने कहा है :

करम खंड की बाणी जोरु ॥
तिथै होरु न कोई होरु ॥
तिथै जोध महाबल सूर ॥
तिन महि रामु रहिआ भरपूर ॥
तिथै सीतो सीता महिमा माहि ॥
ता के रूप न कथने जाहि ॥
ना ओहि मरहि न ठागे जाहि ॥
जिन कै रामु वसै मन माहि ॥
तिथै भगत वसहि के लोअ ॥
करहि अनंदु सचा मनि सोइ ॥ (पन्ना ८)

'सरम खंड' की बाणी रूप थी, परंतु अब रूप दृष्टिमान आकार को पार करके उस निरंकार-प्रभु की शक्ति का आभास होने लगता है। इस पड़ाव तक सभी नहीं पहुंच सकते। वहां मन पर विजय प्राप्त करने वाले, संयमी और आत्मिक बल धारण करने वाले ही पहुंचते हैं। उनका मन अब 'राम' (प्रभु) में रमने लगता है; प्रभु की महिमा रूपी धागे के साथ मानो वह प्रभु मालिक के साथ पिरोया जाता है। अब परमात्मा से वियुक्त होना कठिन हो जाता है। जिनके हृदय में प्रभु का निवास है वे न तो मरते हैं न ठगे जाते हैं। जिस हृदय में प्रभु का प्रकाश हो जाता है वहां अंधकार कैसे रह सकता है? इस पड़ाव तक पहुंचने वाले अनेक लोग हैं जो परमात्मा के स्वरूप का चिंतन करते हुए आनंदित रहते हैं। (उनके मन से अहंकार, ईर्ष्या तथा द्वेष दूर हो जाने से) नैतिक गुणों का विकास होने से मन निर्मल एवं कपट-रहित हो जाता है। वास्तव में 'करम खंड' प्रभु-कृपा का प्रसाद है।

सच खंड : यह अंतिम पड़ाव है जहां परमात्मा स्वयं निवास करते हैं :

सच खंडि वसै निरंकारु ॥
करि करि वेखै नदरि निहाल ॥
तिथै खंड मंडल वरभंड ॥
जे को कथै त अंत न अंत ॥
तिथै लोअ लोअ आकार ॥
जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार ॥
वेखै विगसै करि वीचारु ॥
नानक कथना करड़ा सारु ॥ (पन्ना ८)

यह वो खंड अथवा मंजिल है जहां परमात्मा रहता है। उन खंडों का, मंडलों एवं ब्रह्मंमडों का वर्णन करना संभव नहीं है जो इस अंतिम पड़ाव पर मिलते हैं। यहां परमात्मा के सत्य स्वरूप का साक्षात दर्शन होता है। परमात्मा द्वारा सृष्टि-निर्माण, उसकी संभाल और हुक्म के अंदर चलाने की दशा को जो व्यक्ति देख लेता है वह आनंद को तो प्राप्त करता है, परंतु उसका बयान नहीं कर सकता। परमात्मा से आत्मा के मिलन की अवस्था का वर्णन करना लोहे से भी सख्त है, क्योंकि इसका ज्ञान हमें आंतरिक स्थिति की उच्चता, शक्ति-सम्पन्नता एवं बल द्वारा होता है।

इस प्रकार प्रथम पड़ाव कर्त्तव्य-बोध, द्वितीय पड़ाव ज्ञान-बोध, तृतीय खंड परिश्रम-बोध, चतुर्थ पड़ाव जागृति-बोध एवं पंचम पड़ाव परमात्म-बोध का परिचायक है। यदि मनुष्य इन पांच पड़ावों को जीवन में निष्ठापूर्वक धारण करे तो वह परमात्मा को निश्चय ही प्राप्त कर सकेगा, इसमें किंचित भी संदेह नहीं है।

ब्रहम गिआनी सरब का धनी

*-डॉ. नरेश**

किसी ज्ञान को नहीं दिया जा सकता, केवल शिक्षा या विद्या दी जा सकती है। विद्या ज्ञान तब बनती है, जब स्वानुभूत हो जाती है। किसी के द्वारा भी ब्रह्म (प्रभु) के विषय में कुछ भी बताया जाए, बताने वाला अपना ब्रह्म-विषयक ज्ञान ही क्यों न बता दे लेकिन यह देने वाले का ज्ञान ही रहेगा, लेने वाले का नहीं। लेने वाले का ज्ञान तब बनेगा, जब वह इसका अनुभव स्वयं कर लेगा। गुरु केवल मार्गदर्शन करता है, रास्ता बताता है, रास्ते पर चलने की विधि बताता है लेकिन चलना शिष्य को स्वयं ही होता है। शिष्य जब पूरी निष्ठा के साथ, पूर्ण समर्पण-भाव के साथ, ब्रह्म-मार्ग का पथिक बनता है तो उसका मस्तिष्क उसके मन या विवेक के साथ उलझना छोड़ देता है। तब उसे जो भी अनुभव होता है, भले ही गुरु के द्वारा वर्णित व्यक्तिगत अनुभव ही उसके साथ घटित हुआ हो, वह उसका अपना ज्ञान होता है। स्वानुभव गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान का सत्यापन करता है। तब शिष्य ज्ञानी बनता है। गुरबाणी ब्रह्मज्ञानी को परिभाषित करती है कि:

मनि साचा मुखि साचा सोइ ॥
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥
नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ ॥

(पन्ना २७२)

जिसके मन में केवल सत्य बसता है, जिसकी वाणी सदा सत्य बोलती है, जो ब्रह्म के अतिरिक्त और किसी को नहीं जानता, गुरु साहिब कहते हैं कि वही ब्रह्मज्ञानी है।

सत्य क्या है जो ब्रह्मज्ञानी के हृदय में बसता है? यही आत्मा परमात्मा का अंश है। उसे शरीर प्रदान करके कर्म के बंधन में बांध दिया गया है। जो आत्माएं प्रबुद्ध हैं, वे कर्मबंध नहीं बनाती और शरीर के रहते ही ब्रह्म के साथ अपना तादात्म्य बना लेती हैं, उसके साथ संवाद रचा लेती हैं और प्रलय की प्रतीक्षा करने के स्थान पर नश्वर भौतिक शरीर का परित्याग करते ही ब्रह्म में लीन हो जाती हैं। ध्यान के द्वारा साधक अपनी आत्मा को वायवी से ज्योति रूप में परिवर्तित करता है और छोटी ज्योति (आत्मा) बड़ी ज्योति (परम आत्मा) में जाकर विलीन हो जाती है। इस महामिलन को भक्त कबीर जी ने : "पानी ही ते हिम भया हिम ह्वै गयो बिलाई। जो कुछ था सोई भया अब कछु कहयौ न जाई" कहा है।

कर्मबंध न बनें। इसका एकमात्र उपाय मन को, बाणी को सत्य पर केंद्रित रखना है। इसलिए गुरबाणी ने ब्रह्मज्ञानी की परिभाषा को व्याख्यायित करते हुए उसे सदा निर्लेप, सदा निर्दोष, समदर्शी, धैर्यवान, निर्मलतम, मन:प्रकाश, ऊंचे से ऊंचा, बंधन-मुक्त, ज्ञानभक्षी, नामाधारित, अचिंत, ब्रह्मवेत्ता तथा सरब का धनी कहा है।

ब्रह्मज्ञानी का जीवन कमल के समान होता है जो कीचड़ में उत्पन्न होता है, कीचड़ में से ही अपना भरण-पोषण करता है, लेकिन अपने पुष्प को कीचड़ से ही नहीं, उस जल से भी सर्वथा ऊपर रखता है जिसके तल के कीचड़ में उसकी जड़ें होती हैं। इसी प्रकार ब्रह्मज्ञानी मायावी संसार के कीचड़ में रहते हुए भी, संसार से भरण-पोषण प्राप्त करते हुए भी अपने

(शेष पृष्ठ १०९ पर)

**१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की मानव-जीवन में महानता

-डॉ. राणा बलजिंदर कौर*

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥
गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे ॥ *(पन्ना ९८२)*

गुरु साहिबान ने शबद-गुरू की श्रेष्ठता को स्वीकार करते हुए शबद-गुरू के महत्व को सबसे उत्तम माना है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब ही एक ऐसा धार्मिक ग्रंथ है जिसकी संपादना गुरु-काल में हुई और संपादक थे पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी। इसकी रचना तथा संपादना के समय जात-पात, ऊंच-नीच तथा क्षेत्रीय विभिन्नताओं को महत्वहीन समझा गया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में परमात्मा को निरंकार तथा सर्वव्यापक माना गया है। उसका निवास मानव-हृदय में है जिस कारण उसकी प्राप्ति के लिए बाहरी कर्मकांडों एवं भेषों की आवश्यकता नहीं। इसमें माया में रहते हुए भी निर्लेप रहने का सिद्धांत पेश किया गया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का संदेश भाईचारक सांझ के साथ-साथ विश्वव्यापी भी है। विश्व भाईचारे के सर्वपक्षीय कल्याण के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सरबत्त के भले का पावन संदेश विद्यमान है। गुरबाणी में व्यक्तिगत भले की बात करने की जगह परमात्मा के पास सब जीव-जंतुओं पर कृपा करने, सबकी जरूरतें पूरी करने के साथ-साथ सारी दुनिया की सुख-शांति के लिए अरदास करने की जीवन-जाच समाहित है :

सभे जीअ समालि अपणी मिहर करु ॥
अंनु पाणी मुचु उपाइ दुख दालदु भंनि तरु ॥
अरदासि सुणी दातारि होई सिसटि ठरु ॥
लेवहु कंठि लगाइ अपदा सभ हरु ॥
नानक नामु धिआइ प्रभ का सफलु घरु ॥
(पन्ना १२५१)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब मानवता की भलाई का उत्तम नमूना है। यह मानव-जीवन की सुयोग्य अगुआई करने के योग्य है। यह समूह विश्व को बिना किसी भेदभाव के सांझीवालता का संदेश प्रदान करता है :

सभे साझीवाल सदाइनि तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ ॥ *(पन्ना ९७)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की दार्शनिकता एक ऐसी सम्पूर्ण विचारधारा है जो जात-पात या ऊंच-नीच से मना करती हुई समूह मानवता को एक सामाजिक भाईचारे के रूप में स्थापित करती है। नाम जपने, किरत करने तथा वंड छकने की शिक्षा देती हुई गुरबाणी सत्य पर आधारित है। यह मनुष्य को साफ हृदय और ईमानदारी से सत्य के रास्ते पर चलने की प्रेरणा देती है। झूठे कर्मकांडों एवं सामाजिक त्रुटियों की गुरबाणी में निंदा की गई है :

कोटी हू पीर वरजि रहाए जा मीरु सुणिआ धाइआ ॥
थान मुकाम जले बिज मंदर मुछि मुछि कुइर रुलाइआ ॥
कोई मुगलु न होआ अंधा किनै न परचा लाइआ ॥ *(पन्ना ४१७-१८)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी की आधारशिला पर एक ऐसा इंकलाबी धर्म विकसित हुआ, एक लोक-लहर चली जिसने धार्मिक, सामाजिक,

**प्रवक्ता, गुरु नानक कालेज फॉर गर्ल्स, श्री मुक्तसर साहिब (पंजाब), मो : ९८५५१-००६७९*

आर्थिक तथा राजनैतिक जिंदगी में परिवर्तन ला दिया है। गुरबाणी सांप्रदायिक भेदभाव, ऊंच-नीच तथा स्त्री-पुरुष के बीच अंतर तथा मनुष्य के तनाव को खत्म करने द्वारा स्वस्थ समाज के विकास का आधार बनाती है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने जिंदगी के हर पहलू की परस्पर दरार को दूर करने का यत्न किया तथा मानवी आजादी की आवश्यकता पर जोर दिया। गुरबाणी द्वारा समाज में राजनैतिक इंकलाब भी आया। गुरु साहिबान ने मनुष्य-मात्र की गुलामी को दूर करने की आवश्यकता पर जोर देते हुए पदार्थवाद के चंगुल से बचने की शिक्षा दी है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने समूह मनुष्य-मात्र का एक राष्ट्र के रूप में संकल्प उजागर किया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार जैसे विकारों से बचने की प्रेरणा देती है। संयम से चलते हुए एक ऐसी जीवन-युक्ति के लिए गुरबाणी प्रेरित करती है जहां मन पर पूरी तरह से काबू पाया जा सके :

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥
जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ . . .
बाबा होरु पैनणु खुसी खुआरु ॥
जितु पैधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥
(पन्ना १६)

मानव-कल्याण तभी हो सकता है यदि मनुष्य के मन में संतोष है। इस संदेश को ग्रहण करने की खास जरूरत है, क्योंकि 'संतोष' ही एक ऐसा ढंग है जिसके द्वारा मनुष्य खुद पर नियंत्रण पा सकता है :

बिना संतोख नही कोऊ राजै ॥
सुपन मनोरथ ब्रिथे सभ काजै ॥ (पन्ना २७९)

आज मनुष्य ज्यों-ज्यों विकास की मंजिलों को छूता जा रहा है, उसकी मानसिक परेशानियों में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। आज की दौड़-धूप वाली जिंदगी में सब्र, संतोष, शांति जैसे गुणों की न्यूनता है, सब कुछ होते हुए भी मन अतृप्त है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ऐसे मनुष्य को उत्तम कहा गया है जो अंदर-बाहर से एक है, पवित्र है तथा गुरु-हुक्म में अपना जीवन व्यतीत करता है। जो मनुष्य दूसरों का बुरा सोचते हैं या करते हैं वे परमात्मा को अच्छे नहीं लगते हैं। उसके दर पर तो केवल वही मनुष्य प्रवान हैं जो पाप नहीं करते और अपनी पवित्रता कायम रखते हैं :

सो तनु निरमलु जितु उपजै न पापु ॥
राम रंगि निरमल परतापु ॥
साधसंगि मिटि जात बिकार ॥
सभ ते ऊच एहो उपकार ॥ (पन्ना १९८)

इस तरह पाप रहित मनुष्य ही परमात्मा के नजदीक पहुंचने के योग्य होते हैं। केवल मनुष्य-जन्म ही ऐसा मार्ग है जिसमें प्रभु-भक्ति करके जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त हुआ जा सकता है। गुरबाणी में मानव-देह की नाशवानता को दृढ़ कराते हुए मनुष्य-मात्र को शुभ कार्यों की तरफ प्रेरित किया गया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब एक ऐसा मार्गदर्शक है जिसमें 'शबद-गुरबाणी' के माध्यम से मनुष्य को जहां एक तरफ उच्च सदाचारक गुणों की तरफ प्रेरित किया गया है वहीं दूसरी ओर विश्व-भाईचारे की मजबूती के लिए विचारधारक आधार भी पेश किए हैं। आजादी, समानता, एकता आदि ऐसे गुण हैं जो विश्व-भाईचारे की जरूरत हैं और यही गुण आदर्श समाज की नींव हैं। आज समय की जरूरत है कि समूह विश्व के कल्याण के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संदेश का और भी उच्च स्तर पर प्रचार तथा प्रसार किया जाए।

गुरबाणी गावह भाई

*-श्री धीरज श्रीवास्तव**

धर्म का वास्तविक अर्थ या सीधे-सादे शब्दों में धर्म की परिभाषा अच्छे और बुरे में भेद करना है। धर्म के ज्ञान के लिये गुरु का होना अति आवश्यक है, जैसा कि 'गु' शब्द का अर्थ है 'अंधेरा' और 'रु' का अर्थ है 'मिटाने वाला'। ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाला ही वास्तविक गुरु है अर्थात् श्री गुरु ग्रंथ साहिब ही ऐसा ज्ञान का प्रकाश करने वाला धार्मिक ग्रंथ है जिसके द्वारा ज्ञान रूपी प्रकाश सारी मन की शंकाओं को दूर करके मनुष्य को सही राह दिखायेगा। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में धर्म-प्रचारकों, धर्म-सुधारकों की बाणी को इस रूप में पेश किया गया है जो कि असली जीवन का सार है, जैसे कि भक्त कबीर जी ने कहा है :

कबीर मुलां मुनारे किआ चढहि सांई न बहरा होइ ॥
जा कारनि तूं बांग देहि दिल ही भीतरि जोइ ॥
(पन्ना १३७४)

यदि मस्जिद अथवा किसी धर्म स्थान पर माइक लगाकर दिखाया जा रहा है कि खुदा को याद कर रहे हैं तो यह वास्तविक धर्म नहीं कहा जा सकता। भक्त कबीर जी का कहना है कि याद करो लेकिन मन से, न कि दिखावे के लिये। इसी तरह हिंदू भाइयों के लिये भक्त कबीर जी का प्रसिद्ध प्रचलित कथन है :

दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाये।
घर की चकिया कोऊ न पूजे, जा का पीसा खाये।

अर्थात् हम विशेष पत्थर रखकर पूजते हैं। घर की चकिया जो पत्थर की है आओ, उसे पूजें जिसमें गेहूं पीसकर उसके आटे की रोटी खाते हैं। वस्तुत: धर्म वह पथ है जिस पर अमल करके मनुष्य अच्छे और बुरे कर्म में फर्क समझ सके यानी सच्चाई की राह पर कायम रह कर अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सके। गुरु नानक साहिब का कथन है :

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ (पन्ना १)

अर्थात् उसका नाम सदा सत्य है, वह स्थिर है और एकरस है। वह काल से परे है, अजन्मा है, स्वयंभू है, महान है, दयालु है। हे मनुष्य! तू उसके नाम का जाप कर, यह सबसे अच्छा और निर्मल कर्म है। सिक्ख मत में निराकार उपासना को विशेष दर्जा दिया गया है, इसी लिये नाम जपने और कीर्तन करने को बड़ा उच्च स्थान प्रदान किया गया है।

गुर-शबद को श्री गुरु ग्रंथ साहिब के स्वरूप में मानव-जीवन को सफल करने का मूल-मंत्र बताते हुए फरमान है :

गुरबाणी गावह भाई ॥
ओह सफल सदा सुखदाई ॥ (पन्ना ६२८)

अर्थात् हे भाई! गुरबाणी को गाओ। इसका आनंद लेकर देखो, यह सदा सुखदायी है। बाणी की पालना करना प्रत्येक सिक्ख का धर्म है। यही उसकी भक्ति है।

***H.No. 57, Perianna Maistry Street, Periamet, Chennai-600003, Mob. : 94441-51109**

अच्छा व्यक्तित्व अच्छे समाज की नींव

*-बीबी जसप्रीत कौर जस्सी**

किसी विद्वान के कहा है--"अपने विचारों पर पैनी नजर रखिये क्योंकि वे कुछ ही दिनों में शब्द बनकर मुखर होने लगेंगे। अपने शब्दों पर और भी तीखी नजर रखिये क्योंकि वे धीरे-धीरे कर्म बनकर प्रकट होने वाले हैं। अपने कर्मों पर परीक्षण करते रहिये क्योंकि वे अब, नहीं तो फिर, आदत बनकर रहेंगे। अपनी आदतों को भुलावे में मत डालिये क्योंकि वे चरित्र बने बिना नहीं रह सकतीं। अपने चरित्र पर दृष्टि रखें क्योंकि वही आपके भविष्य का जन्मदाता है।"

किसी ने सही कथन किया है कि "तुम जो सोचते हो वही तुम्हारा चरित्र है। व्यक्ति विशेष को जानना हो तो उसके चरित्र को जानना पर्याप्त है। चरित्र केवल कर्म से ही सम्बंधित नहीं होता अपितु इसका सीधा सम्बंध हमारी सोच से होता है।"

निराकार प्रभु भी इंसान की सोच पर ही निर्णय लेता है यानि Man reacts on action, but God reacts on intention. आदमी निर्णय लेता है कर्म के आधार पर परंतु ईश्वर के निर्णय सोच पर आधारित होते हैं। आज आवश्यकता है कि ऐसी सोच विकसित हो जो स्वस्थ परिवार, स्वस्थ समाज, स्वस्थ राष्ट्र एवं सम्पूर्ण मानव जाति के लिये हितकर हो।

प्रत्येक कार्य पहले कल्पना के रूप में उदित होता है, फिर विचार का रूप लेता है, तब कर्म बनता है। अपना सुधार संसार की सबसे बड़ी सेवा है। सभी लोगों द्वारा अपने-अपने घरों का कचरा साफ कर देने से पूरा नगर साफ हो जाता है। इसी तरह अपने-अपने दिमाग का कचरा बाहर फेंक देने से शरीर व देश दोनों स्वस्थ हो जायेंगे। इंसान को अपना व्यक्तित्व फूलों और चंदन के समान सुवासित बनाना चाहिये। किसी कवि ने खूब कहा है--"इतने ऊंचे उठो जितना उठा गगन है।"

*मकान नं. ११, सेक्टर १-ए, गुरू ज्ञान विहार, डुगरी, लुधियाना (पंजाब)

ब्रहम गिआनी सरब का धनी (पृष्ठ १०५ का शेष)

आत्मा रूपी पुष्प को भवसागर के जल तथा माया के कीचड़ से निर्लिप्त रखता है।

आत्मा रूपी पुष्प को भव-मल से बचाना ही कर्मबंध निषेध का मार्ग प्रशस्त करता है। ब्रह्मज्ञान आत्मा के साथ-साथ चेतन तत्व को भी जगाकर रखता है। आत्मा, क्योंकि दिव्य-तत्व है, इसलिए ब्रह्मज्ञानी अपने सांसारिक कर्मो के निष्पादन में भी मन-बुद्धि से मार्गदर्शन प्राप्त न करके, अपने भीतर के चेतन तत्व से, अपने विवेक से मार्गदर्शन प्राप्त करता है। आत्मा, क्योंकि सर्वथा निर्लिप्त है, इसलिए वह व्यक्ति की दिव्यता को जगाने तथा उसे स्थिर करने का कार्य करती है। ब्रह्मज्ञान से रिक्त व्यक्ति या अपने मन की सुनता है या मस्तिष्क की, लेकिन ब्रह्मज्ञान से पूरित व्यक्ति इन दोनों की अवहेलना करता है, क्योंकि ये दोनों भौतिक शरीर के अंग हैं, जिनको भौतिक शरीर के साथ ही भस्मीभूत होना है। आत्मा और चेतना चिरंतन तत्व हैं, अनश्वर हैं, इसलिए ब्रह्मवेत्ता केवल और केवल अंतर आत्मा से जो परमात्मा का ही अंश है मार्ग-दर्शन प्राप्त करता है।

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-४०

अभिमानी से अध्यात्म ज्ञानी बनने वाले कवि कांशी राम

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

कवि कांशी राम बनारस के रहने वाले थे। ये सक्सेना, कायस्थ थे और इनका जन्म सन् १६५८ ई में हुआ। ये पहले कुछ समय तक औरंगजेब के सूबेदार नियामत खां के पास रहे। जब दशमेश पिता ने अनंदपुर साहिब में साहित्य की ज्योति प्रज्वजिल की तो पंडित शिव दास ने कवि कांशी राम को अनंदपुर साहिब आने का न्योता दिया।

कवि कांशी राम थोड़े अभिमानी थे। जब अनंदपुर साहिब आये तो सोचने लगे कि यदि गुरु शक्तिशाली होंगे तो रुकूंगा वरना लौट जाऊंगा।

कवि कांशी राम दरबार में पहुंचे तो दशमेश पिता ने त्रिभंगी छंद में रचा अपना काव्य सुनाया। गुरु जी की ओजस्वी कविता को सुनकर कवि कांशी राम नत्मस्तक हो गया और गुरु साहिब से प्रार्थना की कि उसे दरबार में स्थान देकर कृतकृत्य करें। इस प्रकार कवि कांशी राम भी दशमेश पिता के दरबारी कवियों में शामिल हो गया।

कवि कांशी राम ने अनंदपुर साहिब में रहते हुए सन् १६९० ई. में 'पांडव गीता' की रचना की। 'पांडव गीता' की कथा कवि ने महाभारत के 'शांति पर्व' से ली है। इसमें नारद और भीष्म पितामह का संवाद है। कवि ने इस रचना को पंजाबी में लिखा और काव्य-रूप के तौर पर 'वार' का प्रयोग किया।

नमो करीं गुर सकल नूं, नित अंतर धिआईं।
गुर गोबिंद की दया से, कछू इहै बनाई।

'पांडव गीता' के अतिरिक्त कवि की दो और रचनायें प्राप्त होती हैं--'कनक मंजरी' और 'परशुराम संवाद'। 'कनक मंजरी' में किसी रतनपुर के धनधीर शाह की पत्नी की कथा है और 'परशुराम संवाद' में धनुर्भंग होने के बाद वाला राम-परशुराम संवाद प्रस्तुत किया गया है।

उपर्युक्त रचनाओं से सिद्ध होता है कि कवि कांशी राम उच्च कोटि के विद्वान तो थे ही साथ में श्रेष्ठ कवि भी थे। अपनी रचनाओं में उन्होंने सुंदर काव्य-उत्कर्ष की प्रस्तुति की है:

टूटि टाट गौंसा गए, फूट फाट मूठ गई,
जेवरन राखयो जोर जानत जगत है।
सूरज जरायो बारि बोर कै सिरायो महां,
मेघन संतायो सीत तां मैं कहां सत है। . . .
कांशी राम राम सों परसुराम ऐसे कहयो,
तोर कै धनुख ऐसो ऐस बलकत है।

दशमेश पिता के दरबार में रहकर अभिमानी कांशी राम पर भी अंततः अध्यात्म का रंग चढ़ गया:

गनिका भउजल तरी हरी, जिन रिदे समारिओ।
काम क्रोध अरु लोभ मोहु, अहंकार निवारिओ।
सच्चे सों करि प्रीति सच, सचे सों राते।
हरि हरि सिमरन बिनां रिदे, कुछु अउर न जाते।

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ०९४१७२-७६२७१*

'अनुवाद तथा व्याख्या-विधि' विषय पर सेमीनार

चंडीगढ़ : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा चंडीगढ़ के कलगीधर निवास में स्थापित सिक्ख स्रोत ऐतिहासिक ग्रंथ संपादना प्रोजेक्ट द्वारा रिसर्च स्कालरों को दिशा-निर्देश तथा सिखलाई देने हेतु शुरू की गई लेक्चर शृंखला के अंतर्गत अप्रैल माह का सेमीनार ११ अप्रैल को करवाया गया। लेक्चर का मुख्य विषय था 'अनुवाद तथा व्याख्या-विधि: समस्याएं एवं समाधान'। समारोह के दौरान श्रोताओं का स्वागत करते हुए प्रोजेक्ट निर्देशक डॉ. किरपाल सिंघ इतिहासकार ने कहा कि अनुवादक दोनों भाषाओं में निपुण होना चाहिए। मुख्य वक्ता डॉ. कुलदीप सिंघ (धीर) ने कहा कि अनुवादकर्ता को व्याख्यान, इतिहास तथा अनुवाद की महत्ता के बारे में सुचेत होना चाहिए। उन्होंने कहा कि अनुवाद करते समय अनुवादकर्ता को एतराजयोग्य पाठ को बाहर निकालने की बजाय अंतिका (परिशिष्ट) में दे देना चाहिए। प्रो. कुलवंत सिंघ ने समारोह की अध्यक्षता करते हुए कहा कि अनुवाद प्रसार का माध्यम है और ज्ञान तथा विचारों का आदान-प्रदान है।

जत्थेदार गुरचरन सिंघ टौहड़ा इंस्टीट्यूट, बहादरगढ़ (पटियाला) की डायरेक्टर डॉ. राजिंदरजीत कौर ने मुख्य मेहमान के रूप में शमूलियत की। उन्होंने कहा कि 'सिक्ख' सीखते रहने का नाम है। शिक्षार्थी बने रहना ही महान धर्म है। सिक्ख एजूकेशन सोसायटी के अध्यक्ष स. गुरदेव सिंघ ने समारोह के दौरान बोलते हुए गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी, श्री अमृतसर में केंद्र सरकार द्वारा बनाए "श्री गुरु ग्रंथ साहिब अध्ययन केंद्र" की बनावट पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला। सेमीनार के दौरान मंच संचालन स. चमकौर सिंघ रिसर्च स्कालर ने बाखूबी निभाया। सेमीनार में गुरमति ज्ञान और गुरमति प्रकाश पत्रिकाओं के संपादक सिमरजीत सिंघ, सहायक संपादक ज्ञानी सुरिंदर सिंघ निमाणा, स. सुखमिंदर सिंघ गज्जणवाला, स. सुखचैन सिंघ आदि उपस्थित थे। समारोह के आखिर में बीबी बलजीत कौर रिसर्च स्कालर ने उपस्थित विद्वानों तथा श्रोतागण का धन्यवाद किया।

अकाल पुरख की फौज द्वारा दसतार मार्च आयोजित किया गया

श्री अमृतसर : सिक्ख संस्था अकाल पुरख की फौज द्वारा 'दसतार दिवस' के अवसर पर स्थानीय हाल गेट से श्री अकाल तख्त साहिब तक एक विशाल दसतार मार्च सजाया गया जिसमें केसरी दसतारें सजाए तथा हाथों में केसरी निशान साहिब थामे बड़ी संख्या में सिक्ख नौजवान तथा महिलाएं शामिल हुईं।

दसतार मार्च में विश्व को दसतार के प्रति जागृत करने तथा सिक्खों के दसतार के प्रति प्यार को प्रकट करने के लिए तख्तियों पर लिखे नारे भी प्रदर्शित किए गए। इस अवसर पर अकाल पुरख की फौज के डायरेक्टर तथा शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के सदस्य स. जसविंदर सिंघ एडवोकेट ने कहा कि विश्व में सिक्खों के स्वरूप को सही रूप में पेश करने के लिए १३ अप्रैल का दिन 'सिक्ख दसतार दिवस' के रूप में मनाया जाता है। स. जसविंदर सिंघ एडवोकेट के अलावा इस मार्च में स. रजिंदर सिंघ महिता, कार्यकारी सदस्य शि: गु: प्र: कमेटी, स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा, उप सचिव शिरोमणि गु: प्र:

कमेटी, प्रिं. हरदेव सिंघ, स. कुलजीत सिंघ 'सिंघ ब्रादर्स' आदि के अलावा शहर की कई प्रमुख हस्तियां उपस्थित थीं।

सैनेटर के सारे उच्चाधिकारी पगड़ी बांधकर सैनेट पहुंचे

कैलीफोर्निया : कैलीफोर्निया के इतिहास में यह पहली बार हुआ है कि सिक्खों के साथ सद्भावना दिखाने के लिए गोरे विधायक सैनेट में पगड़ी बांधकर आए और ऐलक गरौव में गत माह दो सिक्खों को गोलियां मार देने की घटना के विरुद्ध सख्त रोष व्यक्त किया। पगड़ी बांधकर आए गोरे विधायकों ने सिक्खों के साथ सद्भावना का विलक्षय प्रकटावा किया। सैनेट प्रेजीडेंट प्रोटैम मि. डैरल स्टेनबर्ग सैकरामेंट क्षेत्र के बहुत-से सिक्खों के साथ मिलकर कैलीफोर्निया सैनेट में पहुंचे। उन्होंने कहा कि चार मार्च की घटना की रौशनी में सिक्खों के साथ एकजुटता तथा एकता के प्रकटावे के लिए यह शोक व्यक्त किया गया है। इस गोलीकांड में ६५ वर्षीय स. सुरिंदर सिंघ मारा गया जबकि ७८ वर्षीय स. गुरमेज सिंघ (अटवाल) गंभीर रूप से जख्मी हुआ था। मि. डैरेल स्टेनबर्ग ने कहा कि किसी भी सिक्ख को पगड़ी बांधने पर कोई डर नहीं होना चाहिए तथा किसी भी सिक्ख को शांतमयी ढंग से अपने धर्म का प्रकटावा करने में भी कोई डर नहीं होना चाहिए। सैकरामेंट से डैमोक्रेट मि. स्टेनबर्ग नीली दसतार सजाकर आए थे। सैनेटर कोरेनप्राईस, मि. डी. लास एंजल्स ने भी पगड़ी बांधी हुई थी तथा डेमोक्रेटिक सैनेटर मि. ईलेन अलकुऐसंट तथा मि. ऐलन कोरबेट ने सिर पर पटका बांधा हुआ था। सेन डग ला मालफा मि. आर. रिचवेल ने अपने साथियों को बुलावा दिया कि हमले के शिकार लोगों की मदद की जाए। उन्होंने कहा कि उनके जिले में रहता सिक्ख भाईचारा बहुत ही दयालु तथा खुलदिले स्वभाव का है। गुरुद्वारा वैस्ट सेकरामेंट की समूह प्रबंधकीय कमेटी इस कार्य के लिए बधाई की हकदार है। (अजीत (पंजाबी), १५-०४-११)

धर्म प्रचार कमेटी की ओर से
कैंसर पीड़ितों के लिए फंड स्थापित- जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : धर्म प्रचार कमेटी (शि: गु: प्र: कमेटी), श्री अमृतसर ने कैंसर जैसी भयानक बीमारी से पीड़ितों की सहायता के लिए 'कैंसर फंड' स्थापित किये जाने का निर्णय किया है और इस कार्य हेतु शिरोमणि कमेटी की ओर से ११ लाख का योगदान डाला जाएगा। इन विचारों का प्रकटावा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने अपनी अध्यक्षता तले धर्म प्रचार कमेटी की एकत्रता के उपरांत पत्रकारों के साथ बातचीत करते हुए किया।

इस महान कार्य के लिए देश-विदेशों की संगत को योगदान डालने के लिए अपील करते हुए उन्होंने बताया कि शीघ्र ही इस फंड के लिए बैंक में खाता खोलकर खाता संख्या की संगत को जानकारी दी जाएगी। उन्होंने शिरोमणि कमेटी तथा इसके संबंधित अदारों/संस्थानों के स्टाफ को भी क्षमतानुसार योगदान डालने के लिए कहा। इस अवसर पर धर्म प्रचार कमेटी के माननीय सदस्य महोदय तथा उच्चाधिकारी उपस्थित थे।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०५-२०११